ISKCON Revival Movement

अंतिम आदेश

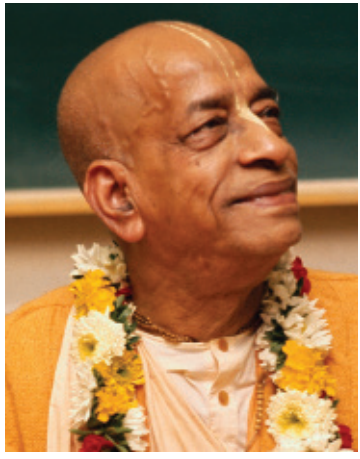

साबित करता है कि श्रील प्रभुपाद इस्कॉन में दीक्षा गुरू है।

लेखक

कृष्णकांत

प्रस्तावना: डॉ किम नॉट
वरिष्ठ अध्यापिका, धार्मिक विधापीठ, लीड्स महाविधालय, इंग्लैण्ड

अक्टूबर 1996 में इस्कॉन जी.बी.सी. की एक नियुक्त समिति कि विनंती के कारण प्रस्तुत किया गया लेख।

अंतिम आदेश

इस्कॉन रिवाइवल मुवमेन्ट (आई.आर.एम.) द्वारा प्रकाशित

Page Size : 110mm x 175mm

ISBN : 81-283-0049-2

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करे:

Back to Prabhupada
PO Box 1056
Bushey
GREAT BRITAIN
WD23 3BR

लेखक कृष्णकांत को ईमेल करने के लिए:
irm@iskconirm.com
Web: www.iskconirm.com

© 1996 All rights reserved

कच्ची नकल	:	**1997**	**2000** नकल
कच्ची नकल	:	**1998**	**3000** नकल
प्रथम आवृत्ति	:	नवम्बर **2001**	**2000** नकल
दूसरी आवृत्ति	:	जुलाई **2002**	**3000** नकल
तीसरी आवृत्ति	:	सितंबर **2004**	**1000** नकल
चतुर्थ आवृत्ति	:	मार्च **2006**	**2000** नकल
पंचम आवृत्ति	:	सितंबर **2008**	**2000** नकल

समाविष्ट

डॉ किम नॉट द्वारा प्रस्तावना ---------- *v*

आमुख ---------- *vii*

भूमिका ---------- *xi*

प्रमाण ---------- **1**

अंतिम आदेश के स्वभाव और प्रसंग से संबंधित आपत्तियाँ ---------- **7**

'अपॉइंटमेंट टेप' (नियुक्ति का टेप) ---------- **32**

संबंधित आपत्तियाँ ---------- **42**

निष्कर्ष ---------- **80**

ऋत्विक क्या है? ---------- **82**

दीक्षा आकृति ---------- **84**

श्रील प्रभुपाद की शिक्षाओं में से कुछ अनुरूप अवतरण

- क्या गुरू को सशरीर उपस्थित होना अनिवार्य है? ---------- **86**
- आदेश का अनुसरण करो, शरीर का नही। ---------- **90**
- पुस्तकें ही पर्याप्त है। ---------- **93**
- श्रील प्रभुपाद हमारे शाश्वत गुरू है। ---------- **95**

परिशिष्ट

9 जुलाई **1977** का पत्र**:** "समस्त जी.बी.सी. एवं टेम्पल प्रेसिडेन्ट्स के लिए" ---------- **101**

10 जुलाई **1977** का पत्र**:** ---------- **103**

11 जुलाई **1977** का पत्र**:** ---------- **105**

21 जुलाई **1977** का पत्र**:** ---------- **107**

31 जुलाई **1977** का पत्र**:** ---------- **109**

श्रील प्रभुपाद की वसीयत (**4** जून **1977**) और कोडिसिल (**5** नवम्बर **1977**) -------- **113**

वार्तालाप ---------- **118**

तमाल कृष्ण द्वारा 'पिरामिड हाउस कन्फेशनस्'---------- **125**

कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के संस्थापक–आचार्य

अंतिम आदेश की प्रस्तावना

डॉ किम नॉट, वरिष्ठ अध्यापिका, धार्मिक विधापीठ, लीड्स महाविधालय, इंग्लैण्ड

हाल ही में लिखे गए 'इन्साइडर एण्ड आउटसाइडर परसेपशन्स ऑफ श्रील प्रभुपाद' लेख पर में सोच—विचार कर रही थी। इससे मुझे वर्तमान में चर्चित विषय 'गुरू—शिष्य परंपरा और इसमें श्रील प्रभुपाद के अंतर्धान होने के उपरान्त गुरूओं की भुमिका' पर विभिन्न भक्तों द्वारा प्रकट भिन्न—भिन्न दृष्टिकोणों को ठीक से समझनें और जानने में सहायता मिली। वैसे मैं इससे पहले घटित घटनाओं से परिचित थी जब अनेक गुरू अपने आध्यात्मिक स्तर से गिर कर पथभ्रष्ट हो गये थे। उस समय इन घटनाओं के कारण स्थिती संकटपूर्ण और चिन्ताजनक हो। इस घटना के बाद जो गुरू पथभ्रष्ट एवं पतित हो गए थे उनके शिष्यों, गुरू भाइयों एवं गुरू बहनों के जीवन में आतंक और शोक छा गया था। इसके उपरान्त **80** के अंत में गुरू सुधार हुए और कई अन्य व्यक्तियों की तरह मैंने भी यह आशा की के इन गुरू सुधारों के फलस्वरूप इस्कॉन के नेतृत्व और दीक्षा संबंधी समस्याओं का हल निकल जाएगा। लेकिन अब इस लेख के लिखने से पूर्व मैने इस विषय पर पुन:कई विवाद पढे, कुछ वर्तमान गुरू प्रणाली के समर्थन में और कुछ इसके विरोध में। मैंने गुरू और परंपरा के विषय में कई विद्वानों की टिप्पणियों का अध्ययन भी किया। यह काफी सजीव मामला था। हाल ही के 'जर्नल ऑफ वैष्णव स्टडीस' के पॉचवे प्रकाशन में गुरू परम्परा से संबंधित एक लेख में जेन ब्रजेजिनस्की ने इस विषय के कई पहलुओ की चर्चा की है। उन्होंने चर्चा करते हुए इस्कॉन के भविष्य के लिए योग्य एवं प्रतिभाशाली नेताओं की जरूरत पर बल दिया। वैसे उनका दृष्टिकोण कई दृष्टिकोणों में से एक है। फिर भी इससे हमें इस विषय की महत्त्वता और गंभीरता का अभ्यास होता है जिसके कारण इस्कॉन के अन्दर रहने वाले ही नही अपितु बाहर वाले भी इस विषय के बारे में सोचने को प्रेरित हो उठे है।

सन् **1996** के अंत में मुझे 'द फाइनल ऑर्डर' पढ़ने को कहा गया ताकी मै इस विषय के बारे मे अपने विचार प्रकट कर सकूँ और इस लेख में उठाये गये कई प्रश्नों के बारे में चर्चा कर सकूँ। इस लेख को पढने के बाद मेरे मन में कोई संदेह नही रहा कि यह विषय इस्कॉन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है और इस विषय पर कई भक्त बहुत गंभीरता से सोचते हैं। मुझे यह लगा कि इस लेख ने कई महत्वपूर्ण प्रश्न खडे कीए है। जैसे– आध्यात्मिक अधिकार एवं अधिपत्य और उसका प्रतिपादन कैसे हो? भगवान कृष्ण के प्रतिनिधी अथवा गुरू और शिष्य संबंध क्या है? हमारी भक्तियुत पूजा, सम्मान और सत्कार का पात्र कौन बने? एक बाहर का व्यक्ति होने के कारण मैं पूर्ण रूप से इस विषय को समझने मे और कोई निर्णय लेने में असमर्थ हूँ। (मै इस्कॉन मे चलित वर्तमान आचार्य प्रणाली के समर्थन एवं विरोध मे दिए गए प्रमाणो की तुलना करने मे भी असमर्थ हूँ।) अपनी असमर्थता के बावजूद मै इस बात की प्रशंसा करती हूँ कि इस लेख मे बहूत ही गंभीरतापूर्वक एवं प्रमाणिक रूप से यह स्थापित करने की चेष्टा की गयी है कि श्रील प्रभुपाद ने ऋत्विक प्रणाली को स्थापित किया था और यह ऋत्विक श्रील प्रभुपाद की ओर से दिक्षा प्रदान करे। मुझे यह उम्मीद है कि यह लेख अत्यधिक ध्यानपूर्वक पढा

जाएगा और बडे पैमाने पर इसकी चर्चा होगी। मै इस पर ध्यान देने की बात इसलिए नही कर रही हू क्योंकि मै इस लेख का समर्थन करती हू या विरोध; बल्कि इसलिए कि इस लेख मे उठाया गया विषय सभी स्तरों के लोगो का ध्यानकर्षण करता है। हर भक्त के लिए यह विषय बहुत महत्वपूर्ण है।

इसमे कोई शक नही कि मुझ जैसे बाहर के व्यक्ति के लिए इस तरह प्रस्तावना लिखकर अपने आप को आंतरिक मामलों मे सामिल करना बुद्धिमत्ता नही है फिर भी इस संस्था के प्रति मेरी आसक्ति और सभी भक्तो के प्रती मेरे हृदय मे रहने वाली शुभकामनाओं ने मुझे यह लिखने को प्रेरित किया है।

किम नॉट, फरवरी 1997

पंचम आवृत्ति का आमुख

1996 में छपा अंतिम आदेश लेख की प्रथम आवृति के बाद एक दशक से ज्यादा समय बीत गया। मूल रूप से मैंने अंतिम आदेश का विवरण "इस्कॉन में दीक्षारंभ विषय पे श्रील प्रभुपाद के आदेशो पर एक चर्चा लेख" ऐसे किया है। कोई भी व्यक्ति जो इस आंदोलन को जानता है वह इस बात का इनकार नहीं कर सकता कि यह लेख में अच्छी तरह "चर्चा" हुई है, और इस तरह यह लेख इस मुद्दे को प्रकाश में लाने के उसके उद्देश्य में सफल रहा है।

इस्कॉन के आगेवानो को अब विश्वास के साथ यह दावा करना मुश्केल होगा कि वे श्रील प्रभुपाद द्वारा स्व-हस्ताक्षरयुक्त यह कानूनी दस्तावेजों से वाकीफ नही है, जिसमें उन्होंने खुद स्थापित किये गए आध्यात्मिक आंदोलन में मुख्य दीक्षा गुरू के रूप में रहनें की अपनी इच्छा जटाई है। यह वे कानूनी दस्तावेज है जो अंतिम आदेश लेख का आधार है, और यह लेख का वितरण अब वैश्विक स्तर पे हो रहा है और वर्ड वाइड वेब पर भी उपलब्ध है। अंतिम आदेश लेख का अनुवाद अभी कई भाषाओ में बाकी है (सितम्बर **2008** तक, यह लेख फ्रेन्च, स्पेनीश, जर्मन, रशियन, चाईनीझ, हिन्दी, बंगाली, कन्नड, सीझेच, इटालियन, हन्गेरियन भाषाओ में उपलब्ध है, और दुसरी कई भाषाओ में अनुवाद हो रहा है।) इस्कॉन के आगेवानो ने हरएक इस्कॉन केन्द्र में यह लेख के वितरण पे सख्त प्रतिबंध लगा रखा है। यह कारणो कि वजह से, काफी हद तक विज्ञापन अहेवाल एवं विवाद होने पर भी, इस्कॉन से जुडे काफी साधारण जनसमूह को अभी भी यह लेख पढनें को नही मिला है। किन्तु इस्कॉन के कार्यकर्ता आगेवानो एवं गुरूओ के लिए आध्यात्मिक दीक्षारंभ विषयक यह श्रील प्रभुपाद का आदेश की अज्ञानता अब कोई बहाना नही है। अंतिम आदेश लेख की भूमिका में हमने कहा किः

"यह असम्भव है की कोई जानबूझकर संस्थापक-आचार्य के सीधे आदेश का उल्लंघन कर रहा हो या यह करने पर दूसरों को मजबूर कर रहा हो।"

अंतिम आदेश लेख के प्रती जी.बी.सी. के उदाउ जवाब, उलझन, हिंसक दबाव और साफ अप्रामाणिकता को ध्यान में रखतें हुए अब लगता है कि यह उपयुक्त वाक्य को शायद बदलना पडे।

अंतिम आदेश लेख को अपना आधार बनातें हुए अब "इस्कॉन रिवाइवल मुवमेन्ट (IRM)" नामक एक विश्वस्तरीय संगठन है जिनकी शरूआत अंतिम आदेश में दिये गये निष्कर्षो के प्रचार करने हेतु हुई है। ये संस्था के पास यही लेखक के द्वारा लिखे हुऐ **100** से ज्यादा लेखो वाली एक वेब साइट (www.iskconirm.com) है, और संस्था द्वारा "बेक टु प्रभुपाद" नामक रंगभरी एक त्रिमासिक सामायिक (मेगझीन) प्रकाशित होती है जिसका वितरण सारे विश्व में लाखो लोगो को निःशुल्क होता है। कई प्रकाशित लेखो एवं बी.बी.सी. कोलमो के साथ आई.आर.एम. की प्रवृत्तियों के विज्ञापन सारे विश्व में हुआ है। इन्टरनेशनल कल्टिक स्टडीस् ॲसोसियेशन, सेसनुर और अमेरिकन ॲकेडमी ऑफ रेलिजीयन जैसी बडी शैक्षणिक परिषदो में आई.आर.एम. ने वक्तृत्व प्रस्तुत किया है। इस के ईलावा, अंतिम आदेश लेख के लेखक का प्रकाशन कॉलंबिया युनिवर्सिटी प्रेस, फर्मा के.एल.एम., कन्टिनम्

इन्टरनेशनल पब्लिशिंग और फॅक्टस् ऑन फाईल जैसी कई ॲकेडमीक एवं शैक्षणिक प्रकाशक द्वारा हुआ है। ये माध्यम से विद्वान समाज द्वारा आई.आर.एम. को "इस्कॉन में सुधार का आदरणीय आवाज" से वृहद् आवकार्य मिला है। आई.आर.एम. कि शरूआत से ही विश्व भर में वढ़ती संख्या में इस्कॉन भक्तो एवं केन्द्रों ने अंतिम आदेश के निष्कर्षो का स्वीकार किया है।

इस्कॉन रिवाइवल मुवमेन्ट (आई.आर.एम.) से जुडे अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्नों:

1. आई.आर.एम. क्या है?

आई.आर.एम. इस्कॉन भक्तो का एक विश्वस्तरीय मंडल है जो इस्कॉन को इसके संस्थापक–आचार्य श्रील प्रभुपाद के निर्देशो के अनुरूप फिर चेतनवंत देखना चाहते है।

2. आई.आर.एम. के अस्तित्व का क्या कारण है?

14 नवम्बर 1977 में इस्कॉन के संस्थापक–आचार्य श्रील प्रभुपाद के शारीरिक प्रस्थान समय से इस्कॉन की आध्यात्मिक शुद्धता एवं जन–प्रतिष्ठा में भारी गिरावट हुई है। भक्तो का एक विश्वस्तरीय मंडल है जो इस्कॉन को इसके संस्थापक–आचार्य श्रील प्रभुपाद के निर्देशो के अनुरूप फिर चेतनवंत देखना चाहते है। विश्व को एक महान भेट के रूप में 1966 में श्रील प्रभुपाद ने इस्कॉन की स्थापना कि, और जव वह चले गये उस समय इस्कॉन एक फेलता हुआ गतिशील वल था, मानवता के लिए प्रकाश देनें वाला एक दीप था। दुर्भाग्यवश आज इस्कॉन बिखर रहा है, और इस तथ्य का स्वीकार मई 2000 में उस समय के जी.वी.सी. अध्यक्ष रवीन्द्र–स्वरूप दास के एक निवेदन पत्र में किया गया:

> **"इसलिए प्रश्न है: तो फिर हमे क्या करना चाहिए? हमे अपनी बिखरती हुई एवं ध्रुवीकृत होती संस्था के साथ कैसे व्यवहार करना चाहिए?"**

इस अधोगति का कारण है श्रील प्रभुपाद द्वारा दी गई सूचनायें एवं मानकों में हुए विभिन्न विचलन, जिनमें मुख्य है उनको इस्कॉन के मुख्य दीक्षा गुरू पद से हटाया गया। इस्कॉन के लिए एकमात्र सत्ता एवं दीक्षा गुरू के रूप में उनकी भूमिका से लेके श्रील प्रभुपाद द्वारा दी गई सभी सूचनायें तथा मानकों को फिर से लागू करके इस्कॉन रिवाइवल मुवमेन्ट इस्कॉन को फिर से उसकी भूतपूर्व प्रतिष्ठा, शुद्धता और आध्यात्मिक पवित्रता में स्थापित करना चाहता है। आई.आर.एम. का स्थान "अंतिम आदेश" और "नो चेन्ज इन इस्कॉन पेराडिम" जैसे लेख में दिया गया है। ये दोनों लेख हमारी वेवसाईट: www.iskconirm.com पर उपलब्ध है।

3. क्या आई.आर.एम. इस्कॉन से अलग है?

यह एक आंदोलन के भीतर आंदोलन है। ये इस्कॉन को सुधार ने एवं फिर से चेतनवंत करने की इच्छा रखने वाले इस्कॉन सदस्यों से वना हुआ है।

4. क्या आई.आर.एम. का लक्ष्य एक नया आंदोलन शरू करना है?

नही। आई.आर.एम. का लक्ष्य मूल इस्कॉन को पुन:स्थापित करना है, जो श्रील प्रभुपाद हमे सोंप गये

थे। ऐसा होनें पर आई.आर.एम. को वरखास्त कर दिया जाएगा।

5. श्रील प्रभुपाद को इस्कॉन के मुख्य दीक्षा गुरू के रूप में पुन:स्थापित करने से क्या फर्क पड़ेगा?

प्रथम, आध्यात्मिक जीवन का मुख्य सिद्धांत है कि हम गुरू के आदेशो का पालन कर के ही आगे बढ़ सकते है। यदी गुरू दूध मांगे और हम उनको पानी दे तो वह कैसे प्रसन्न होंगे? और अगर गुरू प्रसन्न नही है तो हम भगवान श्री कृष्ण के सन्मुख कैसे जा पाएगें?

करीब तीन दशकों से इस्कॉन श्रील प्रभुपाद के आदेशो के अनुसार कार्यरत नही है। जब से श्रील प्रभुपाद हमें शारीरिक रूप से छोड़ कर चले गए, तब से हमने उनको उनकी ऋत्विक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा कीसी भी व्यक्ति का दीक्षारंभ करने नही दिया है। संस्था में दीक्षारंभ चलाने के लिए उन्होंने अधिकृत कि हुए यह एकमात्र दीक्षारंभ प्रणाली है। यदी इस्कॉन के सदस्यों उनके आदेशो का पालन करना फिर से शरू करे, तब सहज रूप से वे भगवान श्री कृष्ण को प्रसन्न कर सकते है, और सभी आध्यात्मिक सफलताए सहज रूप से प्राप्त होगी। और, सबका श्रील प्रभुपाद के शिष्यों के रूप में सीधा-समान संबंध होने पर विभागीकरण की संभावना रहती नही है। करीब तीस साल में पहली बार ऐसा होगा कि सबका एक ही लक्ष्य हो- श्रील प्रभुपाद और श्री कृष्ण की सेवा एवं गुणगान- और सब संयुक्त भाव सें कार्यरत रहेंगे। कई इस्कॉन "गुरू" सकल पापयुक्त प्रवृत्तियों का भोग बने है, और जब वे संस्था छोड़कर चले जाते है वे अक्सर अपने साथ करोडॉ डॉलर और उनके शिष्यों को भी ले जाते है। श्रद्धा, संपत्ति एवं व्यक्तियों का ये निरंतर नुकसान बंध हो जाएगा क्योंकि श्रद्धा केवल श्रील प्रभुपाद में स्थित होगी, दोषपात्र व्यक्तियों में नही। दक्षिणा के रूप में मीले पैसे जो अभी करीब **80** गुरूओं के जेब में जा रहा है वह पैसे मंदिरो को स्वस्थ एवं मजबूत बनाने में जाएगा।

6. आई.आर.एम. को ऐसा क्यों लगता है कि उनका स्थान सच्चा है और जी.बी.सी. का गलत?

आई.आर.एम. को उनका स्थान सच्चा लगता है क्योंकि ये स्थान सारी संस्था को दिए गयें हस्ताक्षरयुक्त कानूनी दस्तावेजों पे आधारित है। वहीं दूसरी ओर जी.बी.सी. ने संपूर्ण विरोधाभासी हो ऐसा कम से कम तीन सत्ताकीय स्थान लेख प्रस्तुत किया है (जिसमें एक भी कानूनी दस्तावेज पे आधारित नही है।) और इस तरह जी.बी.सी. के पास तकनीकी रूप से कोई स्थान लेख नही है, सच्चे स्थान कि बात तो दूर रही। हमें बता देना चाहिए कि जी.बी.सी. के ये लेख एक दूसरे से विरोधाभासी होने के पश्चात स्व-विरोधाभासी भी है। जैसे कि, हम एक साधारण प्रश्न पूछे कि कब श्रील प्रभुपाद ने इस्कॉन में अपना दीक्षा गुरू स्थान छोड़ने कि अधिकृति दी?, तो हमे निम्नलिखित तीन सत्ताकीय जी.बी.सी. लेखो में निम्नलिखित उत्तर मिलते है:

अ) ऑन माई ऑर्डर अन्डरस्टुड (जी.बी.सी. 1995): श्रील प्रभुपाद ने भक्तों को जीस समय उनके प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने का आदेश दिया उसी समय उन्होंने गुरूओ का आदेश भी दीया था। और यह **7** जुलाई **1977** के रोज हुआ था। (पृष्ठ **28**, गुरूस एण्ड इनिशिएशन इन इस्कॉन, जी.बी.सी. **1995**)

ब) डिसाइपल ऑफ माई डिसाइपल (एच.एच. उमा स्वामी, 1997): 28 मई **1977** के दिन ग्यारह

दीक्षा गुरू नियुक्त हो गए थे, क्योंकि "ऋत्विक" का अर्थ होता है "ऑफिशिएटिंग आचार्य" अर्थात "दीक्षा गुरू"।

क) प्रभुपादस् ऑर्डर (बद्रीनारायण दास, 1998): 9 जुलाई 1977 के दिन ग्यारह लोग गुरू कि तरह पूर्ण रूप से कार्यरत थे, किन्तु वे श्रील प्रभुपाद की मोझूदगी में केवल शिष्टाचार का पालन कर रहे थे।

उपयुक्त हम देखते है कि श्रील प्रभुपाद ने अपना दीक्षा गुरू स्थान बदलने के लिए कब मंजूरी दी इसके प्रत्युतर में जी.वी.सी. ने तीन अलग-अलग तारीखें बताई। **अ)** बगीचे में हुए वार्तालाप के संदभ में है, **ब)** श्रील प्रभुपाद और उनके कुछ वरिष्ठ शिष्यों के बीच हुई मुलाकात के संदभ में है, जबकि **क)** दीक्षा विषयक स्व-हस्ताक्षरयुक्त निर्देशिका के संदभ में है जिससे यह पुस्तक का नाम-शीर्षक दीया गया। इस तरह प्रत्येक जी.वी.सी. स्थान लेख में कुछ अलग ही बात कही गई है। ईस मुद्दे को ओर भी बदतर बनाने के लिए:

फरवरी 2004 में मायापुर की उनकी वार्षिक बैठक में जी.बी.सी. ने आधिकारिक तौर पर "ऑन माई ऑर्डर अन्डरस्टुड" लेख वापस ले लिया, और निजी रूप से स्वीकार किया कि यह लेख "झूठ" सें भरा हुआ था एवं बिलकुल अप्रामाणिक था। यह वही लेख है जिनको ललकार ने के लिए अंतिम आदेश लेख रचा गया। (कृपया भूमिका देखिए, पृष्ठ *xi*) । यह लेख इतनी शर्मनाक रूप से वापस ले लिया है यह तथ्य आई.आर.एम. के स्थान को अधिक मजबूत बनाता है।

उत्तराधिकारी दीक्षा गुरू बनने के लिए कब अधिकार दीया गया इस विषय पर जी.वी.सी. काफी स्पष्ट रूप से उलझन में है। आई.आर.एम. की दलील है कि यह अनिवार्य है क्योंकि श्रील प्रभुपादने कभी भी प्रतिस्थापित दीक्षा गुरू बनाए ही नही थे। उन्होंने सिर्फ ऋत्विको की रचना कि थी, और यह वही ऋत्विक प्रणाली है जिनको रद् करने का कोई आदेश के बिना चालु रखते हुए चले गये। इस के आधार पर हम दलील करते है कि जी.वी.सी. को पहले एक स्थान तय करना होगा, उसके बाद ही हम उसकी प्रमाणता आंकने मे सक्षम होंगे।

दुखकी बात तो यह है कि आज दिन तक जिसने भी जी.वी.सी. के विरोधाभाषी प्रमाणो कि गंध के प्रति संदेह किया उसे संस्थामें से बेरहमी से निकाल दिया गया।

कृष्णकांत
सितंबर **2008**

हमारा सामायिक नि:शुल्क प्राप्त करने के लिए एवं आई.आर.एम. के विषय में अधिक जानकारी के लिए या अंतिम आदेश में दि गई माहिती के बारे में आपको प्रश्न है तो कृपया लेखक को ईमेल करे: irm@iskconirm.com या हमारी वेबसाईट की मुलकात ले: www.iskconirm.com.

भूमिका

यह दस्तावेज श्रील प्रभुपाद के उन निर्देशों को प्रस्तुत करने का नम्र प्रयास है जो उन्होंने 'गवर्निंग बॉडी कमीशन' (जी.बी.सी.) को अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ में दीक्षा प्रणाली जारी रखने के लिये छोडे थे। वैसे हम यहाँ ऐसे कई दस्तावेजों एवं लेखों को देखेंगे जो वरिष्ठ इस्कॉन भक्तों ने उपर्युक्त विषय पर लिखे हैं, परन्तु मुख्यत: हम जी.बी.सी. द्वारा प्रकाशित अधिकारिक दीक्षा पुस्तक 'गुरूस एंड इनिशिएशन इन इस्कॉन' (इस्कॉन में गुरू एवं दीक्षा)' जिसे आगे से हम जी.आई.आई. कहेंगे, और 'ऑन माय ऑर्डर अन्डर्स्टुड' लेख जो इस्कॉन कानुन सेक्शन **1.1** में निर्दिष्ट है, को सदंर्भ में लेंगे:

"जी.बी.सी. 'ऑन माय ऑर्डर अन्डर्स्टुड' लेख को अपनी पूरी मान्यता देकर उसे स्वीकार करती है। यह लेख गुरू परंपरा को जारी रखने के लिए श्रील प्रभुपाद की इच्छाओं को लेकर जी.बी.सी. के इस विषय में अंतिम सिद्धांत को स्थापित करता है। इस अंतिम सिद्धांत को इस्कॉन के कानून के रूप में पारित किया जाता है।" (जी.आई.आई., पृष्ठ **1**)

जी.आई.आई. में जी.बी.सी. का उद्देश गुरू, शिष्य एवं गुरू तत्व से संबंधित इस्कॉन के कानूनों को स्पष्ट करना एवं सदर्भ में लाना है जिससे इस विषय पर अंतिम सिद्धांत स्थापित हो सके। हम प्रार्थना करते हैं कि यह लेख भी इसी तथ्य के अनुरूप है।

पूर्ण स्पष्टता एवं आध्यात्मिक प्रमाणिकता के लिय हम जी.आई.आई. की एक – दो खामियों को परिप्रेक्ष्य में लाना चाहेंगे, जिनको यहाँ संबोधित नहीं किया गया था। वैसे कुछ विवादित विषयों के प्रत्युत्तर एवं हल प्रारंभ में आघात या घबराहट पैदा कर सकते हैं, फिर भी हमें पुर्णरूपेण विश्वास है कि इन खामियों को इसी वक्त सुधारने से भविष्य में कम लोग भ्रमित एवं पथभ्रष्ट होंगे। पूर्व में भी इस्कॉन की गुरू प्रणाली निरीक्षण में आई है और कई बदलाव भी आये – कुछ चिन्ह निकाले गये, रीतियाँ कम हुई, विचारधाराएँ बदली गयी – सब बिना ज्यादा लम्बी उथल–पुथल से।

इसमें कोई संशय नहीं कि इस्कॉन इस धरती पर सबसे महत्वपूर्ण संस्था है। इसलिये हमें विशिष्ट सावधानी बरतनी होगी कि हम इस्कॉन के प्रबंधन एवं आध्यात्म संबंधी संस्थापक–आचार्य द्वारा प्रतिपादित सारे प्रावधानों से लेश मात्र भी अलग न हों। वे तो सिर्फ यह चाहते थे कि बडी सावधानी और परिश्रम से उनके द्वारा बनायी गई संस्था का इसी प्रकार और विस्तार किया जाता रहे। यह श्रील प्रभुपाद शताब्दी वर्ष है (**1996**)। इससे अच्छा और कौनसा समय हो सकता है जब हम श्रील प्रभुपाद के आंदोलन को चलाने के अपने प्रयासों का बारीकी से निरीक्षण करें?

यह हमारा प्रबल मत है कि इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के अंतिम हस्ताक्षरयुक्त आदेश के अनुसार बदला जाये। यह आदेश दीक्षा संबंधित अंतिम आदेश था जो **9** जुलाई **1977** को जारी किया गया था (कृपया परिशिष्ट देखिए, पृष्ठ **101**)। प्राय: कुछ लोग हमसे प्रश्न करते है कि हम इसी पत्र पर इतना बल क्यों देते है? उत्तर मे हम जी.बी.सी. द्वारा प्रकाशित जी.आई.आई.

पुस्तिका से ही दुहराएँगे:

"तक—वितर्क में, बाद में कहे गए वाक्यों पहले से अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाते है।"
(जी.आई.आई., पृष्ठ **25**)

9 जुलाई का पत्र संपूर्ण संस्था को संबोधित था। इस्कॉन में दीक्षा प्रणाली का यह इस तरह का अंतिम आदेश है अत: इसकी अपनी एक अलग ही श्रेणी है। यहाँ हम प्रदर्शित करेंगे कि इस पत्र को इस्कॉन में पुर्ण रूप से मानने और लागू करने से श्रील प्रभूपाद के बाकी उपदेशों का उल्लंघन नही होता।

न तो षड्यंत्र की अफवाहों से हमारा कुछ सरोकार है और न ही कुछ बचारे भक्तों की आध्यात्मिक मुश्किलों को उछालने की इच्छा। जो हो गया सो गया। वैसे हम पुरानी गलतियों से सीख सकते है, परन्तु हम भविष्य में प्रेम, सौहार्द और क्षमा के वातावरण की अपेक्षा करते है अत: हम पुरानी बदनामियों और गलतियों को उछालना नही चाहते। जहाँ तक मेरा का मत है, इस्कॉन के ज्यादातर भक्त श्रील प्रभूपाद को संतुष्ट करने के लिय प्रयत्नशील है। इसलिए यह असंभव है की कोई जानबुझकर संस्थापक–आचार्य के सीधे आदेश का उल्लंघन कर रहा हो या यह करने पर दूसरों को मजबूर कर रहा हो। फिर भी, किसी प्रकार से, पिछले **19** वर्षों मे प्रबंधन एवं प्रचलन मे कुछ गलतियाँ इस्कॉन संघ मे आवृष्ट हो गयी है। इन गलतियों को दिखलाते हुए हम प्रार्थना करते है कि श्री कृष्ण एवं श्रील प्रभुपाद की सेवाभक्ति करने मे श्रध्दालुओं की अनावश्यक बाधाएँ दूर हो सके।

इस पुस्तिका में हम स्वयं श्रील प्रभुपाद द्वारा प्रकाशित हस्ताक्षरयुक्त दस्तावेज एवं वार्तालाप की प्रतिलिपियों को प्रमाण की तरह प्रस्तृत करेंगे– प्रमाण जो स्वयं जी.बी.सी. भी प्रमाणिक मानते है। फिर हम इन प्रमाणों को विषय एवं संदर्भ मे रखकर यह देखेंगे कि उन्हे अक्षरश: लेना चाहिए या ऐसे दूसरे आदेश भी है जो इन आदेशों के मतलब को बदल देते है या उनके पालन मे किसी तरह का संशोधन करते है। हम उन संबंधित प्रश्नो की चर्चा पूरी करेंगें जो की इन प्रमाणों पर उठाये जाते हैं। हम **9** जुलाई के पत्र को अक्षरश: लागू करने पर की गई आपत्तियों का भी प्रत्यूत्तर देंगे। अंत में हम यह भी देखेंगे कि 'ऑफिशिएटिंग आचार्य सिस्टम' (अधिकारित्वक आचार्य प्रणाली), जो **9** जुलाई के पत्र में बताई गई है, को किस तरह न्यूनतम अशांति से लागू किया जा सकता है।

हम अपने सारे तर्क पूर्ण रूप से श्रील प्रभुपाद के आदेशों और उपदेशों पर आधारित करेंगे जो उन्होंने अपनी पुस्तको, पत्रचार, प्रवचन एवं वार्तालाप में दिये थे। हम अनन्य वैष्णव वृन्द से आशिर्वाद चाहते है कि हम किसी को भी न तो अपराध पहुँचाएँ और न ही कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के मिशन को किसी प्रकार की क्षति।

प्रमाण

श्रील प्रभुपाद का यह स्वभाव चिर-परिचित था कि वे हर काम बडी सावधानी और पटुता से करते थे। उनकी एक विशेषता थी कि वे अपनी भक्तियुत सेवा के हर पहलू या अंग पर बडा ध्यान देते थे और कभी किसी प्रकार की लापरवाही नहीं करते थे। जिन लोगों ने उनकी अत्यधिक निकट से सेवा की थी उन्होंने प्रभुपाद जी का भगवान श्री कृष्ण के प्रति असीम प्रेम और भक्ति को प्रमाणित किया था। उनका संपूर्ण जीवन उनके गुरू श्रील भक्ति सिद्धांत सरस्वती ठाकुर के आदेश का पालन करने के लिए न्यौछावर था। उन्होंने अपने गुरू के आदेश को अपना कर्तव्य समझा और इस कर्तव्य का पालन करने में वे हमेशा अद्भुत रूप से सर्तक एवं सजग रहे। इस्कॉन को स्थापित करने के कार्य में उन्होंने किसी भी प्रकार की कमहीनता एवं लापरवाही की संभावना नहीं छोडी। इस कार्य के लिए वे हमेशा अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते और गलतियों को सुधारते रहते थे। उनका यह आंदोलन ही उनका जीवन था।

श्रील प्रभुपाद के व्यक्तित्व के इस पहलू को समझने से यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रील प्रभुपाद इस्कॉन में भविष्य की दीक्षा प्रणाली जैसे अत्यधिक महत्वपूर्ण विषय को संदिग्ध, अस्पष्ट एवं अनिश्चित अवस्था में नही छोड सकते थे। वे इस विषय को किसी के वाद-विवाद या किसी के मन की कल्पना पर नही छोड सकते थे। ऐसा करना उनके स्वभाव के बिल्कुल विरूद्ध था। इसके अतिरिक्त हम यदि इतिहास मे देखें कि श्रील प्रभुपाद के अपने ही गुरू श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद के मठ को क्या हुआ? श्रील प्रभुपाद बार-बार इसकी और इशारा करते और बतलते थे कि इनके गुरू महाराज के मठ का नाश एक अवैध और अप्रमाणिक गुरू प्रणाली को स्थापित करने के कारण हुआ। इन सब बातों को ध्यान मे रखकर अब हम शुरूआत में ऐसे तथ्यों को देखेंगे जो सर्वसम्मत हैं:

9 जुलाई **1977** को अपना शरीर छोडने से पूर्व श्रील प्रभुपाद ने एक दीक्षा प्रणाली की रचना की, जिसमे उन्होंने 'आचार्य के प्रतिनिधियों' का प्रयोग किया था। उन्होंने आदेश दिया था कि इस 'ऑफिशिएटिंग आचार्य (आचार्य के प्रतिनिधि) प्रणाली को तुरन्त स्थापित किया जाये और 'हेन्सफॉवर्ड' शब्द का प्रयोग करते हुए उन्होंने कहा कि यह प्रणाली इस समय से कार्यान्वित होगी। (कृपया परिशिष्ट देखिए, पृष्ठ **101**) इस प्रबन्ध संबंधित निर्देशिका (**9** जुलाई पत्र) को इस्कॉन के सारे जी.बी.सी. और टेम्पल प्रेसिडेंट्स को भेजा गया था। इस पत्र मे यह आदेश था कि अब से नए शिष्यों को नामकरण, जपमाला और गायत्री मन्त्र आदि इन ग्यारह प्रतिनिधियों द्वारा दिए जाएँगे। ये ग्यारह प्रतिनिधि श्रील प्रभुपाद के प्रतिनिधि के रूप में उनकी ओर से कार्य करेंगे और जो नए शिष्य बनेंगें या दीक्षा लेगे वे श्रील प्रभुपाद के शिष्य होंगे। इस तरह श्रील प्रभुपाद ने उनकी ओर से दीक्षा ग्रहण करने का पूर्ण अधिकार इन ग्यारह व्यक्तियों को दिया था। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया था कि अब से इस मामले में उनसे कोई सम्मति न ली जाए। (इस प्रतिनिधियों के कर्तव्यों की ज्यादा जानकारी के लिए पढें शीर्षक 'ऋत्विक क्या है?' पृष्ठ **82**)

श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने के तुरन्त बाद ही जी.बी.सी. ने इस प्रणाली को स्थगित कर दिया। सन

1978 के गौर पूर्णिमा तक इन ग्यारह प्रतिनिधियों ने 'जोनल आचार्य दीक्षा गुरू' की पदवी धारण कर ली और वे स्वतंत्र होकर अपनी ओर से दीक्षा देने लगे। इसे उन्होंने श्रील प्रभुपाद का तथाकथित आदेश बताते हुए कहा कि केवल वे ग्यारह लोग ही श्रील प्रभुपाद के बाद दीक्षा देने का एकाधिकार रखते थे। कुछ सालों बाद इस 'जोनल आचार्य' प्रणाली को कई चुनौतियों का सामना करना पडा, जिसके कारण उसे बदलना पड़ा। 'जोनल आचार्य' प्रणाली को बदलकर श्रील प्रभुपाद की मूल प्रणाली की पुन:स्थापना करने के बजाय उन्होंने दर्जनों नए गुरूओं को शामिल कर लिया। इसके साथ ही उ न्होनें एक ऐसी विस्तृत व्यवस्था की रचना की जिसमे पथभ्रष्ट और पतित गुरूओं से जूझने के लिए अनेक प्रकार के नियमों और कानूनों का उल्लेख था। अपनी इस नई व्यवस्था का समर्थन करने के लिए अब उन्होंने कहा कि श्रील प्रभुपाद द्वारा गुरू बनने के लिए दिया गया तथाकथित आदेश केवल ग्यारह व्यक्तियों के लिए ही नही था अपितु हर भक्त के लिए था जो भी दृढता से नियमों का पालन कर रहा हो और जिसे जी.बी.सी. से दो—तिहाइ (2/3) मत प्राप्त हो।

उपर्युक्त वर्णन कोई राजनीतिक मत नही है, बल्कि एक ऐतिहासिक तथ्य है जो जी.बी.सी. सहित सर्वसम्मत है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है 9 जुलाई 1977 का पत्र सारे जी.बी.सी. और टेम्पल प्रेसिडेंटस को भेजा गया था। आज तक यह आदेश इस्कॉन में दीक्षा के संबधित एकमात्र हस्तारक्षरयुक्त आदेश है। 9 जुलाई के आदेश पर टिप्पणी करते हुए हाल ही मे जयअद्वैत स्वामी ने कहा:

"इस पत्र की प्रामाणिकता पर किसी प्रकार का प्रश्नचिन्ह नही लगाया जा सकता,... यह पत्र बहुत ही स्पष्ट रूप से ऋत्विक गुरू प्रणाली को स्थापित करता है।" (जयअद्वैत स्वामी 'व्हेअर द ऋत्विक पीपल आर रोंग', 1996)

यह एक बहुत ही स्पष्ट आदेश है लेकिन इसको समझने में असमंजस्य का कारण है दो अवैध संशोधन जो बाद मे इस आदेश पर थोपे गये:

संशोधन (अ) : श्रील प्रभुपाद द्वारा इन प्रतिनिधियों या ऋत्विक की नियुक्ति केवल तत्कालीन थी और श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने पर इसका अंत होना था।

संशोधन (ब) : अपने प्रतिनिधित्व या ऋत्विक का दायित्व त्याग कर ये ऋत्विक अपने आप दीक्षा गुरू बन जाएँगे। दीक्षा देकर वे लोगों को अपना शिष्य बनाएँगे, श्रील प्रभुपाद का नही।

1987 में क्षेत्रिय आचार्य प्रणाली में जब संशोधन हुए, तब इन दों संशोधनों को बरकरार रखा गया। महत्व की बात तो यह है कि ये दोनों संशोधन ही पुरानी प्रणाली का आधार थे। हम उपर्युक्त (अ) एंव (ब) को अवैध संशोधन कहते है क्योंकि ये दोनों कथन न तो 9 जुलाई के पत्र में या इसके उ परान्त श्रील प्रभुपाद द्वारा जारी अन्य किसी दस्तावेज मे पाये जाते है।

जी.बी.सी. का लेख जी.आई.आई. पूर्ण रूप से इन अवैध संशोधनों का समर्थन करता है:

"जब श्रील प्रभुपाद से पूछा गया कि आपके तिरोभाव उपरान्त दीक्षा कौन देगा, तो उन्होंने संकेत

किया कि वे अपने कुछ शिष्यों को 'इंगित करेंगे' और उन्हें 'आदेश' देंगे। यह शिष्य श्रील प्रभुपाद के जीवनकाल में श्रील प्रभुपाद की ओर से एवं उसके उपरान्त एक 'सामान्य गुरू' की तरह अपनी ओर से दीक्षा देंगे। तब उनके शिष्य श्रील प्रभुपाद के परम शिष्य कहलाएँगे।" (जी.आई.आई., पृष्ठ 14)

बीते कुछ बरसों में ऐसे भक्तों की संख्या बढने लगी जो इन उपर्युक्त मूल संशोधनों पर प्रश्न उठाने लगे हैं। ज्यादातर भक्तों के लिए यह हमेशा संदेहास्पद ही रहे हैं। अत: इस्कॉन के भीतर और बाहर एक किस्म का संशय एवं संदेह फैल गया है। आजकल कई पुस्तकें, लेख, ई–मेल एवं इंटरनेट वैब साइट इस्कॉन और उसके तथाकथित पथभ्रष्ट गुरू प्रणाली पर रोजमरा की जानकारी उपलब्ध कराते हैं। जो भी व्यक्ति श्रील प्रभुपाद के आंदोलन को हृदय से चाहता है वो ऐसे किसी भी लेख को, जो इस समस्या का समाधान लाने में सहायता करता है, उसे हकारात्मक ही मानेगा।

श्रील प्रभुपाद ही इस्कॉन के समस्त सदस्यों के परम अधिपति हैं। वस्तुत: हरएक व्यक्ति इस बात का समर्थन करता है। इस विषय पर दिये गये उनके हर आदेश का हमें पालन करना ही होगा। यह हम सबका कर्तव्य है। 9 जुलाई का आदेश ही केवल एक ऐसा लिखित अधिकारिक कथन है जो कि संस्था के संपूर्ण वरिष्ठ भक्तों को भविष्य की दीक्षा प्रणाली के विषय पर भेजा गया था। इस बात का भी समस्त सदस्य समर्थन करते हैं।

जी.आई.आई. में 9 जुलाई के पत्र के अस्तित्व को दर्शाया ही नहीं गया है। यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है, क्योंकि यह पत्र ही एकमात्र स्थान है जहाँ प्रथम ग्यारह 'आचार्यों' का नाम पाया जाता है। यह भूल आश्चर्यजनक है, विशेषत: जब जी.आई.आई. संपूर्ण गुरू प्रणाली विषय पर 'अंतिम सिद्धांत' देने का दावा करती है।

अब हम जरा गौर से 9 जुलाई के आदेश को देखेंगे कि क्या उसमें उपर्युक्त अवैधिक संशोधनों (अ) एवं (ब) का समर्थन मिलता है:

आदेश:

जैसा पहले बतलाया गया, 9 जुलाई के पत्र अनुसार ऋत्विक प्रणाली 'हेन्सफॉर्वर्ड' लागू की जानी चाहिये थी। श्रील प्रभुपाद के द्वारा पूर्व प्रचलन में एवं अंग्रेजी भाषानुसार इस विशिष्ट शब्द 'हेन्सफॉवर्ड' का एक ही अभिप्राय है – 'इस समय से'। शब्दकोश में हर शब्द के कई मतलब हो सकते हैं, परन्तु इस शब्द का एक ही मतलब है। इसलिये अस्पष्टता का कारण ही नहीं बनता। फोलियो के अनुसार बाकी 86 बार जहाँ श्रील प्रभुपाद ने 'हेन्सफॉवर्ड' शब्द का प्रयोग किया है, किसी ने भी आपत्ति नही उठायी कि इस शब्द का 'इस समय से' के अलावा कोई और भी अभिप्राय हो सकता है। 'इस समय से' का मतलब यह नही लगा सकते कि 'इस समय से जब तक मै चला न जाऊँ'। इसका सीधा मतलब होता है इस पत्र में एक बार भी निर्दिष्ट नही है कि यह प्रणाली श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त रूक जानी चाहिये। और न ही यह प्रणाली श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में ही लागू होगी। प्राय: एक तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि समस्त ऋत्विक प्रणाली केवल एक शब्द 'हेन्सफॉवर्ड' पर ही निर्भर

है। यह अप्रमाणिक तर्क है क्योंकी अगर हम इस शब्द को पत्र में से निकाल भी दें, तो भी कुछ बदला नही। श्रील प्रभुपाद ने एक प्रणाली अपने तिरोभाव से 4 माह पूर्व स्थापित की थी। इसके उपरान्त उन्होंने इस प्रणाली को रोकने संबंधी कोई निर्देश नही दिया। ऐसे किसी विपरीत आदेश के अभाव में इस पत्र को ही श्रील प्रभुपाद का दीक्षा प्रणाली विषय पर अंतिम आदेश मानना होगा और इसलिए इसको वर्तमान में भी पालन करना होगा।

अन्य अनुकूल कथन:

9 जुलाई पत्र के कुछ ही दिनों में श्रील प्रभुपाद एंव उनके सचिव के कई ऐसे कथन थे जो कि यह स्पष्ट दर्शाते है कि ऋत्विक प्रणाली बिना अवरोध के जारी रहनी थी।

"भविष्य में लागू होने वाली दीक्षा प्रणाली" (11 जुलाई 1977)

"ऋत्विक बनते रहो एंव मेरे आदेश पर कार्य करो।" (19 जुलाई 1977)

"ऋत्विक बनते रहो एंव मेरी ओर से कार्य करो।" (31 जुलाई 1977)

इन दस्तावेजों में 'हेन्सफॉवर्ड' शब्द के साथ 'भविष्य में', 'बनते रहो' जैसे शब्दों का प्रयोग यह दर्शता है कि ऋत्विक प्रणाली स्थायी रहनी थी। श्रील प्रभुपाद द्वारा ऐसा कोई कथन नही है जो बात का अभास भी करता हो कि यह ऋत्विक प्रणाली उनके देह त्यागने के बाद रोक दी जानी चाहिए थी।

तदनंतर दिए गए आदेश:

ऋत्विक प्रणाली के स्थापित होने और उसके कार्यान्वित होने के बाद श्रील प्रभुपाद ने कभी भी इस प्रणाली को बंद करने का आदेश नही दिया था। उन्होंने यह भी नही कहा कि मेरे देह त्यागने के पश्चात् इस प्रणाली को बंद कर दिया जाए। इसके विपरीत शायद श्रील प्रभुपाद को उस बात का आभास था कि ऐसा कुछ हो सकता है इसलिए उन्होंने अपनी अंतिम वसीयत की शुरूआत में लिखा था कि इस्कॉन की वर्तमान प्रवन्धन प्रणाली (मैनेजमेंट सिस्टम) को इसी तरह जारी रखा जाए और इसमे कोई बदलाव ना हो। अपनी भौतिक देह को त्यागने के सिर्फ 9 दिन पूर्व श्रील प्रभुपाद ने अपने कोडिसिल (वसीहत में संशोधन) में भी इस तथ्य को बदला नहीं। यदि श्रील प्रभुपाद के मन में यह विचार था कि ऋत्विक प्रणाली को बंद कर दिया जाए तो उनके लिए यह सही अवसर था। प्रतिनिधियों (ऋत्विक) का उपयोग कर दीक्षितों को नाम इत्यादि देना यह किस प्रकार प्रवन्धन प्रणाली (मैंनेजमेट सिस्टम) ही है इसको हम निम्नलिखित वर्णन से समझ सकते है।

सन 1975 में जी.बी.सी. ने एक प्रस्ताव पारित किया था: 'प्रबंधन संबंधी सारे मामले में केवल जी. बी.सी. ही उत्तरदायी होगी।' निम्नलिखित उस वर्ष के प्रवंधन संबंधित कुछ विषय हैं जिनको जी.बी. सी. ने अपने हाथ में लिया था –

"यदि किसी को हरीनाम दीक्षा लेनी है तो उसे कम से कम 6 माह तक पूर्णकालिक सदस्य होना चाहिए।

ब्राह्मण दीक्षा लेने के लिए हरिनाम दीक्षा के बाद कम से कम एक साल का समय होना चाहिए।" (जी.बी.सी. नियम नं. 9, मार्च 1975)

"संन्यास दीक्षा की विधि।" (जी.बी.सी. नियम नं. 2, मार्च 1975)

यह प्रस्ताव स्वयं श्रील प्रभुपाद द्वारा अनुमोदित किया गया था। यह हमें बदलाता है कि दीक्षा की विधि भी प्रबंधन प्रणाली का ही एक अंग है। यदि संपूर्ण दीक्षा विधि को श्रील प्रभुपाद द्वारा प्रबंधन प्रणाली का ही एक अंग माना जाता है तब दीक्षा विधि के एक अंग 'आध्यात्मिक नामकरण प्रतिनिधियों (ऋत्विक) द्वारा करवाना' यह भी प्रबंधन प्रणाली के अंतर्गत ही आता है। इसे भी एक प्रबंधन प्रणाली कहकर संबोधित किया जाना चाहिए।

फलस्वरूप ऋत्विक द्वारा दीक्षा देने की प्रणाली को बदलना श्रील प्रभुपाद की अंतिम वसीयत का उल्लंघन है।

एक और आदेश जो ऋत्विक प्रणाली को जारी रखने का सूचक है जो श्रील प्रभुपाद ने अपनी वसीयत में लिखा था। इस आदेश के अनुसार भारत की स्थायी जायदाद (प्रोपर्टी) के शासकीय अध्यक्ष (एक जीक्यूटिव डाइरेक्टर) केवल उनके दीक्षित शिष्यों में से ही चुने जा सकते है।

> **"यदि उत्तराधिकारी अध्यक्ष (सक्सेसर डाइरेक्टर) या अध्यक्षों को नियुक्त करना हो तो उसे अन्य अध्यक्षगण मिलकर नियुक्त कर सकते हैं लेकिन जो नया अध्यक्ष होगा वह मेरा दीक्षित शिष्य होना चाहिए।"** (श्रील प्रभुपाद की वसीयत, 4 जून, 1977)

यह तब ही हो सकता है जब श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव के बाद ऋत्विक प्रणाली को बनाये रखा जाए। यदि ऐसा न हुआ तो अध्यक्ष बनने लायक लोग खत्म हो जाएँगे।

इसके अतिरिक्त 9 जुलाई के बाद जब भी श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा की बात की तो उन्होंने ऋत्विक गुरू प्रणाली के अनुरूप ही की। उन्होंने कभी ऐसा संकेत नहीं दिया कि ऋत्विक गुरू प्रणाली को उनके देह त्यागने के बाद बंद कर दिया जाए या कुछ भक्त दीक्षा गुरू का उत्तरदायित्व लेने के लिए तैयार हो जाएँ। जहाँ तक सीधे प्रमाणों का सवाल है वे जी.बी.सी. के उपरोक्त संशोधनों (अ)और (ब) का बिल्कुल समर्थन नही करते।किन्तु यही संशोधन आज इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली का आधार है। यदी इन संशोधनों को गलत सिद्ध किया जाए तो जी.बी.सी. को इस विषय पर गंभीरता से पुनर्विचार करना पड़ेगा।

उपर्युक्त वर्णन इस विषय को पूर्णरूपेण स्पष्ट करता ही। पहले श्रील प्रभुपाद का आदेश फिर इसके अनुरूप एवं अनुकूल आदेश और तदनंतर दिए गए आदेश ये सभी केवल ऋत्विक प्रणाली को जारी रखने का समर्थन करते है। यह सर्वसम्मत है कि श्री प्रभुपाद ने अपने देह त्यागने के पश्चात ऋत्विक प्रणाली को बंद करने के लिए किसी प्रकार का आदेश नही दिया था।यह भी सर्वसम्मत है की श्रील प्रभुपाद ने ऋत्विक प्रणाली को 9 जुलाई के बाद से कार्यान्वित होने के लिए स्थापित किया था। अत: यह ऐसी स्थिति है जब आचार्य ने —

(1) ऋत्विक प्रणाली को लागू करने का स्पष्ट आदेश दिया है।

(2) देह त्यागने पर ऋत्विक प्रणाली को वंद करने का आदेश नही दिया।

परिणामस्वरूप यदि कोई इस आदेश का पालन करना वंद करता है तो उसके इस कार्य का आधार पूछा जा सकता है। यदि श्रील प्रभुपाद ने इस विषय में कोई आदेश दिया था तो वह था ऋत्विक प्रणाली का पालन करन के लिए। उन्होंने इस प्रणाली को स्थगित करने के लिए कभी नही कहा। न ही उन्होंने कभी कहा कि इसका पालन केवल उनकी सशरीर उपस्थिति में ही हो। प्रमाण दिखलाने का भार अपने आप ही ऊन लोगों पर पड़ता है जो अपने आचार्य द्वारा स्थापित इस प्रणाली को स्थगित करना चाहते हो। कोई भी मनमाने ढंग से गुरू के आदेश का उल्लंघन नही कर सकता:

> **"विधी यह है कि तुम गुरू के आदेश को बदल नही सकते।"** (श्रील प्रभुपाद चैतन्य चरितामृत प्रवचन, **2/2/1967**, सेन फ्रांसिस्को)

एक शिष्य को अपने गुरू के सिधे आदेश का पालन करते रहने के लिए गवाही नही देनी पड़ती। यही शिष्य होने का अर्थ है।

> **"जब कोई शिष्य बनता है तो वह अपने गुरू के आदेश का उल्लंघन नही कर सकता।"** (श्रील प्रभुपाद भगवद्-गीता प्रवचन, **11/2/1975**, मेक्सिको)

चूँकि श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने पर ऋत्विक प्रणाली को वंद करने के संबंध मे कोई सीधा या स्पष्ट प्रमाण नही है इसलिए उपर्युक्त संशोधनों को सिद्ध करने के लिए अप्रत्यक्ष प्रमाण ही देने पड़ेंगे। अप्रत्यक्ष प्रमाणों का प्रश्न तव उठता है जव किसी आदेश को अक्षरश: लेना विशेष परिस्थितियों में ठीक नही वैठता। तव ऐसी परिस्थितियों को अधार बनाकर आदेश के अक्षरश: अर्थ को वदला जा सकता है। आइए अव हम **9** जुलाई के आदेश के प्रसंग और उससे घिरी परिस्थितियों का अध्ययन करे और देखे कि क्या उस समय ऐसी परिस्थितियाँ थी? यह भी देखेंगे कि क्या जी.वी.सी. के संशोधनों (अ) एंव (व) को सिद्ध करने के प्रमाण मिलते है।

अंतिम आदेश के स्वभाव और प्रसंग से संबंधित आपत्तियाँ

1. "यह पत्र स्पष्ट दर्शाता है कि ऋत्विक प्रणाली सिर्फ श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में ही लागू होनी थी।"

पत्र में ऐसा कोई भी कथन नहीं है जो यह दर्शाता हो की यह आदेश श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में ही लागू होना था। वस्तुत: जो जानकारी यहाँ दी गई है वह तो श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव के बाद ऋत्विक दीक्षा प्रणाली को बरकरार रखने का समर्थन करती है। **9 जुलाई के पत्र में यह 3 बार कहा गया है कि दीक्षा लेने वाले श्रील प्रभुपाद के शिष्य होंगे।** वर्तमान गुरू प्रणाली को प्रमाणिक सिद्ध करने के लिये जी.बी.सी. बारंबार यह तर्क देती है कि श्रील प्रभुपाद के अनुसार यह एक अभेद्य कानून है कि गुरू की उपस्थिति में दूसरा कोई दीक्षा नहीं दे सकता। **अत: इस बात पर जोर देने की भविष्य के सारे दीक्षित शिष्य श्रील प्रभुपाद के ही शिष्य होंगे, दर्शाता है कि यह आदेश तभी लागू होना था जब इन शिष्यों के प्रभुत्व पर सवाल उठ सकता था– यानी कि श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव पर।**

अंतिम कुछ वर्षो में श्रील प्रभुपाद अपने कुछ प्रतिनिधियों से मालाओं पर जाप, अग्नि होम, गायत्री मंत्र आदि करवा रहे थे। किसी ने भी उन शिष्यों के प्रभुत्व पर उँगली नहीं उठायी थी। 9 जुलाई के पत्र की शुरूआत में यह बहुत ही जोर देकर कहा गया है कि श्रील प्रभुपाद द्वारा यहाँ नियुक्त भक्त उनके 'प्रतिनिधि' होंगे। इस पत्र से सिर्फ एक ही नवीन पद्धति उभर कर आयी – इन प्रतिनिधियों की औपचारिक रूप से नियुक्ति। इससे क्या यह संशय हो सकता है कि यह उनके पूर्ण दीक्षा गुरू बनने का स्पष्ट आदेश था? जब तक श्रील प्रभुपाद सशरीर उपस्थित थे तब तक तो वह खुद यह देख सकते थे कि कोई और उनके शिष्यों पर प्रभुत्व न जमाए। अत: श्रील प्रभुपाद जब इस पत्र में शिष्यों के अपने प्रभुत्व पर जोर दे रहे हैं तो यह स्वत: ही दर्शाता है की यह प्रणाली उनके पदार्पण के उपरान्त के लिए भी थी। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह दृष्टि स्थिति इस पत्र में 3 बार ठोक–ठोक कर कही है, यह एक स्वंय छोटा और संक्षिप्त पत्र था।

"एक चीज पर जब तीन बार जोर दिया जाये, समझ लो की वही अंतिम है।"
(श्रील प्रभुपाद भगवद्–गीता प्रवचन, **27/11/1968**, लॉस एंजिल्स)

9 जुलाई के पत्र में एक कथन है कि नये दीक्षित शिष्यों का नाम 'श्रील प्रभुपाद को' भेजना होगा। क्या इसका यह मतलब है कि यह प्रणाली श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में लागू होनी थी? कुछ भक्तों ने तर्क दिया है कि क्योंकि अब हम श्रील प्रभुपाद को यह नाम भेजने में असमर्थ हैं, अत: ऋत्विक प्रणाली अवैधानिक है।

उत्तर में, श्रील प्रभुपाद को नाम भेजने का कारण था कि वे नाम उनकी 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य) किताब में संकिलित हो जाएँ। 7 जुलाई के वार्तालाप (कृपया परिशिष्ट देखिए, पृष्ठ **120**) से हमें यह जानकारी मिलती है। श्रील प्रभुपाद के सचिव इस पुस्तक में नाम लिख रहे थे, खुद श्रील प्रभुपाद नही। इसका एक प्रमाण हमे एक अन्य पत्र से उजागर होता है। इसमे तमाल कृष्ण

गोस्वामी हंसदूता को उनके ऋत्विक कर्तव्य बता रहे है।

"तुम्हें उनके नाम श्रील प्रभुपाद की 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य) पुस्तिका में सम्मिलित करने के लिए भेजने होंगे।"

(तमाल कृष्ण गोस्वामी द्वारा हंसदूता को पत्र, 10/7/1977)

यहाँ स्वयं श्रील प्रभुपाद को नाम भेजने का नही कहा गया है। यह प्रणाली श्रील प्रभुपाद के सशरीर पदार्पण के उपरान्त भी सरलता से चल सकती है। अंतिम आदेश में कही भी ऐसा कथन नही आता कि 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य) किताब के श्रील प्रभुपाद से अलग होने पर दीक्षा देना ही रोक देना होगा।

दुसरा उत्तर यह है कि दीक्षित शिष्यों का नाम श्रील प्रभुपाद को भेजने का कार्य दीक्षा के बाद का कार्य है। शिष्य का नाम दीक्षा उपरान्त ही भेजा जा सकता है। दीक्षा उपरान्त प्रणाली के औपचारिकतावश, दीक्षा पूर्व प्रणाली या स्वयं दीक्षा प्रणाली में न तो परिवर्तन किया जा सकता है और न ही रोका सकता है। (क्योंकि दीक्षा विधी पूर्ण होने के पूर्व ही ऋत्विक का कार्य समाप्त हो चुका होता है।) जब तक श्रील प्रभुपाद को दीक्षा उपरान्त नाम भेजने का प्रश्न उठेगा, तब तक दीक्षा विधि पूर्ण हो चुकी होती है। अत: नाम भेजने या न भेजने से दीक्षा प्रणाली पर कोई फर्क नही पड़ता।

श्रील प्रभुपाद को नाम भेजना, अगर दीक्षा प्रणाली का महत्त्वपूर्ण हिस्सा होता तो श्रील प्रभुपाद के पदार्पण के पूर्व ही यह प्रणाली या तो बंद हो गई होती या फिर हर समय बंद होने का डर रहता। ज्यादातर भक्त जानते थे कि श्रील प्रभुपाद किसी भी वक्त अपना शरीर छोड़ने वाले है। अत: यह आदेश जारी होने के उपरान्त प्रथम दिन से ही यह डर रहता कि इन नामों को भेजने के लिये कोई नही रहेगा। दूसरे शब्दों में, उदाहरण के लिये एक शिष्य द्वारा इस प्रणाली से दीक्षा लेने के उपरान्त अगर एक दिन बाद ही श्रील प्रभुपाद इस धरती से चले जाते तो उपर्युक्त तर्क अनुसार यह शिष्य दीक्षित नही होता क्योंकि पोस्ट समय से नही पहुँच सकी। हमे श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में कही यह उपदेश नही मिलता कि जन्म-जन्मातर से मिल रही दिव्य दीक्षा, डाकघर की मर्जी अनुसार रूक सकती है। स्पष्ट तो यह है कि आज भी श्रील प्रभुपाद की 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' (दीक्षित शिष्य) किताब में नव दीक्षित शिष्यों के नाम सम्मिलित किए जा सकते है। फिर इस पुस्तिका को समयानुसार श्रील प्रभुपाद को अर्पित किया जा सकता है।

2. "यह पत्र निश्चित रूप से यह नही कहता कि 'यह प्रणाली पदार्पण के बाद जारी रहनी चाहिए'। अत: इस प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त बंद करना उचित था।"

कृपया निम्नलिखित तर्कों पर विचार करें-

1) 9 जुलाई का पत्र यह नहीं कहता कि 'ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त खत्म कर देना चाहिए'। इसके बावजूद प्रभुपाद के देह त्यागने के तुरन्त बाद इसको खत्म कर दिया गया।

2) पत्र यह भी नहीं कहता कि 'ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति के दौरान चलाया जाना चाहिए'। फिर भी इसे श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में चलाया गया।

3) पत्र यह भी नहीं कहता कि 'ऋत्विक प्रणाली को केवल श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने तक ही चलाना जाना चाहिए'। फिर भी इसे उनके देह त्यागने तक ही चलाया गया।

4) पत्र यह भी नहीं कहता कि 'ऋत्विक प्रणाली बंद होनी चाहिए'। फिर भी इसे बंद कर दिया गया।

सारांश में, जी.बी.सी. निम्नलिखित बातों पर अडे हुए हैं–

- ऋत्विक प्रणाली बंद होनी चाहिए।
- ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त बंद होना चाहिए।

इन दो बातों में कोई भी बात **9** जुलाई के पत्र में नहीं पाई जाती, न ही किसी अन्य हस्ताक्षरयुक्त आदेश में ये बातें पाई जाती हैं। इसके बावजूद ये दोनों संशोधन 'जोनल आचार्य' (क्षेत्रीय आचार्य) प्रणाली और वर्तमान में चलित 'मल्टिपल आचार्य सक्सेसर सिस्टम' (बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली) का आधार हैं। अब से हम 'मल्टिपल आचार्य सक्सेसर सिस्टम' को म.आ.स.सि. से संबोधित करेंगे। (यहाँ आचार्य शब्द का प्रयोग हम दीक्षा गुरू के समान करेंगे।)

यह अनुचित तर्क है कि क्योंकि पत्र में उसके चलने की अवधि का विशेष रूप से उल्लेख नहीं है अत: उचित होगा कि देह त्यागने के तुरन्त बाद ही उसे बंद कर देना चाहिए। इसी तर्क का प्रयोग कर यह भी कहा जा सकता है कि यह पत्र यह भी नहीं कहता कि इसका पालन **9** जुलाई के बाद किया जाए अत: इस पत्र का पालन कदाचित् नहीं होना चाहिए था। हम यह भी मान सकते हैं कि 'हेन्सफॉवर्ड' अर्थात् 'इस समय से' का तात्पर्य केवल उस दिन के अंत तक के लिए था क्योंकि पत्र यह भी नहीं कहता कि उसका पालन **10** जुलाई तक भी हो। अत: इसको उसी दिन के अंत में ही पालन करना बंद कर देना चाहिए था।

यह मांग की जाती है कि **9** जुलाई के पत्र को केवल पूर्वघोषित अवधि में ही चलाना जाना चाहिए। लेकिन असल में हुआ यह कि इस पत्र को **126** दिनो तक अर्थात् चार महिनों तक चलने दिया गया। इन **126** दिन या चार माह की अवधि का उल्लेख भी इस पत्र में नहीं है लेकिन सभी लोग इस पत्र के चार महीने तक ही चलने से संतुष्ट हैं। यह 'हेन्सफॉवर्ड' का अर्थ 'अब से अनिश्चित काल के लिए' ना लिया जाए तो ऋत्विक प्रणाली को **9** जुलाई के बाद किसी भी समय बंद किया जा सकता था। इसको बंद करने के लिए केवल श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने का दिन ही क्यों चुना गया?

श्रील प्रभुपाद ने **86** बार इस 'हेन्सफॉवर्ड' का प्रयोग किया। उनके इस शब्द के प्रयोग या अंग्रेजी के इतिहास में ऐसा उदाहरण नही मिलता जहाँ इस शब्द का निम्नलिखित मतलब हो:

"जिस व्यक्ति ने यह आदेश दिया है उसके जीवनकाल तक ही।"

फिर भी वर्तमान सोच के अनुसार **9** जुलाई के पत्र से इस शब्द का मतलब यही निकाला गया है।

जबकि पत्र केवल यही कहता है कि 'इस समय से इस प्रणाली को लागू किया जाए।' फिर इसको रोक क्यों दिया गया?

3. "कुछ आदेशों का पालन हम श्रील प्रभुपाद के पदार्पण के बाद नही कर सकते। अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि ऐसे आदेश केवल उनके जीवनकाल तक के लिए ही थे। उदाहरणार्थ किसी को नियुक्त कर उससे कहा जा सकता है कि 'इस समय से' (हेन्सफॉवर्ड) तुम श्रील प्रभुपाद को रोज मालिश दो। शायद हो सकता है ऋत्विक बनने का आदेश कुछ इसी तरह का हो?"

यदि किसी आदेश का पालन करना असंभव हो जाए तो उस आदेश को पालन करने का प्रश्न ही नही उठता। उदाहरणार्थ श्रील प्रभुपाद को उनके पदार्पण उपरान्त मालिश देने का प्रश्न ही नही उठता। एक शिष्य का यह कर्तव्य है कि वह तब तक किसी आदेश का पालन करता रहे जब तक उस आदेश का पालन असंभव ना हो जाए या फिर गुरू अपने आदेश को ही बदल न दे। अब प्रश्न यह उठता है कि ऋत्विक प्रणाली को उसके रचयिता श्रील प्रभुपाद की अनुपस्थिति में भी चलाया जा सकता है?

वास्तव में ऋत्विक प्रणाली को इस तरह बनाया गया था कि उसमें श्रील प्रभुपाद की किसी शारीरिक योगदान की जरूरत न थी। यदि ऋत्विक प्रणाली को श्रील प्रभुपाद के बाद भी चलने दिया जाता तो भी इस प्रणाली के कार्यक्रम मे कोई फर्क नही आता। 9 जुलाई के बाद ऋत्विक प्रणाली इस तरह चल रही थी मानो श्रील प्रभुपाद इस संसार से चले गए हों। परिणामस्वरूप हम यह नही कह सकते कि श्रील प्रभुपाद के पदार्पण के बाद ऋत्विक प्रणाली को कार्यान्वित नही किया जा सकता या ऋत्विक प्रणाली सफलता से कार्य नही कर सकती क्योंकि श्रील प्रभुपाद की शारीरिक अनुपस्थिति इस ऋत्विक प्रणाली के क्रियाशील रहने मे कोई बाधा नही डालती। **क्योंकि इस ऋत्विक प्रणाली को विशेष रूप से कार्यरत बनाया गया जैसे कि श्रील प्रभुपाद यह धरती पर नही है, यह धरती से उनके चले जाने से यह प्रणाली अपंग नही हो जाती।**

4. "यह आदेश केवल एक पत्र द्वारा जारी किया गया था, किताबों से नही। अतः हम इसका अप्रत्यक्ष अर्थ निकाल सकते है।"

यहाँ 'लैटर्स वर्सिस बुक्स' (पत्र बनाम पुस्तक) तर्क लागू नही होता क्योंकि यह एक साधारण पत्र नही है। सामान्यत: श्रील प्रभुपाद किसी शिष्य के विशेष प्रश्न के उत्तर में या किसी को विशेष मार्गदर्शन देने के लिए या सुधारने के लिए पत्र लिखते थे; क्योंकि ऐसे पत्र किसी एक भक्त के व्यक्तिगत प्रश्न, अवस्था या पथभ्रष्टता के कारणवश लिखे गये थे, अत: उनका भिन्न-भिन्न भावार्थ निकाला जा सकता है। श्रील प्रभुपाद के पत्रों में पाये गये समस्त उपदेशों को सर्वस्व लागू नहीं किया जा सकता। परन्तु, दीक्षा प्रणाली विषयक इस अंतिम आदेश का और कोई अर्थ नहीं लगाया जा सकता; क्योंकि यह पत्र किसी एक शिष्य के व्यक्तिगत प्रश्न, अवस्था या गलती सुधारने हेतु नहीं लिखा गया था। **9 जुलाई पत्र संपूर्ण संस्था की एक प्रबन्धन प्रणाली बनाता है जिसे आंदोलन के समस्त अतिवरिष्ठ**

भक्तों को लिखा गया था।

जब भी श्रील प्रभुपाद कोई महत्त्वपूर्ण आदेश जारी करते थे और चाहते थे कि कोई उसका गलत अर्थ न निकाले तब वे उसे लिखवाते, अनुमोदित करते एवं उसे समस्त अतिवरिष्ठ भक्तों को भेज देते थे। 9 जुलाई का पत्र भी इसी श्रेणी में आता है। उदाहरण के लिये, उन्होंने एक पत्र 22 अप्रैल 1972 को 'ऑल टेम्पल प्रेसिडेन्ट' (समस्त टेम्पल प्रेसिडेन्ट) को भेजा था:

> **"क्षेत्रीय सचिव का कार्य है अपने क्षेत्र के समस्त मंदिरों का निरीक्षण करना कि वहाँ समस्त आध्यात्मिक नियमों का पालन उचित ढंग से हो रहा है या नही। अन्यथा, हर एक मंदिर स्वतंत्र एवं स्वावलम्बी होगा।"**
>
> (श्रील प्रभुपाद का पत्र समस्त टेम्पल प्रेसिडेन्ट को, 22/4/1972)

जब भी श्रील प्रभुपाद ने कोई महत्त्वपूर्ण आदेश जारी किया, तो हर बार उन्होंने नई किताब जारी नही की। चाहे वह आदेश उनके शारीरिक प्रस्थान के बाद भी जारी रहना था। अत: इस आदेश को जिस रूप में जारी किया गया था, उससे न तो भिन्न भावार्थ निकल सकता है और न ही इसकी प्रामाणिकता घट जाती है।

5. "संभवत: इस आदेश को किसी विशेष अवस्था के कारण जारी किया गया था जो श्रील प्रभुपाद के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त लागू नही होती।"

अगर ऐसी अवस्था होती तो श्रील प्रभुपाद ने उस पत्र में या संलग्न किसी दस्तावेज में उसको प्रकट किया होता। श्रील प्रभुपाद अपने निर्देशों को उचित ढंग से लागू करवाने के लिये सदैव जरूरतानुसार जानकारी देते थे। निश्चित रूप से उनकी कार्यशैली इस पर निर्भर नही थी कि उनके टेम्पल प्रेसिडेन्ट यौगिक सिद्धि प्राप्त हो जो कि अधूरे एवं अपूर्ण आदेश जारी करने पर टेलीपैथी (मानसिक संक्रमण) द्वारा उन्हें समझ ले। उदाहरणतया, अगर श्रील प्रभुपाद चाहते कि ऋत्विक प्रणाली उनके शारीरिक प्रस्थान उपरान्त रूक जाये तो वह ये 10 शब्द 9 जुलाई के पत्र में अवश्य सम्मिलित करते 'यह प्रणाली मेरे शारीरिक प्रस्थान उपरान्त रोक दी जानी चाहिये।' बल्कि पत्र पर एक सरासरी निगाह डालने से ही हमे दिखता है कि वे चाहते थे कि यह प्रणाली हेन्सफॉवर्ड (इस समय से) चलती रहे। (कृपया परिशिष्ट देखिए, पृष्ठ 101)

कई बार यह तर्क भी दिया जाता है कि केवल श्रील प्रभुपाद की बीमारी के कारणवश यह ऋत्विक प्रणाली स्थापित की गयी थी।

भक्तगण श्रील प्रभुपाद की बीमारी की स्थिति से भिज्ञ या अभिज्ञ हो सकते थे, परन्तु वे एक पत्र को देखकर जिसमें उनकी बीमारी का जिर्क भी न था, कैसे ज्ञात कर सकते थे कि उनकी बीमारी ही इस पत्र को लिखने का एकमात्र कारण था? श्रील प्रभुपाद ने कब ऐसा कहा कि उनके हर आदेश को लागू करते वक्त उनकी वर्तमान 'मेडिकल रिपोर्ट' (स्वास्थ्य का विवरण) का निरीक्षण करके आदेश का

भावार्थ निकाला जाये? इस पत्र के प्रतिग्राहक यह भी सामान्यत: मान सकते थे कि यह दीक्षा प्रणाली पर एक स्पष्ट आदेश है जो अक्षरश: लागू किया जाना चाहिऐ।

श्रील प्रभुपाद ने पूर्व में ही घोषणा कर दी थी कि वे अपना शरीर छोड़ने हेतु वृन्दावन जा रहे हैं। त्रिकालज्ञा होने के नाते अत्यन्त संभवत: उन्हें मालूम ही होगा कि वे 4 माह में इस धरती से प्रस्थान करने वाले है। अपनी अनुपस्थिति में अपने आंदोलन को जारी रखने के लिये वे अंतिम आदेश दे चुके थे। अपनी अनुपस्थिति में मार्गदर्शन के लिये उन्होंने अपनी वसीयत और बी.बी.टी. (भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट) एवं जी.बी.सी. संबंधित दस्तावेज तैयार कर लिये थे। केवल एक विषय का निबटारा करना रह गया था- उनकी अनुपस्थिति में दीक्षा प्रणाली किस तरह चलेगी। तब तक अनिश्चिता थी कि आगे किस प्रकार कार्य चलेगा। 9 जुलाई के पत्र से सबको स्पष्ट कर दिया गया कि उनकी अनुपस्थिति में दीक्षा विधी किस तरह चलेगी।

सारांश में, कोई एक आदेश को कुछ ऐसे तथ्यों के कारणवश नही बदला जा सकता जो आदेश पाने वालो को ही प्राप्त न हो। क्यों **श्रील प्रभुपाद** ऐसा **आदेश जारी** करेंगे जब उन्हे मालूम था कि कोई इसका ठीक से पालन नहीं कर सकता; क्योंकि उस आदेश के साथ संबंधित तथ्य बताये ही नही गये थे। अगर ऋत्विक प्रणाली श्रील प्रभुपाद की बीमारी के कारणवश स्थापित की गयी थी तो यह तथ्य वे इस पत्र या संलग्न दस्तावेजों मे जरूर जाहिर करते। **श्रील प्रभुपाद का** ऐसा बिना सोचे-समझे किया हुआ व्यवहार पूर्व में हमे कही भी नही मिलता, बल्के जब वे पुरी संस्था को आदेश दे रहे हो। **श्रील प्रभुपाद ने कभीभी किसी दस्तावेज पर** बिना सोचे-समझे हस्ताक्षर नही किये है। और जब इतने महत्त्वपूर्ण आदेश की बात आती है तब तो और ज्यादा अचरज होता है कि वे कोई महत्त्वपूर्ण तथ्य कहना भूल गये हों।

6. "क्या 'अपॉइंटमेन्ट टेप' (नियुक्ति का टेप) में दिगयी जानकरी यह सिद्ध नहीं करती है कि 9 जुलाई का आदेश केवल श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति तक ही था?"

जी.बी.सी. के संशोधन (अ) और (ब) सिद्ध करने के लिए जी.आई.आई. में एक ही प्रमाण पाया जाता है। यह प्रमाण 28 मई 1977 के एक वार्तालाप से लिया गया है। इस लेख की धारणा है कि श्रील प्रभुपाद के आदेशों में ऐसा कोई प्रमाण नही है जो इस विषय से संबंधित हो।

"हालाँकि श्रील प्रभुपाद ने अपने वाक्यों को फिर से नही दोहराया फिर भी सब यही समझते थे कि श्रील प्रभुपाद अपेक्षा करते है कि उनके शिष्य भविष्य में दीक्षा देंगे।" (जी.आई.आई., पृष्ठ 35)

चूँकि यह जी.बी.सी. का एकमात्र प्रमाण है इसलिए 28 मई के वार्तालाप को लेकर इस लेख मे एक विशेष अध्याय बनाया गया है। वास्तव में यह कहना ही काफी होगा कि 9 जुलाई के पत्र में इस 28 मई के वार्तालाप का कोई उल्लेख ही नही है, ना ही श्रील प्रभुपाद ने इस बात पर जोर दिया कि 9 जुलाई के पत्र के साथ वार्तालाप के टेप की प्रतिलिपि भी भेजी जाए। अतएव हम पूरे विश्वास के साथ कह सकते है कि इसके अंदर ऐसी कोई जानकरी नही है जो 9 जुलाई के पत्र के सार को बदले

या जिससे 9 जुलाई के पत्र को समझने में उपयोगी हो। वास्तव में देखा जाए तो 28 मई के वार्तालाप के टेप को श्रील प्रभुपाद के पदार्पण के कई सालों बाद तक भी प्रकाशित नही किया गया था। इस तरह एक और बार हमें एक बहुत ही स्पष्ट पत्र को बदलने को कहा जा रहा है। और वह भी इस आधार पर जो 9 जुलाई पत्र पाने वाले को ही प्राप्त नही था। आगे चलकर हम देखेंगे कि इस 28 मई के वार्तालाप में ऐसा कुछ तथ्य नही है जो इस अंतिम आदेश से भिन्न हो।

सामान्यत: किसी एक विषय पर गुरू द्वारा बाद में दिए गए आदेश पहले दिए गये आदेशों की तुलना में श्रेष्ठ होते है। 'फाइनल ऑर्डर' श्रील प्रभुपाद का अंतिम आदेश है अतएव इसका पालन करना अनिवार्य है:

"मै तुम्हें बहुत कुछ कह सकता हूँ लेकिन जब मै तुमसे सीधे कुछ कहूँ तो तुम वही करो। यह तुम्हारा कर्तव्य हो जाता है कि तुम वही करो, तुम यह विवाद नही कर सकते कि 'स्वामीजी आपने मुझे पहले इस तरह करने को कहा था', नही, वह तुम्हारा कर्तव्य नही, जो मै तुम्हें अभी कह रहा हूँ तुम वही करो, इसको कहते है आज्ञा पालन।"

(श्रील प्रभुपाद श्रीमद्-भागवतम् प्रवचन, **15/4/1975**, हैदराबाद)

जैसे कि भगवद्-गीता में भगवान कृष्ण अर्जुन को कई तरह की योग पद्धतियों के बारे में बताते है, जैसे पहले ध्यान योग फिर ज्ञान योग इत्यादि लेकिन बाद में भगवान ने अपना अंतिम आदेश दिया:

"सब कुछ छोडकर मेरे भक्त एवं पूजक बनो- इसी को भगवान का अंतिम आदेश मानना चाहिए और इसी का पालन करना चाहिए।"

(चैतन्य महाप्रभु का शिक्षामृत, अध्याय **11**)

शंकराचार्य का अंतिम आदेश था 'भज गोविन्दम' और यह आदेश उनके पहले दिए गए अन्य आदेशों की अपेक्षा में श्रेष्ठ है। यह अंतिम आदेश उनके पहले दिए गए सभी आदेशों को निलंबित करता है। जी.बी.सी. स्वयं इसको तर्क का प्रामणिक सिद्धान्त मानती है।

"तक—वितर्क में, बाद में कहे गए वाक्यों पहले से अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाते है।"

(जी.आई.आई., पृष्ठ **25**)

ऐसा संभव नही कि हम अंतिम कथन के बदले उससे पहले वाले कथनों को स्वीकारे। अतएव जी.बी. सी. को अपने ही तर्क से ऋत्विक प्रणाली को अपनाना चाहिए।

7. "श्रील प्रभुपाद ने कई बार कहा था कि उनके सारे शिष्यों को गुरू बनना चाहिए। यह निश्चित रूप से साबित करता है कि श्रील प्रभुपाद ऋत्विक प्रणाली को स्थायी रूप से नही चाहते थे।"

श्रील प्रभुपाद ने अपने बाद किसी को दीक्षा गुरू बनने का आदेश नही दिया था। और इसके विरोध में अभी तक किसी प्रमाण प्रस्तुत नही किया है। वास्तव में इस्कॉन के कई वरिष्ठ नेता इस बात का

समर्थन करते है।

"और यह तथ्य है कि श्रील प्रभुपाद ने कभी नही कहा कि 'ठीक है यह अगले आचार्य होंगे या ये ग्यारह लोग आचार्य है और सारे संसार या आंदोलन के गुरू बनने के लिए इन्हें अनुमति है' उन्होंने ऐसा कभी नही किया।" (जयअद्वैत स्वामी, इस्कॉन साउठ लन्डन, **1993**)

श्रील प्रभुपाद ने स्पष्ट कहा है कि एक महाभागवत ही दीक्षा गुरू बन सकाता है। (महाभागवत – भगवद् साक्षात्कार की उच्चतम अवस्था) केवल यही नही बल्कि उसे अपने गुरू द्वारा निजी आदेश भी प्राप्त होना चाहिए। जो लोग बिना योग्यता के और बिना किसी आदेश के गुरू की पदवी धारण करते थे उनका श्रील प्रभुपाद बहुत जोरदार निन्दन करते थे। हम यहाँ श्रील प्रभुपाद की प्रस्तकों में पाए जाने वाले एकमात्र श्लोक को प्रस्तुत कर रहे है जहाँ दीक्षा शब्द किसी योग्यता के साथ जुड़ा हुआ है।

***"महाभागवत** श्रेष्ठो ब्रात्मणों वै गुरूर नुनम्*
सर्वेषम एव लोकनम् असौ पूज्यो यथा हरिः
महाकुलप्रसुतोपि सर्व यज्ञेशु **दिक्षितः**
सहस्र साखादययि च न गुरूः स्याद अवैष्णवः

गुरू को भक्ति की सर्वोत्तम अवस्था पर स्थित होना ही चाहिए। भक्तों को तीन स्तरों में विभाजित कीया जा सकता है और गुरू को उच्चतम स्तर के भक्तों में से ही चुना जाना चाहिए।" (चैतन्य चरितामृत मध्य, **24.330**, भावार्थ)

"जब कोई भक्ति के उच्चतम स्तर महाभागवत् को प्राप्त हो जाता है तब उसे गुरू के रूप में स्वीकार करना चाहिए और साक्षात् भगवान हरि के समान उनको पूजना चाहिए। केवल ऐसा व्यक्ति ही गुरू की पदवी धारण करने योग्य है।" (चैतन्य चरितामृत मध्य, **24.330**, भावार्थ)

श्रील प्रभुपाद ने विशेष रूप से यह भी कहा है कि दीक्षा गुरू बनने के लिए योग्यता ही नही बल्कि अपने पूर्व आचार्य का आदेश और अनुमति भी होनी चाहिए:

"सारांश में तुम यह जान लो कि वह मुक्तात्मा नही है, अतएव वह किसी को कृष्ण भावनामृत में दीक्षा नहीं दे सकाता। इसके लिए पूर्व अधिकारियों का विशेष आशीर्वाद होना चाहिए।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र जर्नादन को, **26/4/1968**)

"एक प्रामाणिक गुरू जिन्हें उनके पूर्व गुरू ने अनुमति देकर अधिकृत किया हो एवं जो गुरू परंपरा के अंतर्गत आते है ऐसे गुरू से ही दीक्षा लेनी चाहिए। इसी को दीक्षा विधान कहते है।"
(श्रीमद्–भागवतम्, **4.8.54**, भावार्थ)

भारतीय व्यक्तिः "आप इस कृष्ण भावनामृत आंदोलन के आध्यात्मिक नेता कब बने?"
श्रील प्रभुपादः "क्या कहा?"
ब्रह्मानन्दाः "यह पूछ रहा है कि आप कृष्ण भावनामृत के आध्यात्मिक नेता कब बने?"

श्रील प्रभुपादः "जब मेरे गुरू महाराज ने मुझे आदेश दिया। यही गुरू परंपरा है।"

भारतीय व्यक्तिः "क्या यह..."

श्रील प्रभुपादः "समझने की कोशिश करो। तीव्रता से आगे मत जाओ। एक व्यक्ति तभी गुरू बन सकता है जब उसके गुरू ने उसे आदेश दिया हो। यहि तथ्य सर्वस्व है। अन्यथा कोई गुरू नही बन सकता।"

(श्रील प्रभुपाद भगवद्-गीता प्रवचन, **28/10/1975**)

इस तरह श्रील प्रभुपाद के अनुसार कोई दीक्षा गुरू तभी बन सकता है, जब उसके पास योग्यता और आदेश हो। श्रील प्रभुपाद ने ऐसे किसी गुरू की नियुक्ति नही की थी और न ही उन्होंने कहा था कि उनके शिष्यों में से कोई दीक्षा देने के लिए योग्य है। इसके विपरीत **9** जुलाई के पत्र के दो महीने पहले ही उन्होंने यह स्वीकार किया था कि उनके शिष्य अभी तक 'बद्धजीव' थे और अत्यधिक सतर्क एवं सजग रहना आवश्यक था ताकि कही कोई आप को गुरू न घोषित कर दे। (कृपया परिशिष्ट देखिए **22** अप्रैल **1977** वार्तालाप, पृष्ठ **118**)

ऋत्विक प्रणाली को बदलकर किसी दूसरी प्रणाली को स्थापित करने के समर्थन में दिए गए प्रमाणों को तिन मूल वर्गो में बाँटा जा सकता है।

1) श्रील प्रभुपाद द्वारा सभी को बारंबार गुरू बनने का आह्वान करना जो कि श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा दिया गया आदेश 'आमार आज्ञाय गुरू हना' पर आधारित है।

2) श्रील प्रभुपाद के आधे दर्जन के करीब लिखे गए व्यक्तिगत पत्र जिसमें उनके पदार्पण के बाद उनके शिष्यों के दीक्षा गुरू होने की बात कही गई है।

3) श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों एवं प्रवचनों में दिए गए कथन जहाँ शिष्य आगे चलकर कमशः दीक्षा गुरू होने के विधान का उल्लेख है।

श्रेणी 1) का विश्लेषण:

चैतन्य चरितामृत के निम्नलिखित श्लोक में सभी को गुरू बनने का आदेश दिया गया है। श्रील प्रभुपाद इस श्लोक को कई बार कहा करते थे:

"सभी को भगवद्-गीता एवं श्रीमद्-भागवतम् में कृष्ण द्वारा दिये गये उपदेशों का पालन करने को कहो। इस तरह गुरू बनो और इस क्षेत्र में सभी को मुक्त करने का प्रयास करो।"
(चैतन्य चरितामृत मध्य, **7.128**)

परन्तु, श्री चैतन्य महाप्रभु जिस तरह के गुरू बनने का आदेश दे रहे है वह निम्नलिखित भावार्थों में स्पष्ट हो जाता है:

"इसका अर्थ है, अपने घर में रहो, हरे कृष्ण मंत्र का जाप करो और भगवद्-गीता और श्रीमद्-भागवतम् में दिये कृष्ण उपदेशों का प्रचार करो।"
(चैतन्य चरितामृत मध्य, **7.128**, भावार्थ)

"गृहस्थ, चिकित्स, अभियांत्रिक अथवा कुछ और बने रह सकते हो। इसमे कोई हर्ज नही है। केवल श्री चैतन्य महाप्रभु के उपदेशों का पालन करना चाहिये। हरे कृष्ण मंत्र का जप करना चाहिये और सपने रिश्तेदारों और दोस्तों को भगवद्-गीता एवं श्रीमद्-भागवतम् की शिक्षाओं को बताना चाहिये...। सबसे उत्तम यह होगा कि कोई शिष्य नहीं स्वीकारो।"
(चैतन्य चरितामृत मध्य, **7.130**, भावार्थ)

हम यहाँ देख सकते है कि उपर्युक्त गुरू का कार्य करने से पूर्व किसी प्रकार की साधना सिद्धि की आवश्यकताा नही है। यह निवेदन वर्तमान का है। स्पष्टत: सभी को उत्साहित किया जा रहा है कि जो मालूम हो उसका प्रचार करो। यह करते हुए इस प्रकार शिक्षा गुरू बनो। इसका स्पष्टीकरण इस निर्देश से होता है कि–

"सबसे उत्तम यह होगा कि कोई शिष्य नहीं स्वीकारो।"
(चैतन्य चरितामृत मध्य, **7.130**, भावार्थ)

शिष्य स्वीकारना दीक्षा गुरू का प्राथमिक कार्य है, शिक्षा गुरू को अपने स्थान पर ही रह कर क्षमतानुसार केवल कृष्ण भावनामृत का प्रचार करना चाहिये। श्रील प्रभुपाद के इस भावार्थ से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपरक्ति श्लोक में श्री चैतान्य महाप्रभु शिक्षा गुरू बनने का अधिकार दे रहे है, दीक्षा गुरू बनने का नहीं।

निम्नलिखित कथनों से यह और भी स्पष्ट हो जाता है जहाँ श्रील प्रभुपाद सबको गुरू बनने का आह्वान कर रहे है:

"यारे देखा, तारे कह, कृष्ण उपदेश। तुम्हें कुछ भी आविष्कार करने की आवश्यकता नही है। जो श्री कृष्ण ने तक कहा है, उसको दोहराओ। बस। कुछ भी ना जोड़ो या बदलो। तब तुम गुरू बनोगे...। मै एक बेवकूफ मूढ हो सकता हूँ...। तो हमें इस पथ का अनुसरण करना चाहिए कि तुम गुरू बनो, अपने पडोस के लोगों, मिलने वालों का उद्धार कारो, पर कृष्ण के प्रमाणिक शब्द ही दुहाराओ। तब यह काम करेगा ...। इसे कोई भी कर सकता है। एक बच्चा कर सकता है।"
(श्रील प्रभुपाद संध्या दर्शन, **11/5/1977**, ऋषिकेश)

"क्योंकि लोग अंधकार में डुबे हुए है, हमें लाखों गुरूओं की आवश्यकता है जो उनको ज्ञान दे। इसलिए चैतन्य महाप्रभु का आंदोलन है, उन्होंने कहा था, तुम सब गुरू बनो।"
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, **21/5/1976**, होनोलूलू)

"तुम सिर्फ कहो...। कृष्ण बोलते है 'निरन्तर मेरा ध्यान करो, मेरे भक्त बनो। मेरी पूजा करो और मुझे नमन करो।' कृपया यह सब करो। तो अगर तुम सिर्फ एक व्यक्ति को यह करने

के लिये प्रेरित कर सके तब तुम गुरू बने। क्या इसमें कुछ मुश्किल है?"
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **2/8/1976**, न्यु मायापुर)

"असली गुरू वह है जो वही उपदेश दे जो कृष्ण ने कहा है...। तुम्हें सिर्फ यही कहना है 'यह ऐसा है' बस। क्या यह अति कठिन कार्य है?"
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, **21/5/1976**, होनोलूलू)

"... 'परन्तु मै योग्य नही हूँ। मै गुरू कैसे बन सकता हूँ।' योग्यता की कोई जरूरत नही है। जिससे भी मिलो, सिर्फ वही कहो जो श्री कृष्ण ने कहा है। बस। तुम गुरू बनो।"
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, **21/5/1976**, होनोलूलू)

(आश्चर्यपूर्वक कुछ भक्तों ने इन कथनों से मिनिमल क्वालिफाइड दीक्षा गुरू (न्यूनतम योग्य दीक्षा गुरू *(1) को उचित बतलाना चाहा है। जबकि इस तरह के गुरू का वर्णन श्रील प्रभुपाद की किताबों, पत्रों, प्रवचनों, अथवा वार्तालापों में एक बार भी नही किया गया है।)

ऐसे गुरू, जिनकी योग्यता सिर्फ यह है कि उसने जो सुना है वही दुहराए, का उदाहरण इस्कॉन के किसी भी 'भक्त' अभ्यासक्रम में मिल जाएगा। उपर्युक्त कथनों से स्पष्ट हो जाता है कि ये कथन शिक्षा गुरू बनने का निमंत्रण है। यह हम जोर देकर कह सकते है क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने अपनी पुस्तकों में दीक्षा गुरू की अति उच्च योग्यता बता रखी है:

"जब कोई व्यक्ति महाभागवत् की उच्चतम अवस्था अर्जित कर लेता है तब उसे गुरू मान लेना चाहिये और उसे भगवान पुरूषोत्तम हरि की तरह पूजा जान चाहिए। केवल यह व्यक्ति ही गुरू की पदवी ग्रहण कर सकता है।"
(चैतन्य चरितामृत मध्य, **24.330**, भावार्थ)

"गुरू-शिष्य परंपरा में आने वाले किसी योग्य गुरू से ही दीक्षा लेनी चाहिये। ऐसे गुरू को उसके गुरू ने यह अधिकार दिया होगा। इसे दीक्षा-विधान कहते है।"
(श्रीमद्-भागवतम्, **4.8.54**, भावार्थ)

उपर्युक्त कथनों मे श्रील प्रभुपाद बताते है कि दीक्षा गुरू बनने का आदेश अपने गुरू द्वारा मिलना चाहिये। श्री चैतन्य का आदेश पिछले **500** साल से प्रचलित था। यह स्पष्ट है कि श्रील प्रभुपाद 'आमार आज्ञाया गुरू हाना' आदेश को दीक्षा संबंधी आदेश नही मानते थे। नहीं तो वह अपने गुरू के द्वारा प्रतिपादित एक और आदेश की बात क्यों करते? श्री चैतन्य का आदेश शिक्षा गुरू बनने का आह्वान है न कि दीक्षा गुरू बनने का। दीक्षा गुरू कए अपवाद है, नियम नही। बल्कि श्रील प्रभुपाद लाखों पुरूषों, महिलाओं और बच्चो को शिक्षा गुरू बनता देखना चाहते थे।

श्रेणी 2) का विश्लेषण:

श्रील प्रभुपाद की उपस्थिति में भी कुछ मुट्ठीभर ऐसे अति आत्मविश्वासी शिष्य थे जो खुद दीक्षा प्रणाली

देकर अपने शिष्य बनाना चाहते थे। श्रील प्रभुपाद ने उन्हें खुद कुछ पत्र लिखे थे। ये पत्र म.आ.स.सि. दीक्षा प्रणाली के प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत किये जाते है। श्रील प्रभुपाद का इन महत्त्वकांक्षी शिष्यों से एक ही तरह का वर्ताव होता था। सामान्यत: वे उनसे यह कहते थे कि वर्तमान में तो सावधानपूर्वक प्रशिक्षित रहो और भविष्य में उनके प्रस्थान उपरान्त शिष्य स्वीकार कर सकते हो।

"पहली चीज, मैं अच्यतानंद को चेतावनी देता हूँ, दीक्षा देने का प्रयास न करो। तुम ऐसी स्थिति में नही हो कि दीक्षा दे सको ...। ऐसी माया से भ्रमित ना हो। मैं तुम सबको भविष्य में गुरू बनने की शिक्षा दे रहा हूँ परन्तु जल्दबाजी मत करो।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र अच्यतानंद एवं जय गोविंद को, **21/8/1968**)

"कुछ समय पहले तुमने अपने खुद के शिष्य स्वीकारने की आज्ञा माँगी थी। यह समय अब जल्द ही नजदीक आ रहा है जब अपने प्रभावशाली प्रचार से तुम कई शिष्य बनाओगे।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र अच्यतानंद को, **16/5/1972**)

"मेरे सुनने में आया है कि दूसरे भक्तों द्वारा तुम्हारी थोड़ी पूजा हो रही है। यह सही है कि वैष्णव को नमन करना चाहिए, पर गुरू के प्रस्थान उपस्थिति में नही। गुरू के प्रस्थान उपरान्त वह स्थिति आयेगी, पर अभी रूको। नही तो अलर्गअलग पक्ष बन जावेंगे।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र हंसदूता को, **1/10/1974**)

"सावधानीपूर्वक प्रशिक्षण करते रहो और तब तुम प्रामाणिक गुरू हो। और उसी सिद्धान्त पर शिष्य ले सकते हो। पर यह शिष्टाचार की रीति है कि अपने गुरू की उपस्थिति में होने वाले शिष्य को गुरू के पास लेकर आओ और गुरू की अनुपस्थिति में, बिना किसी रोक-टोक के शिष्य स्वीकारो। यह गुरू-शिष्य परंपरा का कानून है। मै चाहता हूँ कि मेरे शिष्य प्रामाणिक गुरू बनें और कृष्ण भावनामृत का दूर-दूर तक प्रसार करे। इससे मुझे और कृष्ण दोनों को खुशी होगी।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र तुष्ट कृष्ण को, **2/12/1975**)

मजेदार बात तो यह है कि वैसे तो जी.आई.आई. में म.आ.स.सि. दर्शन के प्रमाण के लिए इस 'कानून' का उपयोग किया गया है, फिर भी उसी दस्तावेज में यह स्वीकार किया गया है कि यथार्थ में यह कानून नही ही:

"शास्त्रों में ऐसे कई उदाहरण है जहाँ गुरू की उपस्थिति में ही शिष्य दीक्षा देते है। शास्त्रों में ऐसा कोई विशेष निर्देश नही जहाँ यह कहा गया हो कि शिष्य को गुरू की उपस्थिति में दीक्षा नही देनी चाहिए।" (जी.आई.आई., पृष्ठ **23**)

सम्मान, पूजा एवं अनुयायी ग्रहण करने की उत्सुकता एक अयोग्यता है। ऐसा अयोग्य व्यक्ति गुरू नही बन सकता। हम तो घमंड के प्रकोप की सिर्फ प्रशंसा ही कर सकते जिससे धरती पे इतिहास के सबसे महान आचार्य की शारीरिक उपस्थिति में भी ऐसे कुछ व्यक्ति खुद दीक्षा देने के लिये अपने आप

को योग्य समझ बैठे। *(2)

इन पत्रों में यह स्पष्ट दिखता है कि श्रील प्रभुपाद ऐसे शिष्यों को थोडा और धीरज रखने को कहकर उन्हें भक्ति सेवा में रखना चाह रहे थे। ऐसा करने से यह संभावना तो रहती थी कि समय के साथ इनकी महत्त्वकांक्षी इच्छाएँ शुद्ध हो जाएँगी।

ऐसे कई नम्र भक्त थे जो दृढता, श्रद्धा और स्वार्थहीनता से अपने गुरू की सेवा में लीन थे। ऐसे भक्तों को कभी ऐसा पत्र न मिला जिसमें उनके गुरू बनने के प्रज्वल भविष्य का वर्णन हो। गुरू बनने की महत्त्वकांक्षा ही अयोग्यता होती है। तब श्रील प्रभुपाद ने ऐसे महत्त्वकांक्षी शिष्यों को ही दीक्षा गुरू बनाने का वायदा क्यों किया?

श्रील प्रभुपाद के ऐसे भी कथन है जहाँ उन्होंने अपनी देह त्यागने के उपरान्त अपने शिष्यों को दीक्षा देने की स्वतंत्रता दी थी। यह कथन सत्य है। उदाहरणतया इंग्लेंड में 17 वर्ष की आयु से कार चलाने के लिये हर कोई स्वतन्त्र होता है। परन्तु हमें दो चीजे नही भूलनी चाहिये- पहले उसे कार चलाना आना चाहिये (यानी योग्य होना चाहिये) दूसरे उसको 'ड्राइविंग लाइसेंस' अधिकारी द्वारा 'अधिकार' मिलना चाहिये। पाठक समानांतर खुद निकाल सकते है।

म.आ.स.सि. के प्रमाणस्वरूप एक और पत्र प्रस्तुत किया जाता है:

"1975 से, वे सब जो सभी उपर्युक्त परीक्षाओं में उत्तीर्ण होंगे उन्हें दीक्षा देने हेतु विशेष अधिकार मिलेगा जिससे वे कृष्ण भावनामृत सदस्यों की संख्या बढा सकेंगे।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र कीर्तनानन्द को, 12/1/1969)

क्या उपर्युक्त कथन द्वारा दीक्षा संबंधी अंतिम आदेश को रोका जा सकता है?

क्योंकि यह व्यक्तिगत पत्रों द्वारा ऋत्विक प्रणाली रोकाने का प्रयास है, हम यहाँ श्रील प्रभुपाद के 'गुरू-शिष्य परंपरा के कानून' का उपयोग करेंगे। इस कानून के प्रथम भाग के अनुसार अपने गुरू की सशरीर उपस्थिति में किसि शिष्य को दीक्षा आचार्य नही बनना चाहिये। यह 'कानून' लागू करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपर्युक्त पत्र में श्रील प्रभुपाद अपने शिष्यों को दीक्षा गुरू बनकर अपने शिष्य बनाने के लिये नही कह रहे है। **वे 1975 में इस धरती पर ही थे**। इससे यह स्वभावत: निष्कर्ष निकाल सकते है कि श्रील प्रभुपाद शुरूआती वर्षो यानी 1969 में भी किसी प्रकार की 'अधिकारिक' दीक्षा प्रणाली का मनन कर रहे थे। और जैसा बाद में हुआ, श्रील प्रभुपाद ने सचमुच 1975 तक अपने कुछ शिष्यों, जैसे कि कीर्तनानन्द को श्रील प्रभुपाद के प्रतिनिधि के रूप में दीक्षा से पहले माला पर जपना और दीक्षा होम करने की अनुमति दी थी। यह पत्र दीक्षा देने के लिये प्रतिनिधियों के उपयोग की भविष्यवाणी करता है। तदुपरान्त इन प्रतिनिधियों को उन्होंने 'ऋत्विक' नाम दिया और 9 जुलाई के पत्र से उनके कार्य को औपचारिक बना दिया। ऐसा सुझाव देना बेवकूफी होगी कि श्रील प्रभुपाद कीर्तनानन्द को कुछ परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने पर संप्रदाय के दीक्षा आचार्य की पदवी दे रहे थे।

"श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेशों को उनके प्रामाणिक प्रतिनिधि के संरक्षण में पालन कर कोई

भी गुरू बन सकता है। और मेरी इच्छा है कि मेरी अनुपस्थिति में मेरे सारे शिष्य प्रामाणिक गुरू बने और कृष्ण भावनामृत का समस्त विश्व में प्रचार करे।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र मधुसूदन को, **2/11/1967**)

यहाँ श्रील प्रभुपाद अपनी अनुपस्थिति में शिष्यों को गुरू बनने को कह रहे। इस कथन का उपयोग कर यह तर्क दिया जाता है कि श्रील प्रभुपाद उन्हें दीक्षा गुरू बनने को कह रहे है, क्योंकि वे शिक्षा गुरू पहले से ही थे। संभवत: यह भी तो हो सकता है कि उन्हें अच्छे शिक्षा गुरू बनने का प्रोत्साहन फिर दे रहे हों। और यह भी कि उनकी अनुपस्थिति में भी अच्छे शिक्षा गुरू बने रहे। निश्चित ही यहाँ यह नही कहा गया है कि उनके शिष्य दीक्षा दे सकते है और खुद के शिष्य बना सकते है। यह कथन कि 'प्रामाणिक गुरू बने और कृष्ण भावनामृत का समस्त विश्व में प्रचार करे' शिक्षा गुरू पर भी समान रूप से लागू होता है।

हो सकता है कि ये पत्र किसी और तरह की गुरू प्रणाली का संकते दे रहे हो। अगर यह मान भी ले तो भी यह पत्र **9** जुलाई के अंतिम आदेश को बदल नही सकते; क्योंकि ये पत्र समस्त आंदोलन को दुहराए नहीं गये थे। उपर्युक्त पत्र **1986** तक प्रकाशित ही नही हुए थे। कभी-कभी यह भी कहा जाता है कि ये पत्र संस्था के कुछ सदस्यों के पास किसी तरह पहुँच गये थे। ऐसा हो सकता है या नही भी। परन्तु प्राथमिकता तो इस तथ्य पर दी जानी चाहिये कि श्रील प्रभुपाद ने इस तरह की वितरण प्रणाली न तो स्थापित की और नही अनुमोदित। हमें इस तरह का सबूत कही नही मिलता जहाँ श्रील प्रभुपाद ने अपने निजी पत्रव्यवहार को सर्वज वितरित करने का आदेश दिया हो। उन्होंने एक बार लापरवाह प्रतीत होते हुए कह दिया था कि उनके पत्रों को 'समय होने' पर प्रकाशित किया जा सकता है। परन्तु उन्हेंने ऐसा संदेश कभी नही भेजा कि इन पत्रों के बिना म.आ.स.सि. को लागू करने की पूर्ण जानकारी नही मिलेगी।

1977 मे क्या होना चाहिए था- इसकी दलील पेश करने के लिए सारे प्रमाण उसी समय अधिकारिक रूप में एवं सरलता से उपलब्ध होने चाहिए थे। अगर इन्ही पत्रों में भविष्य के **10** हजार सालों की दीक्षा प्रणाली की कुंजी छुपी थी, तो श्रील प्रभुपाद निश्चित ही इनका प्रकाशन और बडी संख्या में वितरण अति महत्त्वपूर्णता से कराते। ऐसा भी हो सकता था कि कुछ वरिष्ठ भक्तों ने उनके निजी पत्र न पढे हो और इस कारणवश स्पष्टतापूर्वक समझ न पाए हों कि श्रील प्रभुपाद के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त दीक्षा प्रणाली किस तरह चलेगी। और ऐसा समझना गलत नही है; क्योंकि **28** मई **1977** तक भी सम्पूर्ण जी.बी.सी. को यह ज्ञात नही था कि श्रील प्रभुपाद क्या करना चाह रहे है। (कृपया परिशिष्ट में **28** मई वार्तालाप देखिए, पृष्ठ **119**)

अत: यह कहना कि इसी तरह के मुट्ठीभर पत्रों के कारण **9** जुलाई के पत्र को बदल देना चाहिये सरासर अनुचित है। अगर यह इतने महत्वपूर्ण थे तो श्रील प्रभुपाद इनको **9** जुलाई के पत्र में संबोधित करते या संलग्न करते।

अंत में दीक्षा के लिए एक ही पदवी दी गयी थी वह थी आचार्य के प्रतिनिधि की तरह यानी ऋत्विक।

अंत में श्रेणी 3) का विश्लेषण:

ऋत्विक प्रणाली को रोकने के लिए श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों और प्रवचनों से कई वाक्यों को प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत किया जाता है। अब हम इन प्रमाणों का परीक्षण करेंगे।

प्राय: श्रील प्रभुपाद की किताबों में हमे दीक्षा गुरू की योग्यताओं का वर्णन मिलता है। ऐसा कोई विशेष कथन नही है जो उनके शिष्यों के क्रमश: दीक्षा गुरू होने की बात कर रहा हो। इसके विपरीत ये कथन केवल इसी बात पर जोर देते है कि दीक्षा गुरू बनने के लिए बहुत ही उच्च योग्यता एवं अपने गुरू द्वारा आदेश प्राप्त होना चाहिए।

> **"जो अभी शिष्य है वह अगला गुरू होगा। यदि कोई दृढतापूर्वक गुरू का आज्ञाकारी नही रहा हो तो वह प्रामाणिक व सहमति प्राप्त गुरू नही बन सकता।"**
> (श्रीमद्-भागवतम्, **2.9.43**, भावार्थ)

उपर्युक्त निर्देश किसी तरह से भी यह छूट नही देता कि केवल गुरू के चले जाने के कारण कोई दीक्षा दे सकता है। गुरू के इस धरती को छोडकर जाने का विचार इस निर्देश में ही नही। केवल यह विचार है कि उनको अनुमति प्राप्त होनी चाहिए एवं दृढ़तापूर्वक आज्ञाकारी होना चाहिए। हम पहले से यह जानते है कि उन्हें महाभागवत भी होना चाहिए।

कुछ भक्त 'अन्य ग्रहों की सुगम यात्रा' (पृष्ठ **32**) में संबोधित **"मोनिटर गुरू"** को प्रमाण बताते हुए म.आ.स.सि. (बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली) का समर्थन करते है और यह निष्कर्ष निकालते है कि ऋत्विक प्रणाली को बंद कर देना चाहिए, किन्तु यह उदाहरण स्पष्ट रूप से शिक्षा की परिभाषा देता है दीक्षा गुरू की नही। पुस्तक के इस अंश के अनुसार 'मोनिटर' गुरू अपने निर्देशक की ओर से काम करते है, वह स्वयं निर्देशक नही है। वह निर्देशक होने के लिए योग्य हो सकता है परन्तु इसके लिए एक प्रक्रिया है और यह प्रक्रिया निर्देशक के अंतर्धान होने पर अपने आप ही सक्रिय नही होती (निर्देशक का अर्थ है दीक्षा गुरू)। 'मोनिटर गुरू' केवल शिक्षा के लिए ही शिष्य रख सकते है और वह भी सीमित संख्या में। जब ये 'मोनिटर गुरू' योग्य हो जाएँ यानि महाभागवत बन जाएँ और पूर्व आचार्य से उन्हें सहमति या आदेश प्राप्त हो तब उनको फिर 'मोनिटर गुरू' नही कहा जाएगा। तब वे स्वयं गुरू होंगे, और तब असंख्य शिष्य बना सकते है। इस तरह, 'मोनिटर' शिक्षा गुरू है और निर्देशक एक दीक्षा गुरू है। शिक्षा गुरू, दीक्षा गुरू का दृढतापूर्वक अनुसरण करते हुए पूरी तरह योग्य बन सकते है और फिर दीक्षा देने की सहमति या आदेश पाने के पात्र बन सकते है। जब तक निर्देशक उपस्थित है तब तक 'मोनिटर' केवल अपने निर्देशक की साहयता करते है। यदि 'मोनिटर गुरू' वास्तव में दीक्षा गुरू ही है तो यह फिर गुरू परंपरा के कानून के विरूद्ध होगा जो म.आ.स.सि. (बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली) का समर्थन करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। निष्कर्ष में 'मोनिटर गुरू' निर्देशक (दीक्षा गुरू) का स्थान लेने के लिए अथवा उनका उत्तरधिकारी बनने के लिए नहीं है बल्कि निर्देशक के साथ काम करने के लिए है।

निश्चित रूप से 'मोनिटर' प्रणाली जी.बी.सी. के संशोधनों (अ) और (ब) का समर्थन नही करती।

संशोधन (अ)– ऋत्विक प्रणाली श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने के उपरान्त बंद हो जानी थी। (ब)– ऋत्विक अपने आप ही दीक्षा गुरू बनते थे।

श्रील प्रभुपाद के पत्रों के अलावा भी कुछ ऐसे संदर्भ है जिनको लेकर कहा जाता है कि श्रील प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को दीक्षा गुरू बनने की अनुमति दी थी:

"अभी, दसवाँ, ग्यारहवाँ, बारहवाँ। मेरे गुरू महाराज चैतन्य महाप्रभु से दसवे थे, मै ग्यारहवाँ हूँ और तुम बारहवे हो। तो अब इस ज्ञान का वितरण करो।"
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, **18/5/1972**, लॉस एंजिल्स)

"साथ मे मै उन सबसे गुरू बनने का अनुरोध करूँगा। तुम सबको अगला गुरू बनना चाहिए।"
(श्रील प्रभुपाद व्यास-पूजा संबोधन, **5/9/1969**, हेमवर्ग)

पहला कथन साफ-साफ यह बताता है कि श्रील प्रभुपाद के शिष्य पहले से ही बारहवें हो चुके है– 'तुम बारहवे हो'। अतएव यह भविष्य में दीक्षा गुरू बनने के लिए कोई अनुमति या आदेश नही है। यह केवल यही कहता है कि पहले से ही तुम परंपरा के संदेश का प्रचार कर रहे हो। दूसरा कथन भी पहले कथन के अनुरूप ही है। यह नि:संदेश ही कहता है कि श्रील प्रभुपाद के शिष्य उनके बाद आते है, लेकिन जैसा कि पहला कथन कहता है शिष्यो के जोरदार प्रचार कार्य के कारण परंपरा स्थापित हो चूकी थी। दोनें ही कथनों में शिष्य बनाने का स्पष्ट आदेश नही है अपितु प्रचार करने का आदेश है, क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने कहा कि तुम अगले गुरू होंगे, इसका यह मतलब नही होता कि श्रील प्रभुपाद चाहते थे कि वे अगले दीक्षा गुरू बने। ऐसा कहना या समझना मन की कल्पना मात्र है। वास्तव में, हम जानते है कि यह गलत है क्योंकि अंतिम आदेश में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि ऊनके शिष्यो केवल आचार्य के प्रतिनिधियों के रूप में कार्य करने हेतु थे, दीक्षा गुरू की क्षमता में नही।

यह तर्क देना कि ऐसे कथन श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश को स्थगित कर देते है, बिल्कुल असमर्थनीय है। इसको श्रील प्रभुपाद के अन्य कथनों से विपरीत साबित किया जा सकता है। उनके प्रस्थान के बाद क्या होगा? इस संबंध में श्रील प्रभुपाद के कई कथन उपर्युक्त मनोधारणाओं का विरोध करते है:

रिपोर्टर: "आपकी मृत्यु पश्चात् अमरीका में आपके आंदोलन का क्या होगा?"
श्रील प्रभुपाद: "मेरी मृत्यु कभी नही होगी।"
भक्तगण: "जय! हरी बोल!" (हँसी)
श्रील प्रभुपाद: "मै अपनी पुस्तकों द्वारा जीवित रहूँगा और तुम लाभ उठाओगे।"
(श्रील प्रभुपाद पत्रकार सम्मेलन, **16/7/1975**, सेन फ्रॉन्सिको)

यदि श्रील प्रभुपाद म.आ.स.सि. प्रणाली (बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली) चाहते थे तो इसका उल्लेख करने का यह स्पष्ट अवसर था। ऐसा कहने की बजाय कि मेरे शिष्य दीक्षा गुरू बनेंगे उन्होंने कहा कि वे कभी नही मरेंगे और उनकी किताबें ही सारा आवश्यक कार्य करेंगी। उपर्युक्त संवाद से पता चलता है कि श्रील प्रभुपाद अब भी सजीव गुरू है और वे अपनी पुस्तकों के माध्यम से दिव्य ज्ञान (दीक्षा का

मुख्य अंग) दे रहे है और यह तव तक चलता रहेगा जव तक इस्कॉन रहेगा। इस प्रकिया में सहायक होना ही उनके शिष्यों का योगदान है।

"अपरिक्व आचार्य न बनो। पहले आचार्य के आदेशों का पालन कर परिपक्व बनो। उसके बाद आचार्य बनना अच्छा रहेगा। हम लोग आचार्य बनाना चाहते है लेकिन शिष्टाचार यह है कि जब तक गुरू उपस्थित है किसी को आचार्य नही बनना चाहिए। यदि वह संपूर्ण रूप से परिपक्व हो गया हो तब भी नही, क्योंकि शिष्टता इसी में है कि यदि कोई दीक्षा लेना चाहता है तो यह शिष्य का कर्तव्य है कि वह उस व्यक्ति को अपने आचार्य के पास ले जाए।"
(श्रील प्रभुपाद चैतन्य चरितामृत प्रवचन, **6/4/1975**)

उपर्युक्त कथन जरूर यह नियम बताता है कि शिष्य आगे चलकर आचार्य बन सकते है। परन्तु यह जोर देकर कहा जा रहा है कि वे अभी नही वने। वल्कि, श्रील प्रभुपाद तभी शिष्यों के आचार्य बनने की बात करते है, जव अपनी सशरीर उपस्थिति में गुरू बनने से रोकना हो। वे यही प्रकिया निजी पत्रों में भी अपनाते है। स्पष्ट रूप से यह केवल एक नियम बताता है न कि अपने शिष्यों को गुरू बनने का स्पष्ट आदेश। जैसा हम 'अपाइंटमेंट टेप' के विश्लेषण में देखेगें कि श्रील प्रभुपाद ने मई **1977** तक भी दीक्षा गुरू बनने का स्पष्ट आदेश नही दिया था। ("मेरे आदेश पर...।परन्तु मेरे आदेश पर...। जव मै आदेश दूं") और उनके देह त्यागने तक यही स्थिति वर्तमान रही। उपर्युक्त प्रवचन में तो आगे चलकर वे वताते है कि गुरू बनने की महत्वकांक्षा को इस तरह मोड़ा जाये:

"और आचार्य बनना ज्यादा मुश्किल नही है...। आमार आज्ञाय गुरू हाना तारा एई देश, यारे देखा तारे कह कृष्ण उपदेश ' मेरे आदेश का पालन कर, तुम गुरू बनो।'... फिर, भविष्य में जैसे तुम्हारे पास है अभी दस हजार। हम इसे बढ़ाऐगे एक लाख। यह हमे चाहिऐ। फिर एक लाख से दस लाख; और दस लाख से एक करोड़।"
(श्रील प्रभुपाद चैतन्य चरितामृत प्रवचन, **6/4/1975**, मायापुर)

यह पहले ही वताया जा चुका है कि चैतन्य महाप्रभु का आदेश सवको प्रचार करने एवं ज्यादा कृष्ण भक्त वनाने के लिया था, शिष्य वनाने के लिए नहीं। श्रील प्रभुपाद भी उसी वात को दोहराते हुए अपने शिष्यों को प्रोत्साहन देने के लिए कह रहे है कि वहुत से भक्त वनाओ। श्रील प्रभुपाद का यह कथन 'यदी तुम्हारे पास अभी दस हजार...। (अर्थात श्रील प्रभुपाद की उपस्थिति मे) वहुत महत्त्वपूर्ण है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वे कृष्ण भावनामृत अनुयायियों की वात कर रहे अपने 'शिष्य के शिष्यों' की नही; क्योंकि उस प्रवचन का मुख्य विषय था कि वे श्रील प्रभुपाद की उपस्थिति में दीक्षा न दें। इसका अर्थ यह होगा कि उस समय करीव दस हजार अनुयायी होगे और भविष्य में सेंकड़ों अनुयायी और जोडे जाएँगे। ऋत्विक प्रणाली यह तय करेगी कि ये अनुयायी जव दीक्षा लेने योग्य होंगे तव उसे श्रील प्रभुपाद से दीक्षा प्राप्त हो, ठीक उसी तरह जव श्रील प्रभुपाद उपरोक्त भाषण दे रहे थे तव दीक्षा लेते थे।

निष्कर्ष:

श्रील प्रभुपाद द्वारा दीक्षा गुरू बनने के लिए अपने शिष्यों को दिये गये ऐसे किसी आदेश का प्रमाण नही है जो ऋत्विक प्रणाली का स्थान ले सके।

हमारे पास जो है वह मुट्ठीभर (उस समय अप्रकाशित) व्यक्तिगत पत्र जे उन्ही लोगों को भेजे गए थे जो श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में ही दीक्षा देना चाहते थे। इनमे से कुछ लोगों को तो आंदोलन मे प्रविष्ट हुए ज्यादा समय भी नही हुआ था। ऐसे मामलों मे उन्हे अपनी महत्त्वकांक्षा की पूर्ती करने के लिए कम से कम श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने तक प्रतीक्षा करने के लिए कहा जाता था। चूँकि ये सब पत्र इत्यादि **9** जुलाई के पत्र के समय तक भी प्रकाशित नही किए गए थे, इससे हम समझ सकते है कि इनका इस्कॉन की भविष्य की दीक्षा प्रणाली से कोई सीधा संबंध नही था।

श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों और वार्तालाप में केवल उनके शिष्यों के गुरू बनने के आदेश ही मिलते है। वैसे शिष्य के दीक्षा गुरू बनने के सामान्य सिद्धांत को संबोधित किया गया है परन्तु श्रील प्रभुपाद अपने शिष्यों को दीक्षा गुरू बनकर अपने ही शिष्य बनाने का आदेश नही देते।

उपर्युक्त उदधृत वाक्य किसी भी रूप में **9** जुलाई के स्पष्ट आदेश का स्थान नही ले सकते। **9** जुलाई का आदेश सारे आंदोलन को भेजा गया प्रबन्धन प्रणाली का एक विशेष दस्तावेज है। वर्तमान म.आ.स.सि. (बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली) को रेखांकित करने वाले इस तरह का कोई दस्तावेज नही है।

इस तरह यह विचार कि श्रील प्रभुपाद ने कई जगह और कई बार अपने शिष्यों को उनके प्रस्थान के तुरन्त बाद या कुछ देर बाद या कभी भी दीक्षा गुरू बनने का आदेश दिया था, महज एक कल्पना ही है।

सामान्यत: यह भी कहा जाता है कि श्रील प्रभुपाद ने बार-बार अपनी पुस्तकों, पत्रों, प्रवचनों एवं वार्तालापों में निश्चित रूप से यह स्पष्ट कर दिया था कि वे भविष्य की दीक्षा प्रणाली किस प्रकार चाहते थे, इसलिए यह जरूरी नही था कि श्रील प्रभुपाद इसको **9** जुलाई के पत्र में फिर से बतलाएँ। ऐसा दावा पूरी तरह गलत तो है हि बल्कि यह और अधिक असामंजस्य की स्थिति पैदा कर देता है:

- यदि श्रील प्रभुपाद की शिक्षाओं में यह बहुत स्पष्ट था कि उनकी अनुपस्थिति में वे दीक्षा प्रणाली को किस प्रकार जारी रखना चाहते थे और यदि उन्होंने सोचा था कि इस मामले में किसी विशेष निर्देश की आवश्यकता नही थी तो जी.बी.सी. ने एक विशेष आयोग का गठन कर उसे श्रील प्रभुपाद के पास क्यों भेजा? इस आयोग का मुख्य लक्ष्य यही मालूम करना था कि दीक्षा कैसे दी जाएगी, विशेषकर जब श्रील प्रभुपाद हमारे बीच नही रहेंगे। (कृपया अपॉइंटमेंट टेप देखिए, पृष्ठ **32**) उस समय श्रील प्रभुपाद देह त्यागने का विचार कर रहे थे। ऐसी अवस्था में उनके वरिष्ठ शिष्य कुछ ऐसे आधारहीन प्रश्न पूछ रहे थे जिनका उत्तर बीते सालोंमें श्रील प्रभुपाद कई बार दे चुके थे।

- यदि श्रील प्रभुपाद ने स्पष्ट रूप से म.आ.स.सि. (वर्तमान में चलित बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली) को स्थापित करने के लिए कहा था तो उन्होंने इसको स्थापित करने के संबंध में इतने कम आदेश क्यों छोड़े जिसके कारण, श्रील प्रभुपाद के समाधि लेने के कुछ समय बाद ही उनके

वरिष्ठ शिष्य श्रीधर महाराज के पास जाकर यह पूछने को बाध्य हो गए कि इस प्रणाली को किस प्रकार लागू किया जाए।

• यदि सबके लिए यह अति स्पष्ट था कि श्रील प्रभुपाद चाहते थे कि उनके शिष्य गुरू बने तो जी.बी.सी. ने फिर 'जोनल आचार्य प्रणाली' (क्षेत्रीय आचार्य प्रणाली) का गठन क्यों किया? जहाँ गुरू बनने का अधिकार कुछ लोगों तक ही सीमित था, और इस प्रणाली को एक पूरे दशक यानी दस साल तक चलने दिया गया।

हालाँकि हम जी.बी.सी. के लेख जी.आई.आई. की आलोचना कर रहे है फिर भी इसका एक अंग श्रील प्रभुपद के परिवार को एकजुट करने का भाव रखता है। वह है:

> **"एक शिष्य का एकमात्र कर्तव्य है कि वह अपने गुरू की पूजा एवं सेवा करे। उसका मन इस बात से व्याकुल या त्रस्त नही होना चाहिए कि वह किस प्रकार गुरू बने। एक भक्त, जो सच्चे मन से आध्यात्मिक प्रगति करना चाहता है, उसे चाहिए कि वह शिष्य बनने की कोशिश करे, गुरू बनने की नही।"** (जी.आई.आई., पृष्ठ **25**, जी.बी.सी. **1995**)

हम इससे पूरी तरह सहमत है।

* **(1)** जी.बी.सी. के इस्कॉन जर्नल **1990** में प्रकाशित अजामिला दास का लेख 'रेगुलर या ऋत्विक' इस प्रकार के अर्थ की वकालत करता है।

* **(2)** यहाँ हम सूचित करना चाहेंगे कि उपर्युक्त ज्यादातर भक्तों ने अपने गलती को पहचाना है इसलिए उन्हें हम किसी अपराध या कठिनाई पहुँचाने के लिए क्षमा चाहते है। शायद वह इस बात से सहमत होंगे कि उनके व्यक्तिगत अनर्थो को संबोधित करके श्रील प्रभुपाद द्वारा लिखे गए पत्रों को आज इस्कॉन में चलित म.आ. स.सि. (बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली) का समर्थन करने के लिए प्रयोग में लाया जा रहा है।

8. "शायद श्रील प्रभुपाद की किताबों मे कई ऐसा शास्त्रिक निर्देश है जो दीक्षा देने पर प्रतिबंध लगाता है जब गुरू और शिष्य एक समान ग्रह पर न उपस्थित हो?"

श्रील प्रभुपाद की प्रस्तकों में ऐसा कोई कथन नही है। उनकी पुस्तकों मे सारे आवश्यक शास्त्रिक नियम दिये हुए है, अत: इस तरह का निषेध अपनी परंपरा में नही है।

श्रील प्रभुपाद के ऐसे कई कथन है जो यह स्पष्ट करते है कि गुरू-शिष्य संबंध शारीरिक निकटता पर निर्भर नहीं करते। (कृपया परिशिष्ट देखे) अत: श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त ऋत्विक प्रणाली का उपयोग उनके इन निर्देशों के अनुरूप है। इन कथनों को पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है कि जी.बी. सी. के कुछ सदस्यों ने कुछ अलग तरह का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है:

"श्रील प्रभुपाद ने हमें सिखाया है कि गुरू-शिष्य परंपरा एक जीवंत संबंध है...। गुरू-शिष्य परंपरा का कानून है कि हमे एक जीवंत गुरू लेना चाहिए, जीवंत मतलब कि शारीरिक उपस्थित।"
(शिवराम स्वामी, इस्कॉन जर्नल, पृष्ठ **31**, जी.बी.सी. **1990**)

उपर्युक्त कथन और निम्नलिखित कथनों मे अंतर देखिये ः

"शारीरिक उपस्थिति महत्त्वपूर्ण नही है।" (श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **6/10/1977**, वृन्दावन)

या

"शारीरिक उपस्थिति अनावश्यक है।" (श्रील प्रभुपाद पत्र, **19/1/1967**)

निश्चित ही, हमें एक बाहय गुरू की आवश्यकता है, क्योंकि प्राकृतिक गुणों के अधिन अवस्था में संपूर्ण रूप से परमात्मा का सहारा नही लिया जा सकता। परन्तु श्रील प्रभुपाद कही नही बताते कि यह शारीरिक गुरू सशरीर उपस्थित भी होना चाहिए।

"अत: हमे वाणी की साहयता लेनी चाहिए, शारीरिक उपस्थिति की नही"।
(चैतन्य चरितामृत, अंतिम शब्द)

श्रील प्रभुपाद ने इसका उदाहरण भी पेश किया था। उन्होंने ऐसे कई शिष्यों को दीक्षा दी जिनसे वे कभी शारीरिक रूप में मिले ही नही। इससे यह तथ्य सर्वथा प्रमाणित हो जाता है कि गुरू से शारीरिक संबंध के बिना भी दीक्षा मिल सकती है। शास्त्रों में या श्रील प्रभुपाद द्वारा दीक्षा और शारीरिक उ पस्थिति के बीच कोई संबंध जोड़ा नही गया है। अत: ऋत्विक प्रणाली का चलन शास्त्र एवं अपने आचार्य के व्यक्तिगत उदाहरण से प्रमाणित सिद्ध होता है।

श्रील प्रभुपाद की किताबों के दीक्षा संबंधी भाग में लिखा है कि दीक्षा पाने की एक ही आवश्यकता है- गुरू की सहमति। यह सहमति पूर्ण रूप से ऋत्विक को सौप दी गयी थी:

"तो बिना मेरी प्रतिक्षा किए, तुम जिसे योग्य समझो। यह (तुम्हारे) विवेक पर निर्भर करेगा।"
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **7/7/1977**, वृन्दावन)

श्रील प्रभुपाद हमें निर्देश देते है कि–

"जहाँ तक दीक्षा के समय का सवाल है, सब गुरू की मर्जी पर निर्भर है...। अगर सदगुरू प्रमाणिक गुरू राजी हो जाते है, तो उसी समय दीक्षा मिल सकती है, उचित समय और स्थिति की प्रतिक्षा किये बिना भी।" (चैतन्य चरितामृत मध्य, **24.331**, भावार्थ)

ऐसा कोई निर्देश नही है कि दीक्षा गुरू और संभवित शिष्य का किसी प्रकार का शारीरिक संपर्क होना चाहिए या अपनी सहमति देने के लिये दीक्षा गुरू की शारीरिक उपस्थिति जरूरी होनी चाहिए। (यहाँ श्रील प्रभुपाद सदगुरू और दीक्षा गुरू को समान बता रहे है।) श्रील प्रभुपाद ने कई बार कहा है कि दीक्षीत होने की एक ही आवश्यकता है– उनके द्वारा दिये हुए नियमों का पालन–

"यह दीक्षा की प्रणाली है। शिष्य सहमति देता है कि आगे से वह कोई पाप कर्म नही करेगा...। वह वचन देता है कि गुरू के आदेशों का निर्वाह करेगा। तब, गुरू उसे अपने संरक्षण में लेता है और उसे आध्यात्मिक मुक्ति के स्तर तक उठा लेता है।"
(चैतन्य चरितामृत मध्य, **24.256**, भावार्थ)

भक्त: "औपचारिक दीक्षा कितनी महत्त्वपूर्ण है?"

श्रील प्रभुपाद: "औपचारिक दीक्षा का मतलब है श्री कृष्ण और उनके प्रतिनिधि के आदेशों का पालन करने का औपचारिकरूप से प्रतिबद्ध लेना। वह औपचारिक दीक्षा है।"

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, **22/2/1973**, ऑकलैड)

श्रील प्रभुपाद: "मेरा शिष्य कौन है? सबसे पहले उसे सारे अनुशासित नियमों का पालन करना होगा।"

शिष्य: "जब तक कोई इनका पालन कर रहा हो, तब वह...।"

श्रील प्रभुपाद: "तब वह बिलकुल ठीक है।"

(श्रील प्रभुपाद, प्रात: भ्रमण, **13/6/1976**, डेट्रोइट)

"जब तक अनुशासन नही है, तब तक शिष्य होने का प्रश्न ही नही उठता। शिष्य उसे कहते है जो अनुशासन का पालन करता है।"

(श्रील प्रभुपाद, प्रात: भ्रमण, **8/3/1976**, मायापुर)

दीक्षा के अर्थ से क्या यह ऐसा निष्कर्ष निकलता है कि गुरू को इसी धरती पर सशरीर उपस्थित रहना होता है?

"दीक्षा एक प्रणाली है जिससे दिव्य ज्ञान प्रकाशित होता है और पाप कर्म के फलों का नाश होता है। एक दक्ष व्यक्ति जिसे शास्त्रों का ज्ञान है इस प्रणाली को दीक्षा कहता है।"

(चैतन्य चरितामृत मध्य, **15.108**, भावार्थ)

(कृपया दीक्षा आकृति देखिए, पृष्ठ **84**)

दीक्षा प्रणाली के अर्थ से ऐसा कुछ इंगित नही होता कि गुरू को शिष्य के साथ इसी धरती पर स्थित होन चाहिए। दूसरी ओर, श्रील प्रभुपाद के उपदेश एवं निजी उदाहरण स्पष्ट प्रमाणित करते है कि दीक्षा विधि के लिये आवश्यक तत्त्व गुरू की सशरीर उपस्थिति के बिना प्रयोग में लाये जा सकता है–

"दिव्य ज्ञान की प्राप्ति में किसि प्राकृतिक अवस्था से व्यवधान नही आ सकता।"

(श्रीमद्–भागवतम्, **7.7.1**, भावार्थ)

"वक्ता की प्रत्यक्ष अनुपस्थिति से दिव्य शब्द की शक्ति में कोई कमी नही आ सकती।"

(श्रीमद्–भागवतम्, **2.9.8**, भावार्थ)

अत: दीक्षा के सभी तत्त्व– दिव्य ज्ञान, मन्त्र प्राप्ति आदि, गुरू की सशरीर उपस्थिति के बिना भी सरलता से सौंपे जा सकता है।

सारांश में, निश्चित रूप से दिखाया जा सकता है कि श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में ऐसा कोई शास्त्रिक

निर्देश नही है जिससे धरती छोडने के उपरान्त गुरू दीक्षा नहीं दे सकता। यह आपत्ति की जाती है कि पूर्व में परंपरा में कोई ऐसा उदाहरण नही मिलता। परन्तु पूर्व के उदाहरणों शास्त्रिक सिद्धांत नहीं है। पूर्व उदाहरण को एक शास्त्रिक सिद्धांत लागू करते वक्त प्रमाण के रूप में पेस किया जा सकता है। परन्तु पूर्व उदाहरण की अनुपस्थिति में शास्त्रिक सिद्धांत बदला नही जा सकता। अपनी परंपरा शास्त्रिक निर्देशों पर आधारित है न कि पूर्व उदाहरणों पर। यही तथ्य इस्कॉन को दूसरे गौडिय वैष्णव संस्थाओं से अलग सिद्ध करती है। भारत में ऐसे कई कट्टरपंथी स्मर्थ ब्राह्मण है जो श्रील प्रभुपाद की निंदा करते है क्योंकि श्रील प्रभुपाद रीति-रिवाजों के साथ नही चले।

शास्त्रिक सिद्धांत और श्रील प्रभुपाद का निजी उदाहरण सिद्ध करते है कि दीक्षा किसी भी तरह से गुरू की शारीरिक उपस्थिति पर निर्भर नहीं करती।

9. "इस निर्देश को लागू करने से एक प्रणाली की स्थापना हो जायेगी जिसका न तो पूर्व में उदाहरण है न ऐतिहासिक आधार। इसलिए इस प्रणाली को नकार दिया जाना चाहिए।"

9 जुलाई के पत्र को उपर्युक्त कारण से नकारा नही जा सकता; क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने कई नए नियम बनाये थे- नाम जप की संख्या 64 से घटाकर 16 करना, विवाह करवाना, महिलाओं कों मंदिर में रहने की इजाजत देना, टेप के द्वारा गायजी मंत्र देना आदि। यहाँ तक कि हमारी परंपरा के आचार्यों का विशिष्ट लक्षण है कि करीब-करीब सभी ने नए संस्कार और रीतियाँ स्थापित की है। एक आचार्य होकर यह उनका अधिकार है। अपितु शास्त्रिक निर्देशों के अनुरूप ही। जैसा पहले बताया गया था, इस ग्रह पर गुरू की सशरीर अनुपस्थिति में ऋत्विक का उपयोग कोई भी शास्त्रिक निर्देशों का उल्लंघन नही करता। श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में सारे जरूरी शास्त्रिक निर्देशों का वर्णन है। उनकी किताबों में ऐसा कही निर्देश नही आता कि दीक्षा के समय गुरू को उसी ग्रह पर रहना होता है। अत: यह कोई नियम नही है। उनके शारीरिक प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक का प्रयोग बाह्य रीति में फर्क हो सकता है। नियम मे नही।

श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा देने हेतु कई नई रीतियों एवं संस्कारों का उपयोग किया (कृपया कोष्टक देखिए, पृष्ठ 44) परन्तु हम उन्हें नकार नही देते। यह तर्क भी दिया जा सकता है कि कुछ रीतियों में बदलाव उन्होंने अपनी पुस्तकों में संबोधित किये थे। यह सत्य है, परन्तु कई ऐसी रीतियाँ भी है जो उन्होंने संबोधित नही की। इसके अलावा, ऋत्विक प्रणाली की अपनी किताबों में सविस्तार विवरण देने की आवश्यकता नही थी; क्योंकि इस प्रणाली का मॉडल उन्होंने व्यवहारिक रूप से कई वर्षो तक लागू किया हुआ था। 9 जुलाई के पत्र से उन्होंने इस प्रणाली को बस अंतिम रूप दिया था कि सशरीर अनुपस्थिति में यह प्रणाली कैसे चलेगी। श्रील प्रभुपाद नें हमें सिखाया था कि आँखे बंद करके रीतियों का पालन नही करना चाहिए:

> **"हमारी एकमात्र रीति है कि किस प्रकार विष्णु को संतृष्ट करना।"**
> (श्रील प्रभुपाद भगवद-गीता प्रवचन, 30/7/1973, लंडन)

"नही। रीति, धर्म, यह सब भौतिक है। यह सब उपाधियाँ है।"
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **13/3/1975**, तेहरान)

अपनी परंपरा के पूर्व आचार्यो ने क्या बिल्कुल श्रील प्रभुपाद जैसे ही आदेश दिये थे या नही ये पूछना यहाँ अप्रासंगिक है। हमारा कर्तव्य सिर्फ अपने आचार्य के आदेश का पालन करना है।

अगर कोई दीक्षा प्रणाली इसलिए नकार दी जानी चाहिए क्योंकि उसका पूर्व में कोई उदाहरण नही मिलता, तो उस तर्क से इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली को नकार देना चाहिए।

ऐसा कभी नही हुआ कि दीक्षा गुरूओं का समूह एक समिति के अधिन हो जो उनकी दीक्षा संबंधित कार्यवाहियों को निलंबित या बर्खास्त कर सकती है। हमारे संप्रदाय में पूर्व में ऐसा कोई दीक्षा आचार्य नही हुए जिसे अपनी पदवी पर दो-तिहाई बहुमत से स्थापित किया गया हो और उसके उपरान्त पाप कर्मो में लिप्त पाए जाने पर गुरू-शिष्य परंपरा से हटा दिया गया हो। हम इन अनियमित प्रचलनों को नकराते है। इसलिए नही कि इसका कोई ऐतिहासिक आधार नही है, परन्तु इसलिए कि ये प्रचलन मूल रूप से श्रील प्रभुपाद के उपदेशों से बिल्कुल अलग है और अंतिम आदेश का सीधा उल्लंघन करता है।

यह तर्क कि ऋत्विक जैसी कोई प्रणाली भी शास्त्रों में नही मिलती है, यहाँ लागू नही होता। कुछ वैदिक नियमों के अनुसार शूद्र और महिलाओं को बाह्मण दीक्षा कभी नही देनी चाहिए:

"शूद्र को दीक्षा नही दी जा सकती...। यह दीक्षा वैदिक नियमों के आधार पर नहीं दी जा रही, क्योंकि योग्य ब्राह्मण मिलना बहुत कठिन है।"
(श्रील प्रभुपाद भगवद्-गीता प्रवचन, **29/3/71**, बम्बई)

अत:, नियमानुसार, श्रील प्रभुपाद द्वारा अपने पाश्चात्य शिष्यों को दीक्षा नही देनी चाहिए थी। इन सबका जन्म न्यूनतम वैदिक वर्ण से भी निचले स्तर पर हुआ था। श्रील प्रभुपाद उच्चस्तरीय शास्त्रिक निर्देशों का पालन कर इन वैदिक नियमों को लाँघ गये। उन्होंने इन निर्देशो को इस तरह लागू किया जैसा पहले किसी ने नही किया था।

"जैसे हरि को सामाजिक नियमों के अधिन नही लाया जा सकता, वैसे ही उनके प्रतिनिधि गुरू को भी नही।" (चैतन्य चरितामृत मध्य, **10.136**, भावार्थ)

"अत: पुरूषोत्तम भगवान एवं ईश्वर पुरी की करूणा वैदिक नियम के अधिन नही आती।"
(चैतन्य चरितामृत मध्य, **10.137**)

महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ऋत्विक प्रणाली पूर्ण रूप से निराली हो सकती है (जहाँ तक हमें मालूम है) परन्तु वह किसी शास्त्रिक निर्देशक का उल्लंघन नही करती। यह श्रील प्रभुपाद की आध्यात्मिक निपुणता ही है कि वे ऐसे शास्त्रिक निर्देशों को समय और स्थिति अनुसार नये और करूणामयी तकों से लागू कर पाए।

शायद हमने अभी तक यह नही जाना है कि श्रील प्रभुपाद कितने अद्वितीय है। ऐसे जगद आचार्य पहले

कोई भी नहीं हुए। पहले किसी आचार्य ने यह नही कहा था कि उनकी पुस्तके भविष्य के दस हजारो वर्षो तक कानून की पुस्तकें होगी। इस्कॉन जैसी संस्था पहले कोई नही हुई। हम इस बात पर आश्चर्य क्यो व्यक्त करे कि इस तरह के अद्वितीय व्यक्ति ने एक अलग तरह की दीक्षा प्रणाली स्थापित की?

10. "क्योंकि ऋत्विक प्रणाली का 9 जुलाई 1977 के पूर्व कोई स्पष्ट निर्देश नहीं था, अत: इसको श्रील प्रभुपाद के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त चालू रखने का उनका उद्देश नही था।"

यह आपत्ति इस दृष्टिकोण पर आधारित है कि श्रील प्रभुपाद आंदोलन पर कोई नई चीज नही उछालेंगे। यह एक निरर्थक आपत्ति है; क्योंकि इसका मतलब यह हुआ कि गुरू के किसी भी आदेश को नकार देना चाहिए अगर वह आदेश नया हो या पूर्व आदेशों से जरा भी भिन्न हो। इससे यह तात्पर्य निकलता है कि अपने अंतिम महीनों में श्रील प्रभुपाद को अपनी संस्था संबंधित कोई भी महत्त्वपूर्ण आदेश नही जारी कारना चाहिए थे जब तक कि हर कोई उन आदेशों से पहले से ही वाकिफ न हो।

जैसा हम पहले समझा चुके है, ऋत्विक प्रणाली नई नही है। 9 जुलाई के पत्र के पूर्व भी आंदोलन में दीक्षा मूल रूप से प्रतिनिधियों द्वारा ही दी गई थी। श्रील प्रभुपाद इस्कॉन के दीक्षा गुरू थे, और ज्यादातर दीक्षा संस्कार, खासतौर से अंतिम वर्षो में, टेम्पल प्रेसिडेन्ट या कोई और प्रतिनिधि या पुजारी द्वारा किये जाते थे।

9 जुलाई 1977 के पत्र के बाद जो भिन्न विधि उभर आयी वह ये थी के नए शिष्यों को स्वीकार श्रील प्रभुपाद के साथ परामर्श किये बिना प्रतिनिधियों द्वारा सीधा ही होगा। जो पत्र अब तक नए शिष्यों को भेजा जाता था, उस पर श्रील प्रभुपाद के हस्ताक्षर नही होंगे। उनके नामों का चयन ऋत्विक द्वारा होगा। हा, यह प्रणाली अब एक अपरिचित शब्द से जुड गई- ऋत्विक।

एक प्रतिनिधि के माध्यम से एक प्रामाणिक आचार्य द्वारा दीक्षा लेना, यह अनुभव कई हजारों शिष्यों को हुआ था। 9 जुलाई का पत्र 'ऋत्विक' का मतलब परिभाषित करता है –'आचार्य का प्रतिनिधि'। स्पष्टत: प्रतिनिधियों के माध्यम से दीक्षा देने कि प्रणाली बिल्कुल भी 'नई' नही थी। इस तरह की प्रणाली का संस्था के कुछ विस्तार उपरान्त ही श्रील प्रभुपाद ने उपयोग करना प्रारंभ कर लिया था। 9 जुलाई का पत्र सिर्फ इसको बरकरार रखता था।

यह सुनकर भारी धक्का क्यों लगा कि यह प्रणाली 14 नवम्बर 1977 के उपरान्त भी लागू होनी थी?

'ऋत्विक' शब्द कइयों को अपरिचित लगा होगा, पर यह नया नही था। यह शब्द और इसके साधित शब्दों का 31 बार श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में उपयोग किया गया है। 'नया' यह था कि जो प्रणाली पिछले कई वर्षो से चल रही थी, उसको अब भविष्य में जारी रखने हेतु संशोधन करके लिखित रूप में प्रस्तुत किया गया। यह आश्चर्य की बात नही है, क्योंकि श्रील प्रभुपाद उस समय अपने आंदोलन को भविष्य में चलाने हेतु कई लिखित दस्तावेज जारी कर रहे थे। यह प्रबन्ध तो ऐसी प्रणाली का

अनुमोदन था जो सारे भक्त सामान्य समझने लगे थे।

'नया' तो 'ऋत्विको' द्वारा श्रील प्रभुपाद के भौतिक एवं आध्यात्मिक शुद्ध उत्तराधिकारी रूप मे रूपान्तरित होना था। इस ईजाद से इतना गंभीर आघात लगा कि कई सेंकडों शिष्यों आंदोलन छोड गये। हजारों ने बाद में छोड दिया।

सारांश:

हमने यहाँ दर्शाया है कि श्रील प्रभुपाद के सशरीर प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक प्रणाली को रोकने के लिए कोई स्पष्ट प्रमाण नही है। न ही ऋत्विक से दीक्षा गुरू में रूपान्तरित होने का प्रमाण है। यानी संशोधन (अ) एवं (ब) गलत है। अगर संशोधन (अ) एवं (ब) की सहमती का कोई बहुत प्रभावशाली अप्रत्यक्ष प्रमाण हो तो भी प्रत्यक्ष अग्रणी होता है। वैसे हम दिखा चुके है कि कोई अप्रत्यक्ष प्रमाण भी नही है। अत:-

1. एक आदेश प्रेषित हुआ जिसका समस्त आंदोलन को पालन करना था - **प्रत्यक्ष प्रमाण।**
2. स्वयं इस आदेश और संबंधित निर्देशों को परखने से ऋत्विक प्रणाली का ही प्रमाण मिलता है - **प्रत्यक्ष प्रमाण।**
3. ऐसा कोई **अप्रत्यक्ष प्रमाण नही है** कि श्रील प्रभुपाद ने अपने सशरीर प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक प्रणाली को रोकने के लिए निर्देशक दिये थे।
4. इस अंतिम आदेश का शास्त्रों, दूसरे निर्देश, आदेश से संबंधित विशेष स्थिति या पृष्ठ भूमि, आदेश का प्रसंग या और कुछ में **ऐसा प्रमाण नही है** जिससे श्रील प्रभुपाद के सशरीर प्रस्थान उपरान्त ऋत्विक प्रणाली को रोक देना चाहिए। आश्चर्य तो यह है कि आपत्तियों को परखने से ऋत्विक प्रणाली के ही अनुमोदन का अप्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है।

उपर्युक्त विश्लेषण की दृष्टि से, हम विनम्रता से कहना चाहेंगे कि श्रील प्रभुपाद के दीक्षा संबंधी अंतिम आदेश **14** नवम्बर **1977** को अवरूद्ध करना कम से कम एक मनगढ़त और गैरकानूनी कार्य तो है ही। इन गलत संशोधनों (अ) एवं (ब), जो इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली का आधार है, के अनुमोदन के लिए हमें कोई प्रमाण नही मिलता। श्रील प्रभुपाद के इस प्राथमिक निर्देश का पालन करना उनके समस्त शिष्यों, अनुयायियों और सेवकों का प्रथम कर्तव्य है।

इस काम मे सहायता देने के लिए अब हम **28** मई के वार्तालाप को परखेंगे। साथ में हम उन संबंधित आपत्तियों को भी देखेंगे जो भ्रम पैदा करती है।

'अपॉइंटमेंट टेप' (नियुक्ति का टेप)

जी.आई.आई. में जी.बी.सी. के अनुसार 9 जुलाई के आदेश में दोनो संशोधन (अ) एवं (ब) करने का एकमात्र कारण है 28 मई 1977 को वृन्दावन में हुआ वार्तालाप। वे संशोधन है:

संशोधन (अ): श्रील प्रभुपाद द्वारा इन प्रतिनिधियों या ऋत्विक की नियुक्ति केवल तत्कालीन थी और श्रील प्रभुपाद के देह त्यागने पर इसका अंत होना था।

संशोधन (ब): अपने प्रतिनिधित्व या ऋत्विक का दायित्व त्याग कर ये ऋत्विक अपने आप दीक्षा गुरू बन जाएँगे। दीक्षा देकर वे लोगों को अपना शिष्य बनाएँगे, श्रील प्रभुपाद का नही।

अत: इस भाग में 28 मई को हुए वार्तालाप को बारीकी से देखा जायेगा कि क्या इस वार्तालाप से दोनों संशोधन करने का पर्याप्त कारण बनता है।

जी.बी.सी. का पूर्ण प्रमाण केवल यही वार्तालाप है। तो भी आश्चर्य की बात तो यह है कि इस एक वार्तालाप की चार प्रतिलिपियाँ है। यह निम्नलिखित चार लेखों मे सम्मिलित है:

1983: श्रील प्रभुपाद–लीलामृत, विभाग 6 (सत्स्वरूप दास गोस्वामी, बी.बी.टी.)
1985: अण्डर माई आर्डर (रविन्द्र स्वरूप दास)
1990: इस्कॉन जर्नल (जी.बी.सी.)
1995: गुरूस एण्ड इनिशिएशन इन इस्कॉन (जी.बी.सी.)

एक ही वार्तालाप की चार अलग–अलग प्रतिलिपियों से इसकी प्रमाणिकता पर प्रश्न खडे हो जाते है, जैसे– ठीक प्रतिलिपि कौनसी है? अलग–अलग प्रतिलिपियों क्यों है? क्या ये प्रतिलिपियाँ कई वार्तालापों को सम्मिलित कर बनाई गई है? क्या यह टेप ही कई वार्तालापों को जोड कर बनाया हुआ है? क्या इस वार्तालाप के अलग–अलग टेप जारी किये गये है? कौनसा सही है? इन सब प्रश्नों से इस वार्तालाप की प्रमाणिकता पर ही शक हो जाता है? हम कैसे 9 जुलाई पत्र के स्पष्ट हस्ताक्षरयुक्त आदेश को इस संदेहास्पद प्रमाण से बदल सकते है?

तो भी इस वार्तालाप की चारों प्रतिलिपियों को सम्मिलित कर हम इस प्रमाण को परखते है:

सत्स्वरूप दास गोस्वामीः अब हमारा अगला प्रश्न भविष्य की दीक्षाओं पर है, विशेषतया तब जब आप हमारे बीच नही रहेंगे। हम जानना चाहते है कि पहली और दूसरी दीक्षाओं का किस प्रकार प्रबन्ध किया जायेगा।

श्रील प्रभुपादः हाँ। मै तुममे से कुछ को अनमोदित करूँगा। जब यह खत्म हो जायेगा तब मै तुममे से कुछ को ऑफिशिएटिंग आचार्य के कार्य के लिए अनुमोदित करूँगा।

तमाल कृष्ण गोस्वामीः क्या उसे ऋत्विक आचार्य कहा जायेगा?

श्रील प्रभुपादः ऋत्विक। हाँ।

सत्स्वरूप दास गोस्वामीः (फिर) उनका क्या संबंध होता है जो व्यक्ति दीक्षा देता है और...

श्रील प्रभुपादः वह गुरू है। वह गुरू है ।

सत्स्वरूप दास गोस्वामीः पर वह आपकी ओर से करता है।

श्रील प्रभुपादः हाँ। यह औपचारिकता है। क्योंकि मेरी उपस्थिति मे किसी को भी गुरू नही बनना चाहिए, इसलिए मेरी ओर से। मेरे आदेश पर, "अमार आज्ञाय गुरू हना", (वह) होगा वस्तुस्थिति में गुरू। किन्तु मेरे आदेश पर।

सत्स्वरूप दास गोस्वामीः तो वे (वह) सब भी आपके ही शिष्य माने जायेंगे?

श्रील प्रभुपादः हाँ। वे शिष्य है, (पर) (क्यों) माने...। कौन?

तमाल कृष्ण गोस्वामीः नही। यह पूछ रहे है कि यह ऋत्विक आचार्यो, वे औपचारिकतापूर्वक दीक्षा दे रहे है...। (उनके) उन व्यक्तियों को जिन्हे ये दीक्षा देंगे, वे किनके शिष्य होंगे?

श्रील प्रभुपादः वे उसके शिष्य होंगे। (जो दीक्षा दे रहा है उसके शिष्य।)

तमाल कृष्ण गोस्वामीः वे उसके शिष्य होंगे।

श्रील प्रभुपादः जो दीक्षा दे रहा है...। (उसके) (वह) परम-शिष्य।

सत्स्वरूप दास गोस्वामीः (ठिक है)

तमाल कृष्ण गोस्वामीः (सब समझ गये)

तमाल कृष्ण गोस्वामीः (अब आगे चलते है)

सत्स्वरूप दास गोस्वामीः अब हमारा अगला प्रश्न है...।

श्रील प्रभुपादः जब मै आदेश दूँ 'तूम गुरू बनो ', वह सामान्य गुरू बनेगा। बस। वह मेरे शिष्य के शिष्य बनेगा। (बस)

जैसा हम पहले बता चुके है, न तो 9 जुलाई का पत्र और न ही दूसरा कोई दस्तावेज इस वार्तालाप का उल्लेख करता है। यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है क्योंकि जी.आई.आई. मे बतलाया गया है कि 9 जुलाई का पत्र समजझने के लिए यह संक्षिप्त वार्तालाप अति आवश्यक है।

विश्व भर मे फैले अपने आंदोलन को श्रील प्रभुपाद इस तरह से आदेश नही देते थे। यानी पुराने वार्तालापों को ढूँढ़ कर अपूर्ण लिखित निर्देशों का समजझना।

हम जानते है कि यह विषय 10 हजार साल तक चलने वाले संकीर्तन आंदोलन में दीक्षा प्रदान करने की प्रणाली जैसा महत्त्वपूर्ण विषय है। साथ में श्रील प्रभुपाद जानते थे कि इसी विषय पर गौड़िय मठ टूटा था। इन सब तथ्यों को ध्यान मे रखकर विश्वास नही होता कि वे इस विषय को इस अभिज्ञता से संभालेंगे। परन्तु वर्तमान की जी.बी.सी. धारणा के अनुसार श्रील प्रभुपाद ने यही किया था। चलिए अब हम वार्तालाप को पंक्ति-दर-पंक्ति देखे और फिर उन पंक्तियों को भी देखे जो जी.बी.सी. के अनुसार 9 जुलाई के आदेश को बदलती है।

पंक्ति 1-3: यहाँ सत्स्वरूप दास गोस्वामी ने श्रील प्रभुपाद से एक विशेष प्रश्न पूछा कि भविष्य में दीक्षा कैसे मिलेगी - **विशेषतया जब आप हमारे बीच नही रहेंगे**। जो भी उत्तर श्रील प्रभुपाद देंगे वह इस विषय से ही संबंधित होगा, क्योंकि सत्स्वरूप उसी समय परिधि के बारे मे पूछ रहे है यानी '**जब आप हमारे बीच नही रहेंगे**'।

पंक्ति 4-7: यहाँ श्रील प्रभुपाद, सत्स्वरूप दास गोस्वामी के प्रश्न का उत्तर दे रहे है। उन्होंने कहा कि वे कुछ शिष्यों को 'ऑफिशिएटिंग आचार्य' या 'ऋत्विक' नियुक्त करेंगे। यह देने के बाद वे चुप हो गये।

इस विषय पर वे और कुछ नही बोले। नही उन्होंने इस उत्तर को और समझाना चाहा। इसका अर्थ यह हुआ कि यही उनका पूर्ण उत्तर था। इस धारणा के दो विकल्प हो सकते है-

1) श्रील प्रभुपाद ने जानबुझकर इस प्रश्न का गलत उत्तर दिया,

2) या उन्होंने सत्स्वरूप दास गोस्वामी का प्रश्न ठीक से नही सुना और यह समझ बैठे कि वे पूछ रहे है कि अभी जब वे धरती पर है तब क्या करना है।

श्रील प्रभुपाद का कोई भी शिष्य विकल्प 1 को नही मानेगा। विकल्प 2 अगर ठीक होता तो यह वार्तालाप 9 जुलाई के पत्र को बदल नही सकता। क्योंकि तब इस वार्तालाप में भविष्य की दीक्षाओं के लिए कुछ नही कहा गया होगा।

कई बार तर्क दिया जाता है कि पूर्ण उत्तर अलग-अलग भागों में बाकी के वार्तालाप में उभर कर आयेगा। इस तर्क के साथ मुश्किल यह है कि श्रील प्रभुपाद तब ही ठीक उत्तर दे पायेंगे अगर:

- किसी ने और प्रश्न पुछा।
- भाग्यवश उन्होंने सही प्रश्न पूछ लिए।

इस तरह उत्तर देने का यह एक विलक्षण अंदाज होगा जो श्रील प्रभुपाद का स्वभाव नही था। विशेषतया अपने विश्वव्यापी आंदोलन को निर्देश देते वक्त तो नही। जी.बी.सी. के अनुसार, जो आदेश केवल चार महीने चलना था उसे अपने सम्पूर्ण आंदोलन को पत्र द्वारा आदेश जारी करने के लिए श्रील प्रभुपाद ने इतनी मुश्किलों से किया वही जो निर्देश दस हजार वर्ष चलना था उसे इस प्रकार अस्पष्ट रूप से एक निजी वार्तालाप में जारी कर दीया।

इस तरह स्पष्ट हो जाता है कि इस वार्तालाप से संशोधन (अ) एवं (ब) नही किये जा सकते। श्रील प्रभुपाद से पूछा गया कि दीक्षा कैसे दी जायेगी, विशेषतया आपके जाने के उपरान्त। तो वे उत्तर देते है कि वे ऋत्विक मनोनीत करेंगे। यह उत्तर जी.बी.सी. के प्रस्तावित संशोधनों का खंडन करता है और इस तथ्य को और मजबूती देता है कि 9 जुलाई का आदेश 'इस समय से' लागू होना था। आगे पढ़ते है:

पंक्ति 8–9: यहाँ सत्स्वरूप दास गोस्वामी पूछते है कि दीक्षा देने वाले का क्या संबंध है। सत्स्वरूप दास गोस्वामी के प्रश्न को पूरा करने से पहले ही श्रील प्रभुपाद तत्काल उत्तर देते है, 'वह गुरू है'। परिभाषा के अनुसार, क्योंकि ऋत्विक एक गुरू हो ही नही सकते, अत: श्रील प्रभुपाद जो असल में दीक्षा दे रहे है यानी वे खुद को ही दीक्षा पाने वालों का 'गुरू' बता रहे है। यह 9 जुलाई के पत्र से स्पष्ट हो जाता है जहाँ तीन बार कहा गया है कि दीक्षा पाने वाले श्रील प्रभुपाद के शिष्य होंगे।

कई बार यह विचित्र तर्क दिया जाता है कि श्रील प्रभुपाद कहते है, 'वह गुरू है' वे ऋत्विक के बारे में कह रहे है। यह मूक एक तर्क ही है क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने कुछ ही समय पहले ऋत्विक की परिभाषा दी है –'ऑफिशिएटिंग आचार्य' यानी किसी प्रकार का संस्कार करने वाला पुजारी। 9 जुलाई के पत्र में श्रील प्रभुपाद स्पष्टतया बतलाते है कि दीक्षा संस्कार ये पुजारी करेंगे। वे श्रील प्रभुपाद के नए शिष्यों को आध्यात्मिक नाम देंगे और गायत्री दीक्षा में यज्ञोपवीत पर जाप करेंगे– यह सब श्रील प्रभुपाद की ओर से। बस। यहाँ कही भी दीक्षा गुरू बनकर अपने शिष्य बनाने के बारे में नही बोला गया है। पत्र में ऋत्विक की परिभाषा– 'आचार्य के प्रतिनिधि' दे रखी है। उन्हे आचार्य की ओर से कार्य करना था, न कि खुद आचार्य बन जाना था। अगर वे गुरू ही थे, तो शुरू से ही श्रील प्रभुपाद ने उन्हे गुरू क्यों नही बोला? क्यो 'ऋत्विक' बोलकर भ्रम पैदा किया?

श्रील प्रभुपाद जब भी अपने आचार्य होने संबंधित आध्यात्मिक एवं प्रबंधन विषयों की चर्चा करते थे तब वे तृतीय व्यक्ति के व्यवहार में बोलते थे। यहाँ इसी तरह हुआ, क्योंकि सत्स्वरूप दास गोस्वामी ने अपना प्रश्न उसी अंदाज में पूछा था।

अत: इस वार्तालाप से तभी कुछ मतलब निकलता है जब श्रील प्रभुपाद ही 'गुरू' है, जो नये शिष्यों को ऋत्विक की ओर से दीक्षा दे रहे है।

श्रील प्रभुपाद का उत्तर जहाँ पूर्णयता स्पष्ट है वहाँ प्रश्न वाले के दिमाग में लगता है थोड़ा भ्रम था। यहाँ **पंक्ति 10** में सत्स्वरूप दास गोस्वामी पूछ रहे है– **"पर वह आपकी ओर से करता है।"** सत्स्वरूप दास गोस्वामी जिस 'वह' कि बात करते है उनको 'ऋत्विक' समझ रहे है। किन्तु श्रील प्रभुपाद 'वह' का मतलब खुद को तृतीय व्यक्ति के रूप में संबोधित कर रहे है। ऐसा इसलिए क्योंकि केवल श्रील

प्रभुपाद ही समस्त ऋत्विक प्रणाली में दीक्षा देने वाले है। अपने शिष्यों के उपर्युक्त भ्रम के वाद भी अगले उत्तर में सत्स्वरूप दास गोस्वामी के अंदाज से श्रील प्रभुपाद भावि ऋत्विकों कि स्थिति वतलाते है।

पंक्ति 11–13: जी.आई.आई. के अनुसार यह संशोधन (अ) का कारण है। यह समझने से पहले कि ये पंक्तियाँ कैसे इस संशोधन का प्रमाण दे सकती है, हमे पंक्ति 1 से 7 का विश्लेषण फिर से याद कर लेना चाहिए।

अगर **पंक्ति 11–13** संशोधन (अ) का प्रमाण है तो ये **पंक्ति 1–7** के विपरित है जहाँ श्रील प्रभुपाद ने पहले ही वता दिया था कि विशेषतया उनके प्रस्थान के उपरान्त ऋत्विक मनोनीत किये जायेंगे। इसलिए अगर **पंक्ति 11–13** द्वारा संशोधन (अ) प्रामाणिक हो जाता है तो इसका मतलव यह होगा कि श्रील प्रभुपाद खुद अपने कथन का खंडन कर रहे है। विपरीतात्मक कथनों से यह वार्तालाप एक प्रमाण के रूप में वेकार हो जाता है। अत: केवल 9 जुलाई का पत्र ही भविष्य की दीक्षा प्रणाली लागू करने का प्रमाण रह जाता है।

चलो देखते है कि वास्तव में ऐसा हुआ था। याद रहे कि हम ऐसे कथन की खोज में है कि श्रील प्रभुपाद के प्रस्थान पर ऋत्विक अपनी फर्ज वंद कर दे। दूसरे शब्दोंमें कहे तो ऋत्विक अपना कार्य सिर्फ उनकी उपस्थितिमें ही करे।

11–13 पंक्ति को एक वार फिर पढ़ने से इतना तो ज्ञात हो जाता है कि अपनी उपस्थिति में ऋत्विक को कार्य करना ही है, क्योंकि उनकी उपस्थिति में वे कभी गुरू नही वन सकते। यहाँ भी श्रील प्रभुपाद वही नियम दोहरा रहे है जो वे महत्त्वकांक्षी शिष्यों के सम्मुख दोहराते थे कि गुरू की उपस्थिति में उनकी ओर से ही कार्य करना चाहिए। परन्तु श्रील प्रभुपाद ऐसा कुछ नही कहते कि उनके सशरीर प्रस्थान उपरान्त 'उनकी ओर से' कार्य करना रोक देना है। वे यह भी नही कहते कि 'उनकी ओर से' कार्य करना केवल उनकी सशरीर उपस्थिति में ही होगा। कहीं उन्होंने अपनी सशरीर उपस्थिति को 'उनकी ओर से' कार्य करने से विल्कुल नही जोडा है। अपितु उनके शिष्यों को 'गुरू नही वनने' से रोकने का कारण वताया गया है। यह 'गुरू नही वनना' ही ऋत्विक के रूप में कार्य करने से जोडा गया है।

दूसरे शब्दों में, इस वार्तालाप के समये वे दीक्षा गुरू नही वन सकते थे इसका एक कारण श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति थी। परन्तु यह एकमात्र कारण नही था। दूसरे कारण अगली पंक्तियों से स्पष्ट हो जायेंगे।

12 वी पंक्ति में श्रील प्रभुपाद कहते है – 'मेरे आदेश पर'। **13 वी पंक्ति** में फिर इसको दोहराते है– 'किन्तु मेरे आदेश पर' और **25 वी पंक्ति** में भी– 'जव मै आदेश दूँ'। ये स्पष्ट है कि यह आदेश दिया गया नही है, वरना श्रील प्रभुपाद क्यों कहते– 'जव मै आदेश दूँ?' जी.वी.सी. के अनुसार यह ही वस्तुत: आदेश अगर होता तो श्रील प्रभुपाद ने निश्चित ही कुछ ऐसा कहना चाहिए था कि 'अव मै तुम्हे आदेश देता हुँ कि जैसे ही मै नही रहुँ तो तुम ऋत्विक छोड खुद दीक्षा गुरू वनना'। ऐसा कथन से सचमुच ही वर्तमान जी.वी.सी. स्थान एवं म.आ. स. सि. प्रथा को विश्वसनीयता मिलती। परन्तु जैसा दिखता है, इस तरह का कोई भी कथन 28 मई के वार्तालाप में नही मिलता।

ओर दलील है कि यहाँ "आमार आज्ञाय" श्लोक का प्रयोग करने का मतलब है कि गुरू बनने का आदेश मिल चूका था। क्योंकि भगवान चैतन्य का यह आदेश श्रील प्रभुपाद ने कई बार दोहराया था। लेकिन, जैसे हमने देखा, "आमार आज्ञाय" आदेश केवल शिक्षा गुरू के संदर्भ में है, हम जानते है कि दीक्षा गुरू बनने का आदेश अभी तक नही मिला है क्योंकि श्रील प्रभुपाद कहते है– 'जब मै आदेश दूँ'। इसलिए यहाँ श्रील प्रभुपाद द्वारा किया गया इस श्लोक का प्रयोग इसी विचारधारा को आगे बधाता है कि किसी भी तरह का गुरू–पद लेने से पहले एक आदेश अनिवार्य है।

अत: **पंक्ति 11–13** में ऐसा कुछ नही है जिससे **पंक्ति 1–7** में श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये स्पष्ट कथन को बदला जाये, **पंक्ति 1–7** का मतलब अब भी स्पष्ट दिखता है। और 9 जुलाई का आदेश अब भी बदला नही जा सकता है।

पंक्ति 11–13 से जो स्पष्ट होता है वह यह कि ऋत्विक प्रणाली श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में चलनी थी। पर ऐसा कही नही लिखा कि केवल सशरीर उपस्थित में ही चलनी चाहिए। 9 जुलाई पत्र में 'इस समय से' शब्द द्वारा पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि ऋत्विक प्रणाली आगे भी चलती रहनी थी। 'इस समय से' का मतलब होता है इस समय से आगे। श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थित या अनुपस्थिति से कुछ फर्क नही पड़ता। चलो आगे पढ़ते है।

पंक्ति 14–15: आश्चर्यजनक रूप से, अब सत्स्वरूप दास गोस्वामी द्वीतिय पुरूष का प्रयोग करके एक प्रश्न पूछते है– '**तो वे सब भी आपके ही शिष्य माने जायेंगे**?' श्रील प्रभुपाद उत्तर देते है, '**हाँ वे शिष्य है...**।' इस प्रकार वे एक बार फिर भविष्य के शिष्यों को अपना बताते है। वैसे यह स्पष्ट नही है कि श्रील प्रभुपाद आगे क्या कहने वाले थे, तो भी उत्तर का पहला भाग स्पष्ट है जिसमे उनसे एक सीधा प्रश्न पूछा गया था और उन्होंने उत्तर दिया, 'हाँ'।

अगर जी.बी.सी. संशोधन (अ) एवं (ब) को प्रमाणित बताना चाहती थी तो श्रील प्रभुपाद को कुछ इस तरह से उत्तर देना था– 'नही, वे मेरे शिष्य नही है।' जो श्रील प्रभुपाद आगे कहना चाह रहे थे, वह महत्त्वपूर्ण नही है, क्योंकि अब किसी को मालूम नही चल सकता। हम केवल इतना जानते है कि जब उनसे पूछा गया कि क्या भावि शिष्य आपके ही शिष्य होंगे तो उन्होंने उत्तर दिया, 'हाँ'। ये संशोधन (अ) एवं (ब) के प्रति अच्छे संकेत नही है।

पंक्ति 16–18: तमाल कृष्ण गोस्वामी को लगा कि कुछ भ्रम हो रहा है अत: उन्होंने श्रील प्रभुपाद को बीच में रोका। वे सत्स्वरूप दास गोस्वामी के प्रश्न को और स्पष्ट करवाना चाह रहे थे। उन्होंने पूछा कि ऋत्विक जब दीक्षा देते है तब शिष्य किनके शिष्य होंगे। पुन: श्रील प्रभुपाद कहते है, 'वे उसके शिष्य होंगे'। कृपया ध्यान दीजिए कि प्रश्न तृतीय पुरूष में था अत: श्रील प्रभुपाद ने भी अपना उत्तर तृतीय पुरूष में ही दिया। अत: यहाँ भी वे अपने आपको ही संबोधित कर रहे है क्योंकि ऋत्विक अपनी परिभाषानुसार खुद के शिष्य नही बना सकते। इसका प्रमाण यह है कि श्रील प्रभुपाद एकवचन में उत्तर दे रहे है ('उसके शिष्य...। जो दीक्षा दे रहा है') जबकि प्रश्न बहुवचन में था ('यह ऋत्विक आचार्यों')।

कई बार यह भी तर्क दिया जाता है कि तमाल कृष्ण गोस्वामी ने इस तरह से प्रश्न पूछा जिससे यह

स्पष्ट हो गया कि भविष्य मे यह ऋत्विक दीक्षा गुरू बन जायेंगे। यह तर्क अनुसार, जब श्रील प्रभुपाद, जिनको अब शायद तमाल कृष्ण गोस्वामी के मन के साथ कुछ जादूइ-तालमेल हो गया, उत्तर देते है कि भविष्य में दीक्षा प्राप्त करने वाले "उसके शिष्य" होंगे, इसका मतलब है कि वे ऋत्विक के शिष्य होंगे, जो अब ऋत्विक न रहे कर दीक्षा गुरू बन गये। यह तरंगी "मन का तालमेल" असंभव एवं अत्यधिक काल्पनिक होने के उपरांत इस तर्क के साथ एक और भी समस्या है:

अब तक श्रील प्रभुपाद ने ऐसा नही कहा है कि ऋत्विक, जिनकी नियुक्ति उनको अभी करनी है, अपना ऋत्विक-कार्य के उपरांत और भी कोइ क्षमता में कार्य करेंगे। तो किस कारण तमाल कृष्ण गोस्वामी ने ऐसा मान लिया कि उनका दरजा बदल ने वाला था?

पंक्ति 19-20: तमाल कृष्ण गोस्वामी श्रील प्रभुपाद का उत्तर फिर से दोहराते है और श्रील प्रभुपाद आगे कहते है, 'जो दीक्षा दे रहा है... उसके परम-शिष्य'। हमने 'वह परम-शिष्य' कि बजाए टेप में दिया गया 'उसके परम-शिष्य' पसंद किया है; क्योंकि यह वाक्य हमारे पास टेप कि जो नकल है उससे काफी मिलता-जुलता है, और वार्तालाप के अर्थ के साथ बिलकुल सुसंगत है। (अन्यथा जो व्यक्ति दीक्षा दे रहे है वही साथ-साथ परम-शिष्य भी बन जायेंगा ! - 'जो दीक्षा दे रहा है... वह परम-शिष्य है।')

यह तर्क दिया जाता है कि यहाँ श्रील प्रभुपाद तृतीय पुरूष में खुद को नही बल्के ऋत्विक को संबोधित कर रहे थे। इसलिए हम **पंक्ति 19-20** में 'उसके' को 'ऋत्विक' से प्रतिस्थापित करके देखते है:

तमाल: "वे उनके शिष्य होंगे?"
श्रील प्रभुपाद: "वे (ऋत्विक) के शिष्य होंगे ।"
तमाल: "वे (ऋत्विक) के शिष्य होंगे ।"
श्रील प्रभुपाद: "(ऋत्विक) दीक्षा दे रहा है...(ऋत्विक) के परम-शिष्य।"

ऋत्विक की परिभाषा होती है- 'पुजारी', जिनकी भूमिका सिर्फ प्रतिनिधि के रूप में है। अत: पाठक को यह स्व-सिद्ध होना चाहिए कि **पंक्ति 19-20** का उपयुक्त अर्थघटन अर्थहीन है।

ऐसा आरोप लगाया जा सकता है कि तृतीय पुरूष में श्रील प्रभुपाद अपनी खुद की ही बात कर रहे है ऐसा कह कर हम कुछ तरीके से श्रील प्रभुपाद के शब्दों को "मरोड" रहे है। लेकिन, हमे लगता है कि हमारा अर्थघटन श्रील प्रभुपाद द्वारा ऋत्विक को दिये गये कार्य के साथ सुसंगत है। यह वार्तालाप के अर्थघटन के संदर्भ में केवल दो विकल्प शक्य लग रहे है:

1) भविष्य में होंने वाले नये शिष्यों ऋत्विक पुजारीयों के थे, जो व्याख्या के अनुसार दीक्षा गुरू नही है परंतु कार्यकारी है जो प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने के उदेश्य से नियुक्त किये गए है।

2) भविष्य में होंने वाले नये शिष्यों दीक्षा गुरू श्रील प्रभुपाद के थे।

विकल्प 1) निर्रथक है। इसलिए हमने तर्कसंगत विकल्प 2) को पसंद किया, और इसके अनुसार टेप का अर्थघटन किया।

पंक्ति 25–26: श्रील प्रभुपाद इस वार्तालाप के अंत में फिर कहते है कि उनके आदेश के उपरान्त ही कोई गुरू है। तब नये शिष्य 'मेरे शिष्य के शिष्य' बनेगा।

इस 'शिष्य के शिष्य' को बहुत उछाला गया है। कई लोग इसको प्रमाण मानते है कि यहाँ श्रील प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को दीक्षा गुरू बनने का आदेश दे दिया। पर इस शब्द के पहले का भाग स्पष्ट दर्शाता है कि श्रील प्रभुपाद यहाँ सिर्फ एक नियम बता रहे है कि 'जब' मै आदेश दूँ तब कोई सामान्य गुरू बन सकता है। तब उसका शिष्य उनका परम-शिष्य हो सकता है। यह सब स्पष्ट है। पर असल में गुरू बनने का आदेश कहाँ? निश्चित रूप से **25–26 पंक्तियों** मे नही है और न ही संपूर्ण वार्तालाप में।

असल में 28 मई का वार्तालाप किसी को भी कुछ भी बनने का कोई भी आदेश नही दे रहा है। यहाँ श्रील प्रभुपाद सिर्फ यह बता रहे है कि भविष्य में वे अपने कुछ शिष्यों को ऋत्विक के रूप में नियुक्त करेंगे। गुरू-शिष्य संबंध के जो प्रश्न वार्तालाप के मध्य में पूछे जा रहे थे वे केवल एक आध्यात्मिक नियम से संबंधित थे; न कि व्यावहारिक रूप से क्या होगा। अत: वे बतलाते है कि अगर वे गुरू बनने का आदेश देते है तो क्या होगा। इसके उपरान्त 7 जुलाई को प्रथम बार उन्होंने कोई आदेश जारी किया। (कृपया परिशिष्ट देखिए, पृष्ठ 120) वह था 'ऋत्विक' बनने का। जिसे 9 जुलाई के हस्ताक्षरयुक्त पत्र से औपचारिक रूप दिया गया। और जैसा इस पत्र को देखकर साफ समझ आ जाता है, यह ग्यारह ऋत्विक कभी भी दीक्षा गुरू नही बन सकते थे और न ही ऋत्विक प्रणाली कभी रोक दी जानी थी।

28 मई के हमारे विस्तृत विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि जी.बी.सी. यहाँ सिर्फ एक टेढा बेहूदा तर्क दे रही है:

9 जुलाई के पत्र के संशोधन (अ) एवं (ब) के प्रमाण स्वरूप 28 मई के वार्तालाप को प्रस्तुत किया जाता है कि 'आदेश' यहाँ है। परन्तु 28 मई के वार्तालाप को पढने से स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ 'आदेश' नही दिया जा रहा, अपितु 'जब आदेश दिया जायेगा तब क्या होगा' का ब्यौरा है। ऐसा कैसे कह सकते है कि यह 'जब मै आदेश दूँ' वह 'आदेश' ही था जो वास्तव में 7 एवं 9 जुलाई को प्रस्थापित किया गया; क्योंकि यह 'आदेश' पूरीतरह से ऋत्विको के निर्माण का था और यही तो 'आदेश' है जिसमें जी.बी.सी. को उनके संशोधन (अ) एवं (ब) के समर्थन में बदलाव करना आवश्यक लगा?

दुर्भाग्य से, जी.आई.आई. में जिस दलीलशैली की हिमायत कि गई है उसी वजह हम न चाहते हुए भी यह उपर्युक्त विचित्र द्वंद्वात्मक गतिरोध में फंस गये। उपर्युक्त गतिरोध को समझ ने के लिए कृपया पृष्ठ 85 पर दिए गई आकृति देखिए।

28 मई के वार्तालाप को एक प्रभावशाली प्रमाण मानने में सबसे मुश्किल इस कारण आती है कि यह जानकारी उन भक्तों को मालूम ही नही थी जिन्हें बाद के संशोधनों को स्वीकारने को कहा गया था।

अगर यह सही भी होता कि 28 मई के वार्तालाप में ऐसी कुछ जानकारी होती जो 9 जुलाई के पत्र में कुछ संशोधन कर सकती थी तो उसे इस पत्र में जरूर संबोधित किया गया होता। वास्तव में 28

मई के वार्तालाप का मक्सद यह स्पष्टरूप से प्रस्थापित करना था कि श्रील प्रभुपाद के प्रस्थान के बाद दीक्षा संस्कार के विषय में क्या करना था। और प्रस्ताव तो यह दिया जाता है कि जब श्रील प्रभुपाद दीक्षा संस्कार विषय पे अपनी अंतिम हस्ताक्षरयुक्त निर्देशिका जारी कर रहे है तब वे सिर्फ यही बताते है कि उनकी उपस्थिति में क्या करना है।

दूसरे शब्दों में, जिस विषय पर श्रील प्रभुपाद से पूछा ही नही गया था, उस विषय पर उन्होंने स्पष्ट निर्देश दिये और फिर उसे संपूर्ण आंदोलन को एक दस्तावेज के रूप में भेजा। और जिस विषय पर पूछा गया था– दस हजार वर्ष तक भावि दीक्षा संस्कार– उसे इस विषय पर अपनी अंतिम हस्ताक्षरयुक्त आदेश में सामिल ही नही किया। हम ऐसा कोई भी उदाहरण नही देखते जिसमे श्रील प्रभुपाद ने संपूर्ण संस्था को निम्नलिखित तरीकों से संबोधित किया हो:

(1) ऐसा महत्त्वपूर्ण निर्देश जारी करना जिस में उसके जारी करने का हेतु ही संबोधित न किया हो।

(2) जानबूझकर नई प्रणालियों से संबोधित महत्त्वपूर्ण जानकारी को छुपा लेना।

(3) ऐसी उम्मीद रखना कि आदेश का सही तरह से पालन हो इसलिए उनका आदेश प्राप्त करनेवाले जादुइ मन पाठक होने चाहिए।

यह तर्क कि श्रील प्रभुपाद को भावि दीक्षा संस्कार के बारे मे जानकारी देने की जरूरत ही नही थी। क्योंकि इसे वे अपनी पुस्तकों और प्रवचनों में विस्तृत रूप से समझा चुके थे, इसका प्रति उत्तर हम आपत्ति 7 में दे चुके है (कृपया पृष्ठ 13 देखिए) । 28 मई के वार्तालाप में **पंक्ति 12** पर उपयोग में लिये गये 'अमार आज्ञाया गुरू हना' श्लोक को जी.आई.आई. में संशोधन (अ) एवं (ब) का एक कारण बना रखा है। 28 मई वार्तालाप में आगे जब उनकी पुस्तकों के अनुवाद पर बात चलती है तब यह श्लोक फिर से दोहराया जाता है। यह धारणा के अनुसार, इसी वार्तालाप में जहाँ श्रील प्रभुपाद ऋत्विक कि बात कर रहे है वही वे भगवान चैतन्य के 'सबको गुरू बनने' का विख्यात आदेश भी दोहरा रहे है इसलिए ऋत्विक बनने का आदेश दीक्षा गुरू बनने का आदेश हो जाता है। परन्तु श्रील प्रभुपाद ने बस यही कहा है:

> **"जो गुरू के आदेश को समझता है वही परंपरा, वह ही गुरू बन सकता है। इसलिये मै तुमसे से कुछ को चुनूँगा।'** (28 मई का वार्तालाप)

यहाँ निम्नलिखित बाते समझने की है:

1. गुरू का कौनसा आदेश था जिसको उन्हें समझना था?– ऋत्विक बनना (' **मै तुमसे से कुछ को ऑफिशिएटिंग आचार्य का कार्य करने के लिए नियुक्त करूगाँ** ')

2. अंत में उन्हें किस कार्य के लिए चुना गया था?– ऋत्विक का कार्य करने के लिए (कृपया परिशिष्ट के 9 जुलाई के पत्र को देखिए, पृष्ठ 101)

3. और अपने गुरू के आदेशों का पालन करके वे किस तरह के गुरू बनते थे **-** जैसा हम पहले विश्लेषण कर चुके है। श्री चैतन्य के 'गुरू बनो' के आदेश का मतलब है जो भी इस आदेश का

विश्वस्नीय ढ़ग से पालन करता है वह शिक्षा गुरू है।

जी.आई.आई. में विरोधाभाषी प्रस्तावना है कि गुरू के आदेश पर ऋत्विक बनने से वह अपने आप ही दीक्षा गुरू बन जाता है।

इस तर्क के अनुसार जो भी अपने गुरू के कोई भी आदेश का पालन कर लेता है वह अपने आप ही दीक्षा गुरू बन सकता है ! परन्तु जी.आई.आई. में इस तर्क का प्रमाण नही दे रखा है। जैसा पहले दिखलाया जा चुका है, 'अमार आज्ञाया' श्लोक हर एक को केवल शिक्षा गुरू बनने का आदेश दे रहा है। ('**सबसे उत्तम यही होगा कि कोई शिष्य नहीं स्वीकारो**')।

निष्कर्ष

1. 9 जुलाई 1977 को श्रील प्रभुपाद ने 11 ऋत्विक नियुक्त किये, जिनका कार्य था प्रथम और द्वितीय दीक्षा संस्कार 'इस समय से' करना।

2. 28 मई के वार्तालाप में ऐसा कोई प्रमाण नही है जिससे 9 जुलाई के आदेश को बदला जाए, जैसे कि ऋत्विक की नियुक्ति श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव के उपरान्त रूक जाएगी।

3. 28 मई के वार्तालाप में ऐसा भी प्रमाण नही है जिससे श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त यह ऋत्विक अपने आप ही दीक्षा गुरू बन जाते थे। अत: 9 जुलाई के पत्र को उपरोक्त तरीके से भी नही बदला जाना चाहिए था।

4. 28 मई के वार्तालाप में जो एक तथ्य स्पष्ट स्थापित होता है वह है ऋत्विक का कार्य श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव उपरान्त जारी रहना था।

महत्त्वपूर्ण तथ्य तो यह है कि एक इसी वार्तालाप की चार भिन्न-भिन्न प्रतिलिपियाँ और जी.बी.सी. के चार अलग-अलग 'अधिकारिक' अनुवाद है। कई भक्त मानते है कि केवल इसी कारण से टेप को निर्णायक प्रमाण नही माना चाहिए। अगर पाठक का भी यही दृष्टिकोण है तो उन्हें 9 जुलाई के पत्र तक ही सीमित रहना चाहिए और उसे इस विषय का अन्तिम आदेश मानना चाहिए, क्योंकि वह स्पष्ट लिखा हुआ एक हस्ताक्षरयुक्त पत्र जिसे संपूर्ण आंदोलन को भेजा गया था। एक न्यायालय में तो यह पत्र ही प्रमाणिक माना जायेगा, क्योंकि हस्तारक्षरयुक्त लिखित आदेश एक टेप से ज्यादा प्रमाणिक माना जाता है। तो भी इस टेप का यहाँ हमने इतना विश्लेषण इसलिये किया है क्योंकि जी.बी.सी. ने संशोधन (अ) एवं (ब) के लिए यही एक प्रमाण प्रस्तुत किया है। उपरोक्त विश्लेषण द्वारा संशोधन (अ) एवं (ब) को नकार दिया जाता है। ये संशोधन ही जी.बी.सी. की वर्तमान पद्धति के आधार है पर हमे इनको प्रमाणित सावित करने का कोई सबूत नही मिला है। अत: 9 जुलाई के पत्र में दिये गए आदेश ही श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये दीक्षा संबंधित अंतिम आदेश है। इसलिए इन्ही का पालन करना होगा। अब हम कुछ संबंधित आपत्तियों को देखेंगे।

संबंधित आपत्तियाँ

1. "श्रील प्रभुपाद ने 'ऋत्विक' शब्द का प्रयोग अपनी पुस्तकों में नही किया है।"

1) 'ऋत्विक' (यानी पुजारी) एवं इसके पर्याय शब्द **31** बार श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में संबंधित है। यहाँ तक कि 'दीक्षा' और इसके पर्याय जो **41** बार संबोधित है उससे थोडा ही कम बार। इससे जाहिर होता है कि 'ऋत्विक' पुजारियों का संस्कारों मे उपयोग श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में पूर्णयता अनुमोदित है:

ऋत्विक **: 4.6.1 / 4.7.16 / 5.3.2 / 5.3.3 / 5.4.17 / 7.3.30 / 8.20.22 / 9.1.15**

ऋत्विजह **: 4.5.7 / 4.5.18 / 4.7.27 / 4.7.45 / 4.13.26 / 4.19.27 / 4.19.29 / 5.3.4 / 5.3.15 / 5.3.18 / 5.7.5 / 8.16.53 / 8.18.21 / 8.18.22 / 9.4.23 / 9.6.35**

ऋत्विजम् **: 4.6.52 / 4.21.5 / 8.23.13 / 9.13.1**

ऋत्विगभ्यह **: 8.16.55**

ऋत्विग्भीही **: 4.7.56 / 9.13.3**

(सब श्रीमद-भागवतम् से)

2) जहाँ श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में आध्यात्मिक नियम पूर्ण रूप से हुए थे, उनकी व्यावहारिक जानकारी कई बार नही दी गयी थी (उदाहरणतया, अर्चविग्रह की पूजा विषय में) यह व्यावहारिक जानकारी ज्यादातर पत्रों द्वारा या निजी उदाहरण द्वारा समझाई जाती थी। अत: हमे दीक्षा के सिद्धांत और उसकी व्यावहारिकता में अंतर समझना चाहिए। श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा को एक रूढ़िवादी रीति नही अपितु दिव्य ज्ञान की प्राप्ति बतलाया है जिससे मुक्ति मिल सकती है:

"दुसरे शब्दों में, गुरू एक सुप्त जीवात्मा को जागृत करता है जिससे वह अपनी मौलिक चेतना में आकर श्री विष्णु की आराधना कर सके। यही दीक्षा का उद्देश है। दीक्षा का अभ्रिपाय है आध्यात्मिक चेतना से संम्बधित शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति ।"
(चैतन्य चरितामृत, मध्य **9.61**, भावार्थ)

"दीक्षा का भूल अभ्रिपाय शिष्य को दिव्य ज्ञान देना है जिससे वह समस्त भौतिक कल्मषों से मुक्त हो सके।"
(चैतन्य चरितामृत, मध्य **4.111**, भावार्थ)

"दीक्षा एक प्रकिया है जिससे दिव्य ज्ञान प्रकाशित होता है और पाप कर्म के फलों का नाश होता है। एक दक्ष व्यक्ति जिसे शास्त्रों का ज्ञान है वह इस प्रकिया को दीक्षा कहता है।"
(चैतन्य चरितामृत, मध्य **15.108**, भावार्थ)

दीक्षा संस्कार एक औपचारिकता है, जो दीक्षा पाने के लिए अनिवार्य नही है:

"सो ऐसा हुआ, 1922 से 1933 तक व्यावहारिक रूप से मुझे दीक्षा नही मिली परन्तु मुझे चैतन्य महाप्रभु के आंदोलन का प्रचार करने का प्रभाव पडा। ऐसा मै सोच रहा था और वही मेरे गुरू महाराज द्वारा मिली दीक्षा थी।"
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, **10/12/1976**, हैदरावाद)

"दीक्षा संस्कार एक औपचारिकता है। अगर तुम गंभीर हो, तो वही असली दीक्षा है। मेरा संपर्क तो एक औपचारिकता मात्र है। तुम्हारी दृढता, वही दीक्षा है।"
('सर्च फॉर द डिवाइन' बी.टी.जी. #49)

"...गुरू परंपरा का अर्थ यह नही कि सदैव औपचारिक रूप से ही दीक्षा मिले। गुरू परंपरा का अर्थ है गुरू परंपरा के सिद्धांत को स्वीकारना।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र दिनेश को, **31/10/1969**)

"हरे कृष्ण मंत्र का जाप करना हमारा मूल कार्य है, वही असली दीक्षा है। और तुम जो मेरे सारे आदेशों का पालन कर रहे हो, तो दीक्षा देने वाला वही उपस्थित है।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र तमाल कृष्ण को, **19/8/1968**)

"तो दीक्षा मिले या नही, पहली चीज है ज्ञान...। ज्ञान। दीक्षा संस्कार एक औपचारिकता है, जैसे तुम ज्ञान के लिए पाठशाला जाते हो, 'प्रवेश पाना' तो एक औपचारिकता है। वह ज्यादा महत्त्वपूर्ण नही है।"
(श्रील प्रभुपाद प्रश्नोत्तर, **16/10/1976**, चंडिगढ)

श्रील प्रभुपाद: "मेरा शिष्य कौन है? सबसे पहले उसे सारे अनुशासित नियमों का पालन करना होगा।"
शिष्य: "जब तक कोई इनका पालन कर रहा हो, तब वह...।"
श्रील प्रभुपाद: "तब वह बिलकुल ठीक है।"
(श्रील प्रभुपाद, प्रात: भ्रमण, **13/6/1976**, डेट्राइट)

"जब तक अनुशासन नही है, तब तक शिष्य होने का प्रश्न ही नही उठता। शिष्य उसे कहते है जो अनुशासन का पालन करता है।"
(श्रील प्रभुपाद, प्रात: भ्रमण, **8/3/1976**, मायापुर)

"अगर कोई (नियमों का) अनुशासन पालन नही करता, तो वह शिष्य नही है।"
(श्रील प्रभुपाद श्रीमद-भागवतम् प्रवचन, **21/1/1974**)

दीक्षा प्रकिया के नियमों का पालन करने की गंभीर प्रतिज्ञा को शिष्य के दिमाग में बैठाने के लिए दीक्षा संस्कार मात्र एक औपचारिकता है। इस प्रकिया में:

- दिव्य ज्ञान मिलता है जिससे वह समस्त कल्मषों से शुद्ध हो जाता है।
- दीक्षा गुरू के आदेशों को पालन करने की दूढता को बनाये रखता है।
- गुरू के आदेशों का उत्सुकतापूर्वक पालन करने की शुरूआत करता है।

श्रील प्रभुपाद ने स्पष्ट रूप से यह बताया है कि दीक्षा संस्कार तो मात्र एक औपचारिकता है, आवश्यकता नही। यह औपचारिक दीक्षा संस्कार भी कई प्रकियाओं का मिश्रण है:

1. संस्था के एक अधिकारी द्वारा सिफारिश, सामान्यत: टेम्पल प्रेसिडेन्ट द्वारा।

2. ऋत्विक द्वारा सहमति।

3. यज्ञ में सम्मिलन।

4. आध्यात्मिक नाम स्वीकारना।

उपर्युक्त **2** और **4** में ही ऋत्विक पुजारी की आवश्यकता आती है। बाकी दो प्रकियाएँ सामान्यत: टेम्पल प्रेसिडेंट करता है।

जैसा पहले बतलाया जा चुका है, ऐसा नही है कि दीक्षा देने के लिए गुरू को शिष्य के समान ग्रह पर होना आवश्यक है। दीक्षा की प्रकियाएँ यानी दिव्य ज्ञान, पाप कर्म के फलों का नाश, यज्ञ और आध्यात्मिक नाम शारीरिक अनुपस्थिति में भी दिये जा सकते है। यह श्रील प्रभुपाद ने अपने निजी उदाहरण द्वारा प्रदर्शित किया था। वे दिक्षा के समस्त तत्त्व अपने मध्यस्थ यानी अपने शिष्यों और पुस्तकों द्वारा देते थे। इस प्रकार ऋत्विक के उपयोग से कोई भी आध्यात्मिक नियम नही बदला गया। केवल व्यावहारिकता में अंतर है। इस प्रकार, ऋत्विक का उपयोग दीक्षा की मात्र औपचारिक विधि में होता है। एक ऐसी औपचारिकता जो दिव्य दीक्षा प्रकिया में अनावश्यक है। (कृपया 'दीक्षा' आकृति देखिए, पृष्ठ **84**)

श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा प्रकिया के तत्त्वों को उनकी महत्त्वपूर्णता अनुसार पुस्तकों में समझाया था:

तत्त्व	क्या पुस्तकों में समझाया?	रीतियों का पालन किया?	वर्तमान रीति से मुख्य बदलाव?	रीति बदलाव को पुस्तकों में समझाया?
दीक्षा	हाँ	नही	ज्ञान को प्राथमिक रूप से वाणी द्वारा दिया, न कि शारीरिक संपर्क से। निजी परीक्षा बहुत कम ली। दीक्षा के नए मापदण्ड।	कुछ
दीक्षा संस्कार	नही	नही	प्रतिनिधियों द्वारा माला पर जप। गायत्री मंत्र टेप द्वारा देना।	नही
नामकरण	नही	नही	हरिनाम दीक्षा के समय नाम देना। नाम देने के लिए प्रतिनिधियों का उपयोग	नही

इस तरह ऐतिहासिक एवं समकालिन दीक्षा संस्कार में ऋत्विक का उपयोग विषय पे श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में विशेष जानकारी न होना दीक्षा संस्कार संबंधित श्रील प्रभुपाद की सामान्य पद्धति के साथ सुसंगत है। इससे साफ जाहिर होता है कि ज्यादा महत्त्वपूर्ण है उसे ही उन्होंने समझाया था।

2. "गुरू और शिष्य की पारस्परिक परीक्षा जो दीक्षा में अति महत्त्वपूर्ण होती है, बिना शारीरिक सम्पर्क के कैसे पूर्ण हो सकेगी?"

यह प्रश्न कही गई आवश्यकता से उत्पन्न होता है (भगवद्–गीता **4.34**) जिसके अनुसार एक शिष्य को गुरू से 'संग' करना होता है, गुरू की 'सेवा करनी होती है, और 'प्रश्न' पूछना होता है। इसी प्रकार गुरू द्वारा शिष्य को परखना होता है (चैतन्य चरितामृत, मध्य **24.330**)। इन श्लोकों को ठीक प्रकार समझने से निम्नलिखित तथ्य उभर कर आते है:

- यहाँ 'प्रश्न पूछना', 'सेवा करना' और 'परखने' के लिए शारीरिक सम्पर्क की आवश्यकता नही लिखी हुई है।
- भगवद्–गीता के **4.34** के भावार्थ में इन प्रकियाओं को शिष्य के लिए बहुत जरूरी कहा गया है। अत: इन प्रकियाओं को पूर्ण करने के लिए अगर गुरू को शिष्य के समान ग्रह पर होना आवश्यक होता तो **14** नवम्बर **1977** के बाद कोई भी श्रील प्रभुपाद का शिष्य नही रहता।
- 'प्रश्न' इसलिए किए जाते है जिससे 'गुरू' 'ज्ञान' दे सके। ज्ञान देना यानी शिक्षा देना। यह हमने पहले ही स्वीकार कर लिया है कि ज्ञान देने के लिए या शिक्षा संबंधित प्रश्न स्वीकारने के लिए गुरू को समान ग्रह पर होना आवश्यक नही है। (कृपया पृष्ठ **86** देखिए– क्या गुरू को सशरीर उपस्थित होना अनिवार्य है?) और जैसा पहले समझाया गया है, इस तर्क के अनुसार **14** नवम्बर **1977** के बाद किसी को भी 'ज्ञान' नही मिला है।
- 'परीक्षा' संभावित शिष्य द्वारा सारे नियम पालन करने की सहमती होती है जो गुरू का प्रतिनिधि भी कर सकता है।

"हमारे कृष्ण भावनामृत आंदोलन में आवश्यकता है कि हर कोई पाप के चार खम्भों को छोडने को राजी हो। खासतौर से पाश्चात्य देशों में हम प्रथम यह परखते है कि क्या एक संभावित शिष्य नियमों का पालन करने के लिए सहमत है।"
(चैतन्य चरितामृत, मध्य **24.330**, भावार्थ)

दूसरी दीक्षा (गायत्री दीक्षा) के लिए संभावित शिष्यों की परीक्षा के लिए भी प्रतिनिधियों के उपयोग की बात कुछ ही पंक्तियों बाद फिर दोहराई गई है:

"इस प्रकार एक शिष्य, गुरू या उनके प्रतिनिधि के मार्गदर्शन में, छ: माह से एक साल तक भक्ति–सेवा करता है।"
(चैतन्य चरितामृत, मध्य **24.330**, भावार्थ)

प्रतिनिधियों का उपयोग कितना आवश्यक है हम कुछ पंक्तियों उपरान्त ही देखते है।

"गुरू को छ: माह से एक वर्ष तक शिष्य की जिज्ञासा की परीक्षा लेनी चाहिए।"
(चैतन्य चरितामृत, मध्य **24.330**, भावार्थ)

- यह ध्यान रखना चाहिए कि श्रील प्रभुपाद ने जिस तरह से यह संस्था प्रवंधित की थी उससे इस निर्देश को पालन करना असंभव हो जाता है। वे अपने हजारों शिष्यों को पूरे **6** माह तक निजी तौर पर परख नही सकते थे। इसलिए यह निर्देश पूर्ण करने के लिए शारीरिक सम्पर्क की आवश्यकता होती तो श्रील प्रभुपाद ने एक प्रचारक संस्था की स्थापना क्यों की जिसमे मंदिर और शिष्य पूरी धरती पर फैले हुए है, इस तरह की शारीरिक परीक्षा बिल्कुल असंभव हो जाती है? इसी प्रकार का तर्क तो दूसरे 'गौडीय वैष्णव' समुदाय के लोग देते है कि श्रील प्रभुपाद को जो सफल प्रचार स्वरूप मिला वह शास्त्र के निर्देशों को उलाँघने से मिला।
- सबसे प्रभावशाली प्रमाण है स्वयं आचार्य का निजी उदाहरण। श्रील प्रभुपाद ने बहुसंख्या में शिष्यों को निजी परीक्षा के बिना दीक्षा दी। इस प्रकार श्रील प्रभुपाद ने एक ऐसी प्रणाली स्थापित की जिसमें दीक्षा के लिए उनके प्रतिनिधियों का संग लेना उनके संग लेने के समान ही है। यह भी तर्क दिया जा सकता है कि उस समय निजी परीक्षा के निर्देश को लागू नही करना ठीक था, क्योंकि गुरू स्वयं इसी धरती पर मौजूद थे जिससे कि निजी परीक्षा संभव तो थी, पर इस तर्क का कोई मूल नही है क्योंकि:

i) इस तरह के विशिष्ट निर्देश को शास्त्रों मे कही नही बतलाया गया है। यह तो हकीकत संबंधित स्थिति के साथ ताल-मेल मिलाने कि युक्ति हो जाएगी।

ii) जब निजी परीक्षा के लिए प्रतिनिधियों की बात श्रील प्रभुपाद करते है तब यह नही कहते कि यह प्रकिया उनके धरती पर रहने तक ही लागू होगी। अभी तक न बतलाया गया ऐसा कौनसा शास्त्रिक सिद्धांत है जो जिस व्यक्ति ने ये प्रतिनिधियों चूने उनकी शारीरिक उपस्थिति संबंधित परिस्थिति में ये प्रतिनिधियों के कार्य पर रोक लगाए?

iii) जैसा बतलाया जा चुका है, शारीरिक परीक्षा एक शास्त्रिक आवश्यकता नही है। परीक्षा के लिए प्रतिनिधि यानी उनके शिष्य एवं पुस्तक के उपयोग से खुद श्रील प्रभुपाद सहमत थे। इसलिए यह प्रश्न कि निजी परीक्षा कब हो या कब न हो, उठता ही नही है।

iv) बिना किसी शारीरिक सम्पर्क के भी दीक्षा दी गयी थी। यह प्रमाणित करता है कि निजी परीक्षा के बिना भी दीक्षा मिल सकती है।

v) यह तथ्य कि निजी परीक्षा हरबार नही हुई है, जब यह करना शक्य था तब भी, साबित करता है कि दीक्षा प्रकिया के लिए निजी परीक्षा आवश्यक नही ही। श्रील प्रभुपाद ने यह स्पष्ट बतला दिया था कि एक शिष्य को नियमों का पालन करना है। यह टेम्पल प्रेसिडेन्ट और ऋत्विक को देखना है। दीक्षा के नियम अब भी वही है जो श्रील प्रभुपाद के समय थे। जब वे यहाँ सशरीर उपस्थित थे तब

अपने अंतिम दिनों मे नही चाहते थे कि उनसे कुछ सलाह ली जाये। तो वे अब क्यों दखलंदाजी करना चाहेंगे? अब हमारा एकमात्र कर्तव्य है कि सारे नियम बिना किसी बदलाव से दृढतापूर्वक कायम रखे।

3. "हम श्रील प्रभुपाद को गुरू के रूप में स्वीकार कर सकते है, परन्तु हमें यह कैसे मालूम चलेगा कि श्रील प्रभुपद ने अपनी शारीरिक अनुपस्थिति में भी हमें स्वीकार लिया है?"

7 जुलाई को ऋत्विक प्रणाली स्थापित करते हुए श्रील प्रभुपाद ने कहा था कि उनकी सहमति के बिना अब से ऋत्विक उनके प्रति शिष्य स्वीकार सकते है। अत: उस समय से श्रील प्रभुपाद शिष्यों को परखने और अलग करने कि प्रकिया में लिप्त नही थे। ऋत्विक के पास पूर्ण अधिकार और आजादी थी। श्रील प्रभुपाद का शारीरिक कार्य कुछ नही रहा था।

श्रील प्रभुपाद: "तो बिना मेरी प्रतिक्षा किए, तुम जिसे योग्य समझो। यह (तुम्हारे) विवेक पर निर्भर करेगा।"

तमाल कृष्ण गोस्वामी: "विवेक पर।"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ।"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **7/7/1977**, वृन्दावन)

ऋत्विक द्वारा दिये गये नाम को तमाल कृष्ण गोस्वामी द्वारा 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' पुस्तक में लिखा जाता था। श्रील प्रभुपाद को व्यवहारिक तौर पर शिष्य की अनुभूति भी नही होती थी। इस तरह आज भी वैसे ही कार्य चल सकता है क्योंकि ऋत्विक को पूर्ण अधिकार दे रखा था।

4. "गुरू का संग लेना, 'प्रश्न पूछना' और 'सेवा करना' तब ही संभव है जब अपने गुरू के धरती छोड़ने से पहले दीक्षा मिली हो।"

उपर्युक्त तर्क यह तो मानता है कि गुरू की शारीरिक अनुपस्थिति में भी गुरू से 'संग लेना', 'प्रश्न पूछना' और 'सेवा करना' संभव है। यह निर्देश कि यह तभी संभव है जब 'गुरू के धरती छोड़ने से पहले दीक्षा मिली हो' एक शुद्ध आविष्कार है। यह श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों मे कही नही मिलता। अत: हम इसकी आराम से अनदेखी कर सकते है। दीक्षा पाने के लिए औपचारिक दीक्षा संस्कार की भी जरूरत नही होती। यह तो गुरू द्वारा शिष्य को दिव्य ज्ञान प्रदान करना होता है । (साथ में कर्म फलों का नाश भी होता है।):

"...गुरू परंपरा का अर्थ यह नही कि सदैव औपचारिक रूप से ही दीक्षा मिले। गुरू परंपरा का अर्थ है गुरू परंपरा के सिद्धांत को स्वीकारना।"

(श्रील प्रभुपाद का पत्र दिनेश को, **31/10/1969**)

"तो दीक्षा मिले या नही, पहली चीज है ज्ञान...। ज्ञान। दीक्षा संस्कार एक औपचारिकता

है, जैसे तुम ज्ञान के लिए पाठशाला जाते हो, 'प्रवेश पाना' तो एक औपचारिकता है। वह ज्यादा महत्त्वपूर्ण नही है।"

(श्रील प्रभुपाद प्रश्नोत्तर, **16/10/1976**, चंडिगढ)

यह एक विवेकहीन तर्क है कि दीक्षा की दिव्य प्रकिया इसलिए ठीक से कार्य नही कर सकती; क्योंकि एक औपचारिक यज्ञ में गुरू शारीरिक रूप से मौजूद नही थे। यहाँ तक कि:

- श्रील प्रभुपाद खुद दीक्षा संस्कारों मे उपस्थित नही होते थे। यह ज्यादातर उनके प्रतिनिधियों यानी टेम्पल प्रसिडेन्ट, वरिष्ठ संन्यासी एवं ऋत्विक द्वारा किये जाते थे।
- यह भी स्वीकार किया जाता है कि श्रील प्रभुपाद की पिछले **20** वर्षों की शारीरिक अनुपस्थिति में भी उनके हजारों शिष्य दीक्षा प्रकिया से लाभ उठा रहे है।

यह तर्क दिया जा सकता है कि श्रील प्रभुपाद उन दीक्षा संस्कारों में अनुपस्थित जरूर थे परन्तु थे तो वे इस धरती पर। तो गुरू की इसी धरती पर उपस्थिति क्या आवश्यक होती है? इस तर्क को ठिक साबित करने के लिए हमें निम्नलिखित निर्देश जैसा कोई निर्देश श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में ढूँढना होगा:

'दीक्षा तभी पूर्ण हो सकती है जब दीक्षा संस्कार के दौरान गुरू एवं शिष्य में दूरी धरती के व्यास के समान या कम हो।'

आज तक किसी को ऐसा कथन नही मिला है। वस्तुत: निम्नलिखित श्लोक (भगवद्–गीता **4.1**) हमारी परंपरा का दीक्षा संबोधित प्रसिद्ध उदाहरण है जो उपर्युक्त धारणा को खारिज करता है।

"तो मनु या मनु के पुत्र इक्ष्वाकु से बातचीत करने में कोई मुश्किल नही थी। तब संचार माध्यम था या दूरसंचार प्रणाली इतनी विकसित थी कि संदेश को एक ग्रह से दूसरे ग्रह तक स्थानान्तरित किया जा सकता था।"

(श्रील प्रभुपाद भगवद्–गीता प्रवचन, **24/8/1968**)

उपर्युक्त से प्रतीत होता है कि गुरू और शिष्य के विच दूरी से दीक्षा में कोई बाधा नही आ सकती।

5. "आपका प्रस्ताव कुछ ईसाई धर्मकी तरह दिखता है!"

1) ऋत्विक प्रणाली का प्रस्ताव हम नही दे रहे है। अपितू श्रील प्रभुपाद दे रहे है, अपने अंतिम आदेश द्वारा। अत: अगर यह प्रणाली ईसाई धर्म जैसी भी है तो भी हमें इसका पालन करना होगा, क्योंकि यह हमारे गुरू का आदेश है।

2) ईसाई अब भी ईसा मसीह को गुरू मान सकते है। इस तथ्य को श्रील प्रभुपाद ने सहमति दी थी। उन्होंने सिखाया था कि जो भी ईसा मसीह के आदेशों का पालन करेगा वह उनका शिष्य होगा और उनके द्वारा प्रतिपादित मुक्ति पायेगा:

मधुद्विसाः "क्या एक ईसाई बिना किसी गुरू का मार्गदर्शन लिये, और केवल ईसा मसीह के उपदेशों को सच मानकर और उनका पालन करके आध्यात्मिक जगत जा सकता है?"

श्रील प्रभुपादः "मुझे समझमें नही आया।"

तमाल कृष्ण गोस्वामीः "क्या आज कोई ईसाई बिना गुरू के, परन्तु बाइबिल पढ़कर और ईसा मसीह के शब्दों को पालन कर, पहुँच ...।"

श्रील प्रभुपादः "जब तुम बाइबिल पढ़ते हो, तब तुम गुरू मानते हो। तुम कैसे बोल सकते हो कि बिना गुरू के? जैसे ही तुम बाइबिल पढ़ते हो, इसका अर्थ हुआ तुम ईसा मसीह के आदेशों का पालन करते हो और इसका मतलब कि तुम गुरू का अनुसरण कर रहे हो। तो बिना गुरू की बात ही कहाँ हुई?"

मधुद्विसाः "मै एक जीवित गुरू की बात कर रहा था।"

श्रील प्रभुपादः "गुरू... प्रश्न ही नही। गुरू शाश्वत होते है। गुरू शाश्वत होते है...। तो तुम्हारा प्रश्न है 'बिना गुरू के'। बिना गुरू के तुम जीवन के किसी स्तर पर नही रह सकते। तुम यह गुरू अपनाओ या वह गुरू। वह दूसरी बात है। परन्तु तुम्हें स्वीकारना होगा। जैसा तुम बोल रहे हो कि 'बाइबिल पढ़ने से', तो जब तुम बाइबिल पढ़ते हो तो इसका मतलब है तुम ईसा मसीह को गुरू मान रहे हो, जिनके प्रतिनिधि कोई पूजारी या पादरी होते है।"
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, **2/10/1968**, सीएटल)

"जहाँ तक ईसा मसीह के भक्तों के लक्ष्य का सवाल है, वे स्वर्ग जा सकता है, बस। यह इस भौतिक संसार में एक ग्रह है। ईसा मसीह के भक्त होने का मतलब है जो दृढतापूर्वक दस 'कमान्डमेन्टस' का पालन करे...।।अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि ईसा मसीह के भक्त स्वर्ग लोकों में स्थानान्तरित होंगे जो इस भौतिक जगत में ही है।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र भगवान को, **2/3/1970**)

"सच तो यह है कि जो ईसा मसीह द्वारा मार्गदर्शित है उसे मुक्ति अवश्य मिलेगी।"
(परिपूर्ण प्रश्न परिपूर्ण उत्तर, अध्याय **9**)

"...या ईसाई ईसा मसीह के अनुयायी है, एक महापुरूष। महाजनों येन गत: स पंथ:। तुम किसी महाजन, महापुरूष के मार्गदर्शन से चलो...। तुम एक आचार्य के अनुयायी बनो, जैसे ईसाई, वे ईसा मसीह, आचार्य के अनुयायी है। मोहम्डन्स वे आचार्य के अनुयायी है। मुहम्मद। यह अच्छा है। तुम्हें किसी एक आचार्य का पालन करना होगा...।एवं परंपरा प्राप्तम।"
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **20/5/1975**, मेलबोर्न)

3) 'ईसाई' बनने की यह आपत्ति व्यंगोक्ति है क्योंकि वर्तमान की गुरू प्रणाली में इस्कॉन ने खुद कुछ

ईसाई प्रथाओं को अपना लिया है। जी.बी.सी. द्वारा मतदान के बहुमत से गुरू का चयन उसी समान है जिस तरह कैथोलिक चर्च में पोप का चयन 'कॉलेज ऑफ कार्डीनल' करते है:

"मतदान की प्रणाली ...। गुरू के वचन के लिए ...। मतदान देने योग्य सदस्यों द्वारा किया जायेगा...। उमेदवार को दो-तिहाई बहुमत चाहिए...। समस्त जी.बी.सी. गुरू चयन के लिए उमेदवार है।" (जी.बी.सी. प्रस्ताव)

उसी प्रकार, जी.बी.सी. खुद को "इस्कॉन को मार्गदर्शन देने वाला सर्वोच्च गिरिजाघर मंडल" (बी. टी.जी., **1990 - 1991**) कहती है, यह भी ईसाई शब्द है।

यह विशेष ईसाई प्रथाएँ ईसा मसीह ने कभी नही बताई थी और श्रील प्रभुपाद ने पूरी तरह से इनकी आलोचना की है।

"सामाजिक मतदान से वैष्णव आचार्य को कभी नही चुना जा सकता। वैष्णव आचार्य स्वत: ही तेजस्वी होते है, और उन्हें किसी न्यायालय के निर्णय की आवश्यकता नही होती।"
(चैतन्य चरितामृत, मध्य **1.220**, भावार्थ)

"श्रील जीव गोस्वामी समझाते है कि गुरू के चयन के लिये उनके वंश, सामाजिक प्रथा या धर्मोपदेशक सभा की सम्मती को नही देखना चाहिए।"
(चैतन्य चरितामृत, आदी **1.35**, भावार्थ)

6. "ऋत्विक एक तरह की दीक्षा ही देते है। श्रील प्रभुपाद तो केवल हमारे शिक्षा गुरू ही है।"

1) ऋत्विक का कर्तव्य दीक्षा गुरू से अलग होता है। उसका एकमात्र कर्तव्य है शिष्यों को दीक्षा देने में दीक्षा गुरू की सहायता करना, न कि उनको अपना बताना।

2) ऋत्विक केवल दीक्षा प्रणाली का निरिक्षण करता है, आध्यात्मिक नाम देता है आदि। उदाहरण के लिए टेम्पल प्रेसिडेन्ट ही कई बार दीक्षा संस्कार यज्ञ करते थे पर कोई नही कहता था कि वह दीक्षा गुरू थे।

3) श्रील प्रभुपाद जो बनना चाहते है उन्हे वह बनने क्यों नही दिया जाये? निश्चित ही ये हमारे शिक्षा गुरू है पर जैसा उन्होंने **9** जुलाई को इंगित किया था, वे हमारे दीक्षा गुरू भी है।

4) श्रील प्रभुपाद हमारे प्राथमिक शिक्षा गुरू तो है ही वे वस्तुत: हमारे दीक्षा गुरू भी है क्योंकि:

- वे दिव्य ज्ञान देते है - दीक्षा की परिभाषा।
- वे भक्ति लता बीज बोते है – दीक्षा की परिभाषा।

दूसरे भक्त उपर्युक्त दो कार्यो में पुस्तक वितरण, प्रचार आदि से सहायता कर सकते है, पर वे वर्तमा-प्रदर्शक गुरू होंगे, दीक्षा गुरू नही। इस सेवा द्वारा वे खुद भी शुद्ध भक्त बन सकते है।

5) सामान्यत: प्राथमिक शिक्षा गुरू ही बाद में दीक्षा गुरू बनते है:

"श्रील प्रभुपाद इस्कॉन के समस्त भक्तों के मूल शिक्षा गुरू है...। श्रील प्रभुपाद के उपदेश इस्कॉन के समस्त भक्तों के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण उपदेश है।"
(जी.बी.सी. प्रस्ताव संख्या **35, 1994**)

"सामान्यत: वह गुरू जो एक शिष्य को निरन्तर आध्यात्मिक विज्ञान सिखाता है वही बाद में उसका दीक्षा गुरू बनते है।"
(चैतन्य चरितामृत आदी, **1.35**, भावार्थ)

"एक शिक्षा या दीक्षा गुरू का कर्तव्य होता है कि वह शिष्य को उचित शिक्षा दे। इस प्रणाली का ठीक से पालन करना शिष्य का कर्तव्य है। शास्त्रिक निर्देशों के अनुसार शिक्षा और दिक्षा गुरू में कोई अंतर नही है, और सामान्यत: शिक्षा गुरू ही बाद में दीक्षा गुरू बनते है।"
(श्रीमद्–भागवतम्, **4.12.32**, भावार्थ)

7. "अगर श्रील प्रभुपाद सबके शिक्षा गुरू है, तो वे दीक्षा गुरू भी कैसे हो सकते है?"

प्राय: नाम के कारण दीक्षा और शिक्षा गुरू के कार्य में भ्रम पैदा होता है। अत: माना जाता है कि शिक्षा गुरू ही शिक्षा दे सकते है, दीक्षा गुरू नही। परन्तु पिछले कथन के अनुसार दीक्षा गुरू भी उपदेश देते है। नही तो वह किस तरह ज्ञान का प्रेषण करेंगे?

प्रघुम्न: "गुरू पदाश्रय:। 'पहले गुरू के कमल पद की शरण लेनी चाहिए।' तस्मात कृष्ण-दीक्षादी-शिक्षणम्। तस्मात्। 'उनसे', कृष्ण-दीक्षादी- शिक्षणम्। 'सभी को कृष्ण दीक्षा एवं शिक्षा लेनी चाहिए।'"

श्रील प्रभुपाद: दीक्षा का अभिप्राय है दिव्य-ज्ञान क्षपयती इती दीक्षा। यह समझाता है कि दिव्य ज्ञान, दिव्य, यह दीक्षा है। दि, दिव्य, दीक्षाणम्। दीक्षा। तो दिव्य ज्ञान, आध्यात्मिक ज्ञान... अगर तुम गुरू नही स्वीकारते, तो तुम्हें कैसे आध्या...तुमे इधर-उधर कुछ सीखला दिया जायेगा, इधर-उधर और समय वर्बाद। शिक्षक का समय वर्बाद और साथ में आपका कीमती समय भी। इसलिए तुम्हें एक दक्ष गुरू द्वारा मार्गदर्शन मिलना चाहिए। आगे पढ़ो।

प्रघुम्न: "कृष्ण-दीक्षादी-शिक्षणम्।।"

श्रील प्रभुपाद: "शिक्षणम्। हमे सीखना चाहिए। अगर तुम सीखते नही तो तुम आगे कैसे बढ़ोगे? इसके बाद?"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **27/1/1977**, भुवनेश्वर)

गुरू-शिष्य संबंद्ध के सुप्रसिद्ध श्लोक (भगवद्–गीता **4.34**) से सिद्ध होता है कि दिव्य शिक्षा ही दीक्षा

का सार है। इस श्लोक में 'उपदेक्षयंती' का शब्दसह अनुवाद 'दीक्षा' लिखा गया है। परन्तु इस श्लोक के पूर्ण अनुवाद में 'दीक्षा' की बजाय 'शिक्षा देना' बताया गया है। यह शिक्षा पाने के लिए शिष्य को 'प्रश्न' पूछने चाहिए। इस प्रकार यहाँ 'दीक्षा की प्रणाली' ओर 'शिक्षा देने' को पर्यायवाची बताया गया है। इस प्रकार 'प्रभुपाद शिक्षा गुरू है दीक्षा गुरू नही' के तर्कवादी अपने ही जाल में फँस जाते है। इस ग्रह पर नही होने के उपरान्त भी अगर श्रील प्रभुपाद 'शिक्षा देने' मे समर्थ है तो दीक्षा की परिभाषा के अनुसार स्वत: ही वे दिव्य ज्ञान भी दे रहे होंगे। अत: श्रील प्रभुपाद बिना शारीरिक सम्पर्क के अगर शिक्षा गुरू बन सकते है तो दीक्षा गुरू क्यों नही? यह एक हास्यास्पद तर्क है कि वर्तमान में श्रील प्रभुपाद शिक्षा गुरू होने के नाते शिक्षा तो दे सकते है परन्तु अगर उनका नाम बदल कर दीक्षा गुरू कर दिया जाए तो शिक्षा नही दे पायेंगे। **यह तथ्य कि इस ग्रह पर नही होकर भी श्रील प्रभुपाद शिक्षा गुरू हो सकते है, यही प्रमाणित करता है कि वे साथ में दीक्षा भी दे सकते है।**

कुछ व्यक्तिगण तो यह भी नकार देते है कि श्रील प्रभुपाद एक भौतिक शरीर की अनुपस्थिति में दिव्य शिक्षा दे सकते है। अगर यह सत्य होता तो क्यों श्रील प्रभुपाद कई किताबे लिखने के लिए इतना कष्ट उठाते और उनको दस हजार साल तक वितरित करने के लिए एक ट्रस्ट बनाते? अगर अब श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों से दिव्य उपदेश मिलना संभव नही होता तो हम उन्हे वितरित क्यों कर रहे है? क यों आज भी लोग केवल इनको पढ़कर ही श्री चैतन्य महाप्रभु की शरण में आ रहे है?

8. "तुम क्या यह कहना चाहते हो कि श्रील प्रभुपाद ने एक भी शुद्ध भक्त नही बनाया?"

नही, हम केवल यह कह रहे है कि श्रील प्रभुपाद ने दीक्षा के लिए ऋत्विक प्रणाली स्थापित की है। इस स्पष्ट अंतिम आदेश में यह मायने नही रखता कि श्रील प्रभुपाद ने शुद्ध भक्त बनाये अथवा नही। शिष्य होने के नाते हमारा एकमात्र कर्तव्य है गुरू के आदेश का पालन करना। यह उचित नही है कि गुरू के निर्देशों को छोड दे और इसकी बजाय यह सोचने लगे कि कितने शुद्ध भक्त अभी है या भविष्य में होंगे।

ऐसा मान भी ले कि वर्तमान में कोई शुद्ध भक्त नही है तो श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त स्थिति को याद करे। करीब 40 वर्ष के बाद श्रील प्रभुपाद ने इंगित किया था कि गौडिया मठ से सिर्फ एक प्रमाणिक दीक्षा आचार्य उत्पन्न हुए।

> **"वस्तुस्थिति में मेरे गुरू भाइयों में कोई भी आचार्य* बनके योग्य नही है।... हमारे शिष्यों को उत्साहित करने के बदले वे उन्हें कभी-कभी दूषित कर सकते है।... वे हमारी सुलभ प्रगति में क्षति पहुँचाने के लिए अति सक्षम है।"**
>
> (श्रील प्रभुपाद का पत्र रूपानुगा को, **28/4/1974**)

*(श्रील प्रभुपाद ने 'आचार्य' और 'गुरू' शब्द का परस्पर बदलकर उपयोग किया था):

> **'मै किसी को गुरू बनाऊँगा। मै कहूँगा कौन गुरू है? 'अब तुम आचार्य बनो'...।तुम धोखा**

दे सकते हो, लेकिन वह प्रभावशाली नही रहेगा। जैसे हमारे गौडीय मठ को देखो। सभी लोग गुरू बनना चाहते थे। एक छोटा मंदिर और 'गुरू'। किस प्रकार का गुरू?"
(श्रील प्रभुपाद, प्रात: भ्रमण, **22/4/1977**)

यह श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के प्रचार कार्य पे निंदन लग सकता है। अपितु श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर को 'असफल' समझना वहुत वडी गलती होगी। उन्होंने कहा था कि उनका आंदोलन सिर्फ एक शुद्ध भक्त ही वना पाया तो भी वह उनकी सफलता होगी।

इसके अलावा ऋत्विक प्रणाली को लागू करने से शुद्ध भक्तों के अस्तित्त्व को नकारा नही जा सकता। कई तरह से ऋत्विक और शुद्ध भक्त साथ में निर्वाह और प्रचार कर सकते है, जैसे:

श्रील प्रभुपाद ने ऐसे कई शुद्ध भक्त वनाए हो सकते है जिनको दीक्षा गुरू बनने की लेश मात्र भी इच्छा नही हो। इसका कोई प्रमाण नही कि इस्कॅन के सारे शुद्ध भक्त हर साल मतदान के लिए खडे होते है। हो सकता है कि ये शुद्ध भक्त श्रील प्रभुपाद के आंदोलन की नम्रतापूर्वक सहायता ही करना चाहते हो। ऐसा कही नही लिखा है कि हर शुद्ध भक्त को दीक्षा गुरू बनना ही पड़ेगा। ये लोग ऋत्विक प्रणाली के अनुरूप संस्था में कार्य करने में आनन्द महसूस करेंगे जो यही उनके गुरू का आदेश हो।

श्रील प्रभुपाद की यह इच्छा भी हो सकती है कि वहुसंख्या में शिक्षा गुरू हों। परन्तु दीक्षा गुरू ओर कोई नही। यह धारणा श्रील प्रभुपाद के पूर्व कथन से मेल खाती है जिसमे वे सवको शिक्षा गुरू वनने को कह रहे थे और सावधान कर रहे थे कि शिष्य नही वनाओ। श्रील प्रभुपाद ने अपने आंदोलन की सफलता के लिए खुद ही उपाय कर लिये थे। इस तथ्य से भी उपर्युक्त धारणा मेल खाती है:

अतिथि: "क्या आप अपना उत्तराधिकारी चुनने वाले है?"

श्रील प्रभुपाद: "यह पहले से ही सफल है।"

अतिथि: "पर ऐसा तो कोई होना चाहिए, जो सव कार्यो का प्रवन्ध कर सके।

श्रील प्रभुपाद: "हाँ, यह हम कर रहे है। हम इन भक्तों को वना रहे है जो इसका प्रवन्ध करेंगे।"

हनुमान: "यह एक चीज वोल रहे है, यह अतिथि, और मै भि जानना चाहूँगा क्या आपका उत्तराधिकारी नियुक्त हो चुका है या आपका उत्तराधिकारी...।"

श्रील प्रभुपाद: "मेरी सफलता हर समय है।"
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **12/2/1975**, मैक्सिको)

"तो अब नया कहने को कुछ नही है। जो भी मुझे कहना था वह मैने मेरी पुस्तकों में कह दिया है। अब तुम इसे समझने का प्रयास करते रहो और अपनी चेष्टा में लगे रहो। मै उपस्थित रहूँ या उपस्थित न रहूँ इससे कोई फर्क नही पडता।"
(श्रील प्रभुपाद सम्वोधन, **17/5/1977**, वृन्दावन)

संवाददाता: "आपकी मृत्यु पश्चात् अमरीका में आपके आंदोलन का क्या होगा?"

श्रील प्रभुपाद: "मेरी मृत्यु कभी नही होगी।"

भक्तगण: "जय! हरी बोल!" (हँसी)

श्रील प्रभुपाद: "मै अपनी पुस्तकों द्वारा जीवित रहूँगा और तुम लाभ उठाओगे।"

(श्रील प्रभुपाद संवाददाता सम्मेलन, **16/7/1975**, सेन फ्रांसिस्को)

संवाददाता: "क्या आप अपने उत्तराधिकारी को प्रशिक्षण दे रहे है?"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ, मेरे गुरू महाराज है।"

(श्रील प्रभुपाद संवाददाता सम्मेलन, **16/7/1975**, सेन फ्रांसिस्को)

"केवल भगवान श्री चैतन्य मेरा स्थान ले सकते है। वे इस आंदोलन को संभालेंगे।"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **2/11/1977**)

मुलाकाती: "तब क्या होगा जब ऐसा अवश्य भावी समय आयेगा जब आपके उत्तराधिकारी की जरूरत होगी?"

रामेश्वर: "यह भविष्य के बारे में पूछ रहा है, भविष्य में आंदोलन का मार्गदर्शन कौन करेगा।"

श्रील प्रभुपाद: "ये मार्गदर्शन करेंगे, मै इन्हें प्रशिक्षण दे रहा हूँ।"

मुलाकाती: "परन्तु क्या एक आध्यात्मिक नेता होगा?"

श्रील प्रभुपाद: "नही। मै जी.बी.सी. को प्रशिक्षण दे रहा हूँ, अठराह समस्त धरती पर।"

(श्रील प्रभुपाद के साथ मुलाकात, **10/6/1976**, लॉस एंजिल्स)

संवाददाता: "क्या आप अपने उत्तराधिकारी के लिए एक व्यक्ति नियुक्त करेंगे या आप पहले से कर चुके है?"

श्रील प्रभुपाद: "ऐसा मै अभी सोच नही रहा। परन्तु एक व्यक्ति की जरूरत नही है।"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **4/6/1976**, लॉस एंजिल्स)

मुलाकाती: "मैं सोच रहा था कि क्या आपका कोई उत्तराधिकारी...। आपके मरणोपरान्त आपका स्थान लेने के लिए क्या कोई उत्तराधिकारी है?"

श्रील प्रभुपाद: "अभी तक निश्चित नही है। अभी तक निश्चित नही है।"

मुलाकाती: "तो क्या प्रणाली होगी? क्या हरे कृष्ण..."

श्रील प्रभुपाद: "हमारे पास सचिव है। वे प्रबन्धन कर रहे है।"

(श्रील प्रभुपाद के साथ मुलाकात, **14/7/1976**, न्युयॉक)

श्रील प्रभुपाद ने अपने किसी शिष्य को दीक्षा गुरू बनने का अधिकार नही दिया, यह तथ्य का मतलब ये नही होता कि उनमें से कोई भी शुद्ध भक्त नही है। एक शिक्षा गुरू भी मुक्त आत्मा हो सकता है। ऐसा भी हो सकता है कि श्री कृष्ण की योजना अनुसार किसी को भी यह कार्य नही करना है। अपितु श्रील प्रभुपाद के अनुयायियों को एक दूसरा बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य अदा करना है उसी तरह जैसा श्रील प्रभुपाद की शारीरिक उपस्थिति में करते थे। वह है उनके सहायक के रूप में, उनके उत्तराधिकारी आचार्य के रूप नें नही:

"समस्त जी.बी.सी. को शिक्षा गुरू बनना चाहिए। मै दीक्षा गुरू हूँ। और जैसा मै सिखा रहा हूँ वैसा सिखाकर और जैसा मै कर रहा हूँ वैसा करके तुम्हें शिक्षा गुरू बनना चाहिए।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र मधुद्विसा को, **4/8/1975**)

"कभी-कभी दीक्षा गुरू हर समय उपस्थित नही होता। इसलिए शिक्षा, उपदेश एक वरिष्ठ भक्त से ले सकते है। उसको कहते है- शिक्षा गुरू।"
(श्रील प्रभुपाद भगवद्-गीता प्रवचन, **4/7/1974**, होनोलूलू)

अत: विषय यह नही कि क्या श्रील प्रभुपाद ने एक भी शुद्ध भक्त बनाया या नही। विषय तो यह है कि क्या उन्होंने ऋत्विक प्रणाली स्थापित की है। दीक्षा गुरू श्रील प्रभुपाद अभी सशरीर उपस्थित नही है, इसका यह अर्थ नही कि वे दीक्षा गुरू नही रहे। उनकी सशरीर अनुपस्थिति में प्रामाणिक शिक्षा गुरूओं से हमे उपदेश लेने चाहिए, यह शिक्षा गुरूओं की संख्या लाखों में हो सकती है।

9. "जब तक गुरू अनुशासन और दृढता से सारे नियमों का पालन कर रहा हो, तब तक इससे फर्क नही पडता कि वह कितना शुद्ध है। इस तरह सेवा करते हुए वह अंत में योग्य हो जायेगा और अपने शिष्यों को भगवद्-धाम वापस ले जायेगा।"

जैसा पहले विश्लेषण किया गया था, दीक्षा गुरू बनने के लिये एक भक्त को सबसे उच्च स्तर पर स्थित होना चाहिए यानी कि महा-भागवत। और उनके पिछले आचार्य द्वारा आदेश मिलना चाहिए। उपर्युक्त 'पोस्ट डेटेड चेक' एक अपराधिक मनोधारणा है जो निम्नलिखित उदाहरण द्वारा स्पष्ट है:

"यदयापी पृथु महाराज वस्तुत: परम पुरूषोत्तम भगवान के अवतार थे तो भी उन्होंने अपनी प्रशंसा नकार दी क्योंकि परम पुरूष के गुण उनमें उजागर नही हुए थे। इससे वह यह समझाना चाहते थे कि अपने गुणों की अनुपस्थिति में किसी व्यक्ति को अपने अनुयायियों को अपनी प्रशंसा में नही लगाना चाहिए। हो सकता है कि वे गुण भविष्य में उत्पन्न हो जाये। अगर किसी व्यक्ति में महापुरूषों के गुण नही हो और इसका उपरान्त भी वह अपने अनुयायियों को अपनी प्रशंसा में यह सोचकर लगाता है कि भविष्य में तो वे गुण उजागर हो ही जायेंगे तो इस तरह की प्रशंसा वस्तुत: एक अपमान है।"
(श्रीमद्-भागवतम् **4.15.23**, भावार्थ)

जिस तरह एक अंधे व्यक्ति को 'कमल नयनों वाले' कहके सम्बोधित करना एक अपमान है, उसी प्रकार एक आंशिक बद्ध आत्मा को 'भगवान के बराबर' (जी.आई.आई., पृष्ठ **15**, विषय **8**) समझना एक अपमान है। वह व्यक्ति का ही नही जिसकी प्रशंसा हो रही है अपितु भगवान कृष्ण तक शुद्ध भक्तों की गुरू परंपरा का भी अपमान है।

दृढता और अनुशासन से नियमों का पालन करते हुए एक शिष्य आगे बढ़ता है। यह एक प्रकिया है, खुद योग्यता नही। भक्तो कई बार प्रकिया और योग्यता में भेद नही समझ पाते, प्राय: प्रचार भी करने लग जाते है कि दोनो समान है। केवल इसलिए कि कोई दृढ़तापूर्वक नियमों का पालन कर रहा है, इसका मतलब यह नही के वह महा–भागवत है, और न ही कि उसके गुरू ने अब उसे गुरू बनने की आज्ञा दे दी। और अगर एक शिष्य बिना योग्यता प्राप्त किए और बिना आज्ञा पाये दीक्षा देना चालू करता है तो वह नियमों का पालन भी ठीक से नही कर रहा है।

कई बार भक्त उपदेशामृत के श्लोक **5** के भावार्थ के एक कथन 'एक कनिष्ठ वैष्णव या मध्यम अधिकारी भी शिष्य स्वीकार सकता है' का उपयोग कर इस प्रकार के सिद्धान्त को प्रमाणिक बताना चाहते है। किसी कारणवश वे आगे की पंक्ति नही पढ़ते जिसमे शिष्यों का ऐसे गुरूओं से बचने की चेतावनी दी गयी है कि '**उनके अपर्याप्त मार्गदर्शन में वे जीवन के परम लक्ष्य तक पहुँचने में मुश्किले पायेंगे**'। आगे कहा गया है कि

"अत: शिष्य को सावधानीपूर्वक एक उत्तम अधिकारी को ही गुरू बनाना चाहिए।"

अयोग्य गुरूओं को भी चेतावनी दी गयी है:

"उत्तम अधिकारी स्थिति तक पहुँचे बिना किसी को गुरू नही बनना चाहिए।"
(उपदेशामृत, श्लोक **5**, भावार्थ)

अगर कोई गुरू 'अपर्याप्त मार्गदर्शन' ही दे रहा है तो परिभाषा अनुसार वह दीक्षा गुरू नही बन सकता क्योंकि दीक्षा के लिए पूर्ण दिव्य ज्ञान देना होता है। 'अपर्याप्त' मतलब पूर्ण नही। यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे दीक्षा गुरू, जो कि हमे 'आगे बढने' के लिए पूर्ण मार्गदर्शन न दे पाये उनकी अनदेखी ही कर देनी चाहिए।

10. "ऋत्विक प्रणाली का अर्थ हुआ गुरू परंपरा का अंत।"

गुरू परंपरा शाश्वत है। यह कभी रूक नही सकती। श्रील प्रभुपाद के अनुसार संकिर्तन आंदोलन और उसके कारणवश इस्कॉन भविष्य के सिर्फ **9500** वर्ष तक चलेगा। शाश्वत समय की तुलना में **9500** वर्ष कुछ भी नही होते। ऐसा लगता है कि इस समय अवधि में श्रील प्रभुपाद इस्कॉन में 'करेंट लिंक' या 'वर्तमान गुरू' बने रहेंगे। जब तक वे या श्रीकृष्ण **9** जुलाई के आदेश को रोक नही देते या कोई आकस्मिक घटना (जैसे–सम्पूर्ण विश्व का अणुविक विनाश) होने से इस आदेश का पालन नही किया जा सकता।

पिछले आचार्य कई वर्षो तक 'वर्तमान गुरू' बने रहे, जैसे–हजारों वर्ष (श्रील व्यासदेव) या लाखो वर्ष (निम्नलिखित कथन देखे), हम नही समझते कि संकिर्तन आंदोलन के अंत तक अगर श्रील प्रभुपाद 'वर्तमान गुरू' बने रहे तो कुछ मुश्किल आयेगी।

"जहाँ तक परंपरा प्रणाली का सवाल है: (समय में) लंबी दूरी से आश्चर्य नही होना चाहिए...। हम भगवद्–गीता में पढ़ते है कि सूर्य भगवान को कई लाखों वर्ष पूर्व गीता सिखायी गई थी, परन्तु श्री कृष्ण ने इस परंपरा में सिर्फ 3 नाम ही बताये है यानी विवस्वान, मनु एवं इक्ष्वाकु। इसलिए इस दूरी से परंपरा को समझने में कोई मुश्किल नही आती। हमें प्रधान आचार्य लेने चाहिए और उनका अनुयायी बनना चाहिए। हमारे संप्रदाय के आचार्य के आधार पर इन आचार्यो को लेना चाहिए।" (श्रील प्रभुपाद का पत्र दयानन्द को, 12/4/1968)

9 जुलाई का आदेश इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वह यह बतलाता है कि जब तक इस्कॉन रहेगा तब तक इस संस्था के सदस्यों के लिए तो प्रमुख आचार्य श्रील प्रभुपाद ही रहेंगे। केवल श्रील प्रभुपाद या श्री कृष्ण की साक्षात् मध्यस्थता से ही यह आदेश रोका जा सकता है (वह भी इस अंतिम आदेश, जो सम्पूर्ण आंदोलन को भेजा गया था, की तरह ही स्पष्ट होना चाहिए)। अत: जब तक कोई विपरीत आदेश नही दिया जाता, तब तक भविष्य की सभी पीढी के शिष्यों को श्रील प्रभुपाद द्वारा ही आध्यात्मिक विज्ञान का प्रतिपादन होगा, क्योंकि हमारी परंपरा में यह एक साधारण घटना है, अत: भय की आवश्यकता नही। परंपरा तभी रूक सकती है जब यह आध्यात्मिक विज्ञान ही लुप्त हो जाये। साधारणतया ऐसे अवसर पर धर्म को फिर से स्थापित करने हेतु श्री कृष्ण खुद ही अवतरित होते है। जब तक श्रील प्रभुपाद की पुस्तके वितरित होती रहेंगी, तब तक यह विज्ञान रहेगा और हर कोई इसका लाभ उठा पायेगा।

11. "हजारों वर्ष से चला आ रहा गुरू–शिष्य का संबंध इस ऋत्विक प्रणाली से रूक जायेगा।"

असल में ऋत्विक प्रणाली असंख्य शिष्यों को धरती के इतिहास के सबसे महान आचार्य श्रील प्रभुपाद से जोडती है। इन शिष्यों का श्रील प्रभुपाद से घनिष्ठ संबंध होगा जो कि मूल रूप से उनकी पुस्तकें पढ़ने और उनकी संस्था में सेवा करने पर आधारित होगा। साथ में बहुत 'शिक्षा गुरू' शिष्य संबंध विदयमान हो सकते है। तो यह प्रणाली गुरू–शिष्य पारम्परिक संबंध को किस तरह रोक देगी?

दीक्षा गुरू और शिष्य के संबंध को औपचारिक रूप से जोडने कि रीति को दीक्षा संस्कार कहा जाता है। एक आचार्य दीक्षा संस्कार की प्रकियाओं को समय एवं स्थिति के अनुसार बदल सकते है, परन्तु नियम तो वही रहता है:

"श्रीमद वीरराघव आचार्य, रामानुज संप्रदाय की परंपरा में एक आचार्य, ने अपनी टीका में कहा है कि चांडालों को भी विशेष स्थिति में दीक्षा दी जा सकती है। उन्हें वैष्णव बनाने के लिए औपचारिक प्रकियाओं में थोडा–बहुत फेर–बदल किया जा सकता है।"
(श्रीमद–भागवतम् 4.8.54, भावार्थ)

इसी प्रकार ऋत्विक प्रणाली स्वीकारने से एक प्रामाणिक गुरू से दीक्षा लेने के नियम का उल्लंघन नही होता।

कुछ लोग सुझाते है कि इस्कॉन की गुरू प्रणाली भी भारत के गावों में रहने वाले पारम्परिक गुरूओं जैसी होनी चाहिए। यु गुरू एक ही गाँव में रहते थे और कुछ ही शिष्य लेते थे जिन्हें निजी रूप से शिक्षा देते थे। चाहे सोचने में यह कितना ही अच्छा लगे, परन्तु इसको श्रील प्रभुपाद द्वारा विश्व भर में फैले हुए श्री चैतन्य महाप्रभु के संकिर्तन आंदोलन के साथ कुछ लेना-देना नही है। इस आंदोलन में श्रील प्रभुपाद एक जगदगुरू है और होंगे। उनके हजारों और लाखों शिष्य और होंगे। श्रील प्रभुपाद ने एक विश्व्यापी आंदोलन स्थापित किया है जिससे विश्व में कोई भी उनका 'संग' ले सकता है, 'सेवा' कर सकता है, और 'प्रश्न' कर सकता है। हम क्यों गाँव की गुरू प्रणाली को इस्कॉन में थोपना चाहे जब श्रील प्रभुपाद ने कभी ऐसा आदेश दिया ही नही?

अगर सब भक्त अपने-अपने गुरू, जिनकी अलग-अलग विचारधारा होती है, अलग-अलग आध्यात्मिक स्तर होता है, के आदेशों का पालन करना चाहेंगे तो एकता कैसे रहेगी? आध्यात्मिक जीवन के प्रति ऐसी 'भाग्य भरोसे' प्रणाली सें तो अच्छा है, जैसे हमने दर्शाया, श्रील प्रभुपाद ने हमें एक विश्वासपूर्ण प्रणाली दी है जिससे सीधे उनकी शरण ली जा सकती है, जिसकी सौ प्रतिशत गारंटी है। हमें मालूम है कि वे हमें कभी मझदार में नही छोड़ेगे, और एस प्रकार इस्कॉन में एकता बनाये रहेंगी, सिर्फ नाम कि खातीर नहि किन्तु चेतन्य में भी एकता रहेंगी।

कुछ भक्तों को लगता है कि एक जीवित एवं सशरीर उपस्थित दीक्षा गुरू की अनुपस्थिति में आध्यात्मिक विज्ञाय लुप्त हो जायेगा। परन्तु इस तरह का नियम एक बार भी श्रील प्रभुपाद ने अपनी पुस्तकों में नही बतलाया। इस कारण यह हमारी फिलसूफी में नही है। जब तक ऋत्विक प्रणाली कार्य करती रहेगी, तब तक कई जीवित शिक्षा गुरू सशरीर उपस्थित रहेंगे जो एक जीवित परन्तु सशरीर अनुपस्थित महाभागवत का सहयोग करेंगे और उनकी ओर से कार्य करेंगे। जब तक यह शिक्षा गुरू कुछ बदलते नही, आविष्कार नही करते, महत्त्वपूर्ण आदेशों की अवहेलना नही करते और कृत्रिम रूप से दीक्षा गुरू नही बनते, तब तक यह आध्यात्मिक विज्ञान लुप्त नहीं होगा। अगर इस तरह के दुराचार के फलस्वरूप यह विज्ञान लुप्त हो जाता है तो श्रीकृष्ण निश्चित रूप से इसे ठिक करने के लिये खुद कुछ करेंगे। हो सकता है कि वे गोलोकधाम के एक निवासी को फिर से एक नई संस्था बनाने के लिए भेजें। हम सबको मिलकर ऐसा करना है जिससे ऐसी नौबत नहीं आये।

12. "गुरू परंपरा चलाने के लिए यह ऋत्विक प्रणाली एक सामान्य विधि नहीं है। उचित विधि तो यह होती है कि गुरू अपनी सशरीर उपस्थिति में ही शिष्यों को सब कुछ सीखा देते है। जैसे ही गुरू यह ग्रह छोड़ देते है तो उनके वरिष्ठ शिष्यों का कर्तव्य होता है कि वे खुद गुरू बनें और इस तरह गुरू परंपरा कायम रखे। यह 'सामान्य' विधि है।"

दीक्षा गुरू बनने के लिये 'योग्यता' और अपने 'गुरू के आदेश' को छोड़ भी दें तो भी यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारी परंपरा में कई विविधिताएँ है। ये विविधताएँ मुख्यत: पाँच श्रेणियों में आती है:

क) अंतर

यह तब होता है जब परंपरा के एक आचार्य प्रस्थान करते है और तदुपरान्त कोई शिष्य उसी समय से दीक्षा देना चालू नही करता। या फिर जिन्हे भविष्य में आचार्य बनना है उनको अपने गुरू द्वारा कुछ समय तक आज्ञा नही मिलती। उदाहरणतया, श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के सशरीर प्रस्थान उपरान्त हमारे संप्रदाय में दूसरी प्रमाणिक दीक्षा करीब बीस वर्ष तक नही मिली थी। सौ साल तक के अंतर अपने संप्रदाय में असामान्य नही है।

ख) विपरीत अंतर

यह तब होता है जब गुरू की शारीरिक उपस्थिति में ही उनके शिष्य दीक्षा देना प्रारंभ कर देते है। उदाहरणतया, ब्रह्माजी अब भी सशरीर उपस्थित है तो भी उनके शिष्य तो दीक्षा दे चुके है। श्रील भक्तीसिद्धांत सरस्वती ठाकुर दोनों श्रील भक्तिविनोद ठाकुर एवं श्रील गौर किशोर दास बाबाजी की सशरीर उपस्थिति में दीक्षा देने लगे थे। जी.आई.आई. (पृष्ठ **23**) के अनुसार हमारे संप्रदाय में यह एक सामान्य घटना है।

ग) शिक्षा दीक्षा कड़ी

ये वे उदाहरण है जब एक आचार्य के प्रस्थान उपरान्त कोई शिष्य उन्हें अपना प्राथमिक गुरू स्वीकारता है। यह मालूम करना मुश्किल है कि वह आचार्य शिष्य के दीक्षा गुरू होते है या शिक्षा गुरू। श्रील प्रभुपाद ने इनका विश्लेषण नही किया है। उदाहरणतया श्रील विश्वनाथ चकवर्ती ठाकुर शिक्षा गुरू थे या दीक्षा गुरू? हम उन्हें शिक्षा गुरू बोलना चाहेंगे तो वह एक शुद्ध कल्पना होगी, क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने सिर्फ इतना ही कहा है:

"श्रील नरोत्तम दास ठाकूर जिन्होंने श्रील विश्वनाथ चकवर्ती ठाकुर को अपना दास स्वीकारा।"
(चैतन्य चरितामृत, आदि **1**)

"विश्वनाथ चकवर्ती ठाकुर उन्होंने अपना गुरू अपनाया, नरोत्तम दास ठाकुर"
(श्रील प्रभुपाद श्रीमद्-भागवतम् प्रवचन, **17/4/1976**, बम्बई)

ज्यादातर ऐसे शिष्यों का एक सशरीर उपस्थित भक्त के द्वारा दीक्षा संस्कार भी होता है। तो भी सशरीर अनुपस्थित आचार्य उनके दीक्षा गुरू हो सकते है। इसी प्रकार ऋत्विक संस्कार के उपरान्त ऋत्विक या टेम्पल प्रेसिडेन्ट एक शिष्य के शाश्वत दीक्षा गुरू नही बन जाते। और ऐसे शिष्यों सामान्यत: एक सशरीर अनुपस्थित शुद्ध भक्त को अपना सद्-गुरू बनाने के लिए एक प्रमाणिक भक्त की आज्ञा लेते थे जो सशरीर उपस्थित थे। उसी प्रकार ऋत्विक प्रणाली में, श्रील प्रभुपाद के नये संभावित शिष्य दीक्षा संस्कार के लिए ऋत्विक एवं टेम्पल प्रेसिडेन्ट से आज्ञा लेंगे।

घ) दीक्षा की प्रकिया

ये दीक्षा देने की असामान्य विधियाँ है। उदाहरण के लिए - श्रीकृष्ण द्वारा ब्रह्माजी को, श्री चैतन्य

द्वारा एक बौद्ध के कान में उपदेश आदि। एक ग्रह से दूसरे ग्रह पर दीक्षा स्थानान्तरित करना भी इसी श्रेणी में आ सकता है। उदाहरणतया मनु द्वारा इक्ष्वाकू को (भगवद-गीता **4.1**)

ङ) उत्तराधिकारी प्रणाली

अपने संप्रदाय में कई उत्तराधिकारी आचार्य प्रणालियाँ है। उदाहरण के लिये- श्रील भक्तिविनोद ने 'प्रभावशाली वैष्णव सन्तान' प्रणाली अपनायी। श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर ने 'स्वत: तेजस्वी आचार्य' प्रणाली अपनायी। श्रील प्रभुपाद ने '**ऋत्विक – दीक्षा संस्कार के लिए आचार्य के प्रतिनिधि प्रणाली**' अपनायी जिसमें '**नए दीक्षित भक्त श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के शिष्य है।**' जी.बी.सी. द्वारा वर्तमान में 'बहुल आचार्य परंपरा प्रणाली' लागू की हुई है।

यह स्पष्ट हो जाता है कि सभी आचार्य दीक्षा देने के लिए अपनी अलग प्रकिया अपना सकते है और अपनाते है। इसलिए किसी एक प्रणाली को 'सामान्य' बताना व्यावहारिकरूप से अर्थहीन बात होगी।

13. "अगर हम ऋत्विक प्रणाली अपना लेते है तो हम किसी भी पिछले आचार्य, जैसे कि श्रील भक्तिसिद्धांत, से दीक्षा ले सकते है।"

इसके विरोध में दो तर्क दिये जा सकते है:

क) श्रील भक्तिसिद्धांत या पिछले किसी आचार्य ने ऋत्विक प्रणाली 'इस समय से' लागू नही की थी।

ख) हमें 'वर्तमान गुरू' को ही अपनाना होगा।

> **"श्रीमद-भागवतम् के मूल उपदेशों को समझने के लिए गुरू परंपरा के वर्तमान गुरू को ही अपनाना चाहिए।"** (श्रीमद-भागवतम्, **2.9.7**, भावार्थ)

यह स्वत: ही स्पष्ट है कि श्रील प्रभुपाद हमारे संप्रदाय आचार्य है, जो श्रील भक्तिसिद्धांत के उतराधिकारी है। इसलिए श्रील प्रभुपाद हमारे 'वर्तमान गुरू' है, और इस तरह वे दीक्षा पाने के लिए उचित व्यक्ति है।

14. "वर्तमान गुरू' होने के लिए सशरीर उपस्थिति अनिवार्य है।"

श्रील प्रभुपाद ने ऐसा निर्देश कभी नही दिया।

तो चलो देखे कि: क्या गुरू सशरीर अनुपस्थिति हुए भी वर्तमान हो सकते है?

क) 'वर्तमान गुरू' शब्द का उपयोग केवल एक बार ही श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में किया गया है। इसके साथ 'सशरीर उपस्थिति' का कोई संदर्भ नही है। अगर सशरीर उपस्थिति अनिवार्य होती तो उसको जरूर सम्बोधित किया होता।

ख) शब्दकोश में 'वर्तमान' के अर्थ में सशरीर उपस्थिति सम्मिलित नही है।

ग) शब्दकोश के अर्थ के अनुसार सशरीर अनुपस्थित गुरू और उनकी पुस्तकों को भी 'वर्तमान' से संबोधित किया जा सकता है: 'अति आधुनिक', 'सामान्यतः ज्ञात, अनुसरण किया हुआ, या मान्य', 'व्यापी', 'अभी प्रवर्तमान'। हम मानते है कि यह उपयुक्त सभी अर्थ श्रील प्रभुपाद और उनकी पुस्तकों को लागु होता है।

घ) श्रील प्रभुपाद की पुस्तकें पढ़ने से ही वर्तमान गुरू की संगत पाने का कार्य परिपूर्ण हो सकता है।

"श्रीमद-भागवतम् के मूल उपदेशों को समझने के लिए गुरू परंपरा के वर्तमान गुरू को ही अपनाना चाहिए।" (श्रीमद्-भागवतम्, **2.9.7**, भावार्थ)

ङ) श्रील प्रभुपाद 'इमिडिएट आचार्य', 'वर्तमान आचार्य', और 'करंट लिंक' (वर्तमान गुरू) को पर्यायवाची की तरह इस्तेमाल करते है। 'इमिडिएट' शब्द का मतलब होता है:

'विदाउट इंटरवैनिंग मीडियम' – अति सन्निहित, 'क्लोसेस्ट ऑर मोस्ट डाइरेक्ट इन रिलेशनसिप' – अनन्तरित या अति समीप का। यह प्रतीत होता है कि विना किसी की मध्यस्थता से श्रील प्रभुपाद से सीधा संबंध स्थापित किया जा सकता है। शारीरिक उपस्थिति या अनुपस्थिति से इस संबंध को कोई फर्क नही पडता।

च) 'वर्तमान गुरू' एवं शारीरिक उपस्थिति या अनुपस्थिति में कोई सीधा संबंध इसलिए नही लगता क्योंकि ऐसे भी कई उदाहरण है जव गुरू की शारीरिक उपस्थिति में भी कुछ शिष्यों ने दीक्षा दी है। दूसरे शब्दों में, अगर अपने गुरू की सशरीर उपस्थिति में भी 'वर्तमान गुरू' बना जा सकता है तो एक आचार्य अपनी सशरीर अनुपस्थिति में भी क्यों वर्तमान गुरू नही हो सकते है?

सारांश में, हमें ऐसा कोई प्रमाण नही मिला कि 'वर्तमान गुरू' का शारीरिक उपस्थिति या अनुपस्थिति से कोई संबंध हो।

15. "श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के शारीरिक प्रस्थान उपरान्त श्रील प्रभुपाद के गुरू-भाईयों सब स्वयं गुरू बन गये थे। तो श्रील प्रभुपाद के शिष्य भी ऐसा करे तो क्या गलत है?"

दीक्षा गुरू बनने का ढोंग करने से श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के शिष्यों उनके गुरू के आदेश के बिल्कुल खिलाफ गये थे। श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर का अंतिम आदेश था जी.वी.सी. बनना और स्वत: तेजस्वी आचार्य की प्रतिक्षा करना। श्रील प्रभुपाद ने इस विषय पर अपने गुरू भाईयों की कडी निन्दा की थी, और कहा था कि वे प्रचार कार्य और दीक्षा देने के लिए बेअसर हो गये है।

"मेरे गुरू भाइयों में कोई भी आचार्य बनने के योग्य नही है।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र रूपानुगा को, **28/4/1974**)

"तुम जान लो कि वह (बॉन महाराज) एक मुक्त आत्मा नही है। अत: वह किसी को कृष्ण भावनामृत की दीक्षा नही दे सकता। इसके लिये उच्च अधिकारियों द्वारा विशेष आशीर्वाद

मिलना आवश्यक है।"

(श्रील प्रभुपाद का पत्र जनार्दन को, **26/4/1968**)

"अगर हर कोई दीक्षा देता रहेगा तो प्रतिकूल फल मिलेगा। जब तक ऐसा चलेगा, तब तक निराशा ही मिलेगी।"

(श्रील प्रभुपाद, फाल्गुन कृष्ण पंचमी, श्लोक **23, 1961**)

हाल ही के अनुभव से दिख जाता है कि इनमें से एक व्यक्ति श्रील प्रभुपाद के प्रिय आंदोलन को कितनी क्षति पहुँचा सकता है। दूर से आदर देना ही उचित व्यवहार है। निश्चित रूप से उनको अपने गुरू की आज्ञा का पालन करने के उदाहरणस्वरूप नही लिया जा सकता। उन्होंने अपने गुरू के आंदोलन का नाश कर दिया और उन्हें इज़ाजत दी तो इस्कॉन के साथ भी वही करेंगे।

गौडीय मठ की गुरू प्रणाली ही म.आ.स.सि. (बहुल आचार्य उत्तराधिकारी प्रणाली) के लिये पूर्व उदाहरण है यानी कि वह भी अपने संस्थापकाचार्य की सीधी प्रकट इच्छा के विपरीत लागू की गई है।

16. "जब श्रील प्रभुपाद कहते है कि वे आचार्य न बनें तो उनका अभिपाय बड़े 'आ' के आचार्य से था। यह आचार्य पूरी संस्था के निर्देशक होते है।"

श्रील प्रभुपाद कहाँ बड़े 'आ' और छोटे 'आ' के दीक्षा आचार्य में अंतर बतलाते है? वे कहाँ बतलाते है कि संस्था चलाते हो ऐसे दीक्षा आचार्यो कि एक विशेष जाती होती है और कहाँ बतलाते है कि एक किस्म के दीक्षा गुरू किसी अपंगता के नाते यह नही कर पाते?

17. "यह एक सामान्य धारणा है कि तीन प्रकार के आचार्य होतो है। इस्कॉन में सब यह मानते है।"

परन्तु श्रील प्रभुपाद ने यह धारणा कभी नही सिखलाई। यह मनोधारणा प्रघुम्न दास ने सत्स्वरूप दास गोस्वामी को 7 अगस्त **1978** को लिखे पत्र द्वारा इस्कॉन में फैलाई थी। यह पत्र 'अण्डर माय ऑर्डर' (मेरे आदेश से) लेख में फिर प्रकाशित किया गया था और यह पत्र ही लेख का सबसे महत्त्वपूर्ण आधार है। यही लेख जी.आई.आई. सिद्धांत का मूल स्त्रोत है। इस लेख के कारण इस्कॉन की 'जोनल आचार्य सिस्टम' (क्षेत्रीय आचार्य प्रणाली) रूपान्तरित होकर वर्तमान की 'मल्टीपल आचार्य सक्सैसर सिस्टम' (बहुल आचार्य उत्तराधिकारी प्रणाली) बनी थी।

" मैंने आचार्य की यह परिभाषा 7 अगस्त 1978 को प्रघुम्न द्वारा सत्स्वरूप दास गोस्वामी को लिखे पत्र से ली है। इस पत्र के सावधानीपूर्ण परीक्षण के लिये अब पाठक परिशिष्ट देखे।"

(अण्डर माय ऑर्डर, रविन्द्र दास, अगस्त **1985**)

इस पत्र में, प्रघुम्न बतलाते है कि आचार्य की परिभाषा तीन प्रकार की होती है:

1. जो आचार कर प्रचार करते है।

2. जो एक शिष्य को दीक्षा देते है।

3. संस्था के आध्यात्मिक नायक जिनकी नियुक्ति पिछले आचार्य द्वारा की गयी हो।

पहली परिभाषा हम स्वीकारते है, क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने भी इसका प्रयोग किया था। यह परिभाषा कोई भी प्रचारक पर लागू होती है चाहे वह शिक्षा गुरू हो या दीक्षा गुरू।

दूसरी परिभाषा में प्रघुम्न बताते है कि इस तरह के आचार्य शिष्यों को दीक्षा दे सकते है और इन्हें आचार्यदेव से संबोधित किया जा सकता है, परन्तु स्वयं के शिष्यों द्वारा ही।

"जो भी दीक्षा दे या गुरू बने वह 'आचार्यदेव' आदि से संबोधित किया जा सकता है– उनके शिष्यों द्वारा ही। जिसने भी उन्हें गुरू स्वीकारा है उसे गुरू को पूरा सम्मान देना चाहिए। पर यह नियम उन पर लागू नही होता जो उनके शिष्य नही है।" (प्रघुम्न दास, **7/8/1978**)

यह सब मनगढंत है। कही भी श्रील प्रभुपाद ऐसे दीक्षा गुरू का वर्णन नही करते जिनकी पूर्ण स्थिति केवल उनके शिष्यों द्वारा ही स्वीकारी जाए। (समस्त विश्व द्वारा या हमारे संप्रदाय के दूसरे वैष्णव द्वारा भी नही) हमें यह देखना चाहिए कि खुद श्रील प्रभुपाद ने 'आचार्यदेव' का वर्णन किस तरह किया है। निम्नलिखित कथन आत्मसाक्षात्कार का विज्ञान (अध्याय दो) में प्रकाशित श्रील प्रभुपाद के व्यासपूजा अभिभाषण से है जो वे अपने गुरू श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के लिए पढ़ रहे है:

> **"जैसा कि हमें प्रामाणिक शास्त्रों से ज्ञात होता है, गुरू अथवा आचार्यदेव वैकुण्ठ जगत (परम–जगत) के सन्देश को प्रस्तुत करते है...।"**
>
> **"... जब हम गुरूदेव अथवा आचार्यदेव के मूल सिद्धांतों की चर्चा करते है तब हम इन कि चर्चा करते है जिसका प्रयोग विश्वव्यापी होता है।"**
>
> **"श्रील आचार्यदेव, जिनको हम अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए आज रात यहाँ एकत्र हुए है, वे किसी सांप्रदायिक संस्था के गुरू नही है। दूसरे शब्दों में, वे सत्य को भिन्न–भिन्न मतों से प्रस्तुत करने वालों में से नही है। इसके विपरीत वे तो जगद्गुरू है, अर्थात हम सबके गुरू है।"** (आत्मसाक्षात्कार का विज्ञान, अध्याय दो)

'आचार्यदेव' शब्द की श्रील प्रभुपाद द्वारा परिभाषा तथा उपयोग, प्रघुम्न की परिभाषा से बिल्कुल उल्टा है। प्रघुम्न की परिभाषा से समझ पडता है कि 'आचार्यदेव' शब्द से उन व्यक्तियों को भी गलती से संबोधित किया जा सकता है जो ऊस स्तर पर है ही नही। इस प्रकार वह दीक्षा गुरू के स्तर को नीचा करते है।

आचार्यदेव से उन्ही को संबोधित करना चाहिये जो वास्तविक रूप में 'हम सबके गुरू' हो, जो समस्त संसार द्वारा पूजे जाने चाहिए।

> **"... वह साक्षात् भगवान और श्री नित्यानन्द प्रभु के प्रामाणिक प्रतिनिधि की तरह जाने जाते है। ये गुरू आचार्यदेव कहलाते है।"** (चैतन्य चरितामृत आदी, **1.46**, भावार्थ)

तीसरी परिभाषा में प्रघुम्न समझाते है कि आचार्य शब्द आध्यात्मिक संस्था के निर्देशक के लिए इस्तेमाल होता है, और समझाते है कि यह परिभाषा वहुत विशेष है।

"यह हर कोई नही हो सकता। यह केवल वह है जो पिछले आचार्य द्वारा आध्यात्मिक संस्था के निर्देशक के लिए दूसरों के ऊपर उत्तराधिकारी घोषित हुआ हो...।समस्त गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय में यह एक कठोर परंपरा है।"

(प्रघुम्न का पत्र सत्स्वरूप दास गोस्वामी को, **7/8/1978**)

हम निश्चित ही इस तथ्य से सहमत है कि दीक्षा देने के लिये पिछले आचार्य द्वारा आदेश मिलना चाहिए। (यह तथ्य दूसरी परिभाषा में वतलाया ही नही गया है।):

"गुरू परंपरा में आ रहे एक प्रामाणिक गुरू से ही, जिन्हें अपने पूर्व आचार्य द्वारा गुरू बनने का आदेश मिला हो, दीक्षा लेनी चाहिए।"

(श्रीमद्-भागवतम्, **4.8.54**, भावार्थ)

परन्तु, यह तो भ्रम पैदा करता है कि इसको 'आध्यात्मिक संस्था' की गद्दी लेने से क्या संबंध है। श्रील प्रभुपाद अपने गुरू महाराज की संस्था से विल्कुल अलग एक दूसरी संस्था के आचार्य है। प्रघुम्न के तर्क के अनुसार श्रील प्रभुपाद पर परिभाषा दो ही लागू होनी चाहिए। जो भी 'कठोर परंपरा' प्रघुम्न वता रहे है वह श्रील प्रभुपाद ने कभी भी समझायी नही। अत: हम उसको आराम से नकार सकाते है। पत्र में थोड़ा और आगे चलने से हमे समझ आता है कि प्रघुम्न के धूर्त तकों की उत्पत्ति कहाँ से है –

"इसके बजाय दूसरे गौडीय मठों में, अगर कोई गुरू भाई आचार्य की पदवी पर भी है तब भी वह ज्यादातर नम्रता के कारण एक पतले कपड़े का आसन ही इस्तेमाल करता है, और कुछ नही।"

(प्रघुम्न का पत्र सत्स्वरूप दास गोस्वामी को, **7/8/1978**)

श्रील प्रभुपाद के कोई भी गुरू भाई प्रामाणिक आचार्य नही है। यथार्थ जो नम्रता होती तो श्रील भक्ति सिद्धांत सरस्वती ठाकुर के आदेश का पालन करते, अपनी अप्राकृतिक पदवियों को छोड़, श्रील प्रभुपाद की उच्चतम स्थिति को समझ कर असली जगद्गुरू की शरण में चले आते। दुर्भाग्यवश, गौडीय मठ के कुछ ही सदस्यों ने ऐसा किया है। यह तथ्य कि प्रघुम्न इन व्यक्तियों को उदाहरण तौर पर प्रस्तुत करते है मतलव कि वे वास्तव में हमारे सच्चे आचार्य की स्थिति को फिर से नीचा दिखलाते है।

"जहाँ तक भक्ति पुरी, तीर्थ महाराज आदि का सवाल है, वे मेरे गुरू भाई है अत: उन्हें आदर देना चाहिए। परन्तु इनसे किसी तरह का घनिष्ठ संबंध नही रखो, क्योंकि यह मेरे गुरू-महाराज के आदेशों के विपरीत गये है।"

(श्रील प्रभुपाद का पत्र प्रघुम्न को, **17/2/1968**)

यह एक शर्मनाक बात है कि प्रघुम्न प्रभु ने अपने गुरू महाराज के स्पष्ट निजी आदेश की अवहेलना की। यह और भी ज्यादा शर्मनाक तथ्य है कि उनकी पथभ्रष्ट धारणाओं ने इस्कॉन की वर्तमान गुरू प्रणाली के सिद्धांत को प्रतिरूप दिया है।

इस प्रकार, जब श्रील प्रभुपाद कहते है कि उनके कोई भी गुरू भाई आचार्य बनने के योग्य नही है तब यह मायने नही रखता कि पहली परिभाषा ठीक है या तिसरी। अगर वे पहली परिभाषा अनुसार योग्य नही थे यानी उनका आचार उचित नही था तो वे स्वत: ही तिसरी परिभाषा के अनुसार अयोग्य हो जाते है। अत: वे दीक्षा नही दे सकते। और अगर वे तिसरी परिभाषा अनुरूप योग्य नही थे तो उनको आदेश नही मिला यानी वे दीक्षा नही दे सकते।

सारांश:

क) सारे प्रचारकों को परिभाषा **1** के आचार्य यानी शिक्षा गुरू बनने का प्रयास करना चाहिए।

ख) प्रघुम्न दास द्वारा दिया गया परिभाषा **2** का विश्लेषण पूर्ण रूप से बनावटी है। किसी को भी चाहे वह शिष्य हो या नही, आचार्यदेव को एक सामान्य व्यक्ति समझना निषिद्ध है। अगर वे वास्तव में सामान्य व्यक्ति है तो वे किसी को भी दीक्षा नही दे सकते और आचार्यदेव नही कहलाये जा सकते। इसके अलावा इस परिभाषा में अपने गुरू से विशेष आज्ञा लेने की बात नही कही गई है। बिना ऐसी आज्ञा के कोई भी दीक्षा नही दे सकता।

ग) परिभाषा **3** के आचार्य ही दीक्षा दे सकते है यानी जिन्हें अपने संप्रदाय के आचार्य द्वारा आज्ञा मिली है। दीक्षा देने की आज्ञा उपरान्त वह एक संस्था के निर्देशक बनते है या नही इससे फर्क नही पडता।

इस्कॉन में समस्त भक्तों को परिभाषा **1** के आचार्य बनने को कहा जाता है जिससे वे आचार्य द्वारा प्रचार करते है यानी शिक्षा गुरू बनते है। इस तरह के आचार्य बनने के लिए एक अच्छी शरूआत यह होगी कि हम अपने गुरू की हर आज्ञा का पालन करना आरंभ करे।

18. "यह एक छोटा सा मुद्दा है, अत: आचार्य के बारे में यह विचार से इस्कॉन को कोई बडी हानि थोडे ही हुई होगी?"

असल में, दीक्षा गुरू के विषय में मनगढत बातो ने इस्कॉन में बहुत भ्रम उत्पन्न किया है। कुछ इस्कॉन गुरू कहते है कि श्रील प्रभुपाद के बजाय अब वे ही दीक्षा गुरू है और नये शिष्यों को वे ही भगवद् धाम वापस ले जा रहे है, कुछ कहते है कि वे शिष्यों को केवल श्रील प्रभुपाद के निकट ले जा रहे है जो इन्हें भगवद्धाम ले जायेंगे (करीब-करीब ऋत्विक प्रणाली जैसे ही)। कुछ गुरू कहते है कि श्रील प्रभुपाद अभी भी वर्तमान आचार्य है, कुछ कहते है वे वर्तमान आचार्य नही है, और दो लोगो ने तो दावा किया कि वे श्रील प्रभुपाद के मुख्य उत्तराधिकारी आचार्य है। कुछ इस्कॉन गुरू अभी भी ऐसा मानते है कि श्रील प्रभुपाद ने **11** उत्तराधिकारी आचार्यो को नियुक्त किया था (एक मान्यता जो हाल ही में *LA* टाइम्स में तथ्य के रूप में प्रसिद्ध हुआ था), कुछ कहते है कि श्रील प्रभुपाद ने ग्यारह ऋत्विक नियुक्त किये थे जो उनके प्रस्थान पर तुरन्त छोटे 'आ' आचार्य में रूपान्तरित हो जाने थे, और दूसरे कहते है कि सिर्फ ये ग्यारह ही छोटे 'आ' आचार्य में रूपान्तरित नही हो जाने थे, परन्तु श्रील प्रभुपाद

के सभी शिष्यो (महिलाओं को छोड़) आचार्य बनने चाहिए थे।

जी.आई.आई. के अनुसार खुद जी.वी.सी. भी स्पष्ट नही है कि वे किस तरह के गुरू 'अनुमोदित' कर रही है।

जी.वी.सी. मानती है कि संप्रदाय के आचार्य एक मुहर द्वारा प्रामाणित नही हो जाते (जी.आई.आई., विषय 6, पृष्ठ 15) पर तो भी हर साल गौर पूर्णिमा को मायापुर में वह बिल्कुल ऐसा ही कार्य करती है। अब तक करीब सौ दीक्षा गुरू है जिनको 'नो ऑब्जेक्शन' (कोई आपत्ति नही) प्रमाण-पत्र मिला हुआ है। ये सब गुरू साक्षात् हरि जैसे ही पूजे जाते है। सब शिष्यों के लिए जी.वी.सी. का यही निर्देश है (जी.आई.आई., विषय 8, पृष्ठ 15) हमारी गुरू परंपरा महाभागवतों से बनी है और हजारों वर्ष पूर्व परूषोत्तम भगवान द्वारा शुरू की गयी थी। इन दीक्षा गुरूओं को ऐसी परम्परा का वर्तमान गुरू कहा जाता है।

> **"भक्त को चाहिए कि वह श्रील प्रभुपाद के प्रतिनिधि की शरण में जाये। ये प्रतिनिधि गुरू परंपरा के 'वर्तमान' आचार्य है।"** (जी.आई.आई., पृष्ठ 34)

उसी समय संभावित शिष्यों को चेतावनी दी जाती है कि इस्कॉन की सहमती...। **"... को अनुमोदित गुरू का आध्यात्मिक प्रगति का मापदण्ड नही मानना चाहिए।"** (जी.आई.आई., विभाग 2.2, पृष्ठ 9)

एक और जगह हमें फिर चेतावनी दी जाती है:

> **"श्रील प्रभुपाद का 'आदेश' था गुरू परंपरा को बढ़ाने के लिए नये शिष्यों को दीक्षा देना। अगर किसी भक्त को इस आदेश का पालन करने की अनुमति दी जाती है तो इसका यह प्रमाण नही कि यह भक्त 'उत्तम अधिकारी', 'शुद्ध भक्त' बन गया है या उसने आध्यात्मिक का एक विशिष्ट स्तर पा लिया है।"** (जी.आई.आई., पृष्ठ 15)

ये गुरूओं की मंदिर के सब भक्तों द्वारा पूजा नही होगी, सिर्फ उनके शिष्यों द्वारा एक निजी स्थान पर ही पूजा होगी। (जी.आई.आई., पृष्ठ 7)- प्रघुम्न की आचार्यदेव की परिभाषा।

हमने पहले ही सिद्ध कर दिया है कि एक आज्ञा प्राप्त महाभागवत ही प्रामाणिक गुरू बन सकते है। (हमने यह भी दिखा दिया है कि स्पष्ट 'आदेश' तो ऋत्विक बनने या शिक्षा गुरू बनने के लिए ही था) अत: किन्ही को 'दीक्षा गुरू' या 'वर्तमान गुरू' कहने का अर्थ है कि वे 'उत्तम अधिकारी', 'शुद्ध भक्त', या बडे 'आ' परिभाषा 3 के आचार्य है।

हम बताना चाहेंगे कि पहले एक दीक्षा गुरू को 'अनुमोदित' करना या 'कोई आपत्ति नही' का प्रमाण देना और तदुपरान्त अगर पथभ्रष्ट हो जाये तो कोई उत्तरदायित्व या दोष नही लेना ये अनुचित है। आधुनिक मनोविज्ञान कि भाषा में इसे 'नकार में जिना' कहते है। हम निश्चित रूप से कह सकते है कि श्रील प्रभुपाद ने इस्कॅन को एक जूए या रशियन रूलेट की तरह नही चाहा, जिसमे किसीकी आध्यात्मिक जिदंगी ही दाँव पर लग जाये। जी.बी.सी. इतना तो कर सकती है कि जब तक वह किसी गुरू के पीछे सौ प्रतिशत न खडी हो, तब तक ऊस पर मोहर नही लगाए। क्योंकि, एक प्रामाणित दीक्षा गुरू

के रूप में श्रील प्रभुपाद के पिछे हर कोई सौ प्रतिशत खडा है। हाल ही में जयअद्वैत स्वामी ने उपर्युक्त विषय पर जी.वी.सी. की अनिश्चित धारणाओं पर टिप्पणी की:

"नियुक्त शब्द कही भी इस्तेमाल नही हुआ है। परन्तु 'दीक्षा गुरू के उम्मीदवार होते है', मतदान किया जाता है, और जो भक्त इस प्रकिया को पार कर लेते है वे 'इस्कॉन अनुमोदित' या 'इस्कॉन प्रमाणित' गुरू बन जाते है। आपका विश्वास बढाने के लिए एक तरफ जी. बी.सी. आपको इस्कॉन के एक प्रमाणीत गुरू से दीक्षा लेने और भगवान समान पूजा करने के लिये उत्साहित करती है। दूसरी ओर जब इस्कॉन प्रमाणित गुरू गिर जाते है तो संबंधित कानूनों की विस्तृत प्रणाली को लागु किया जाता है। परन्तु इन सब कानूनों और प्रस्तावनाओं के बावजूद अगर हमें यह विचार करने पर मजबूर होना पडे कि इस्कॉन में गुरू का कार्य क्या होना चाहिए तो हमें गलत मत समझिए।"

('जहाँ ऋत्विक लोग सच है', जयअद्वैत स्वामी, **1996**)

जब हम इस्कॉन के गुरूओं के निन्दनीय कार्य देखते है तो आश्चर्य नही होता कि इस विषय पर इतना भ्रम है। जयअद्वैत स्वामी के लेख से एक बार फिर:

"तथ्य: इस्कॉन के गुरूओं ने कई गुरू भाईयों और गुरू बहनों को संस्था से खदेडा है।

तथ्य: इस्कॉन के गुरूओं ने अपने यश और ऐशो-आराम के लिए इस्कॉन की कुछ संपत्ति एवं पैसे पर कब्जा किया है और इसका कुप्रयोग किया है।

तथ्य: इस्कॉन गुरूओं ने पुरूष, महिलाओं और शायद बच्चों के साथ अवैध मैथुन किया है।

तथ्य: (...आदि, आदि)"

('जहाँ ऋत्विक लोग सच है', जयअद्वैत स्वामी, **1996**)

इस्कॉन में नये भक्तों को बतलाया जाता है कि श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों और उपदेशों के अनुसार अपने दीक्षा गुरू को इस्कॉन के योग्य गुरूओं में से ढूँढना खुद का कार्य है। परन्तु अगर कोई भक्त इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि 'सशरीर उपस्थित' कोई भी गुरू योग्य नही है अत: वह श्रील प्रभुपाद को ही दीक्षा गुरू बनाना चाहता है तो उसे संस्था से क्रूरता से निकाल दिया जाता है। क्या यह उचित है? आखिर वह जी.बी.सी. के ही आदेश का पालन कर रह है। क्या उसे उचित निष्कर्ष पर आने के लिये दंडित किया जाए? जब इतने प्रमाण मिलते है कि श्रील प्रभुपाद भी यही चाहते है।

जब जी.बी.सी. ने गुरूओं को शिष्टाचार में रखने के लिए खुद एक विस्तुत दण्ड विधान बनाया है तब कैसे किसी शिष्य को वर्तमान गुरूओं में पूर्ण श्रद्धा हो पायेगी? और तो और इस दण्ड विधान को उन किताबों में कही नही बतलाया गया है जिनको पढकर इस निष्कर्ष पर पहुँचना है? दूसरे को भ्रमित करने का इससे अच्छा उदाहरण कहाँ मिलेगा?

श्रील प्रभुपाद के स्पष्ट अंतिम आदेश का पालन करना ही सबसे सुरक्षित मार्ग होगा, जिसके अनुसार श्रील प्रभुपाद इस्कॉन के एकमात्र दीक्षा गुरू है। किसको आपत्ति होंगी?

19. "इस्कॉन जर्नल 1990 के अनुसार श्रील प्रभुपाद के कुछ गुरू भाई वास्तव में आचार्य थे।"

यह किसने कहा?

- उस व्यक्ति ने जिसने कहा था कि वैष्णव शब्दकोश में ऋत्विक शब्द का अस्तित्त्व ही नही है। (इस्कॉन जर्नल **1990**, पृष्ठ **23**)। जबकी श्रीमद्-भागवतम् में इस शब्द का कई बार प्रयोग हुआ है। स्वयं श्रील प्रभुपाद ने भी **9** जुलाई के पत्र में इस शब्द का उपयोग किया है।
- उस व्यक्ति ने जिसने यह संकेत दिया था कि श्रील प्रभुपाद को भी दीक्षा देने की आज्ञा नही मिली थी :

  "भक्तसिद्धांत सरस्वती ने न तो कभी ऐसा कहा न कोई दस्तावेज छोडा जिसमे उन्होंने कहा कि स्वामीजी श्रील प्रभुपाद) गुरू होंगे।" (इस्कॉन जर्नल **1990**, पृष्ठ **23**)
- उस व्यक्ति ने जिसने कहा था कि तीर्थ, माधव एवं श्रीधर महाराज प्रमाणिक आचार्य थे, जब श्रील प्रभुपाद ने कहा था कि उनमें से कोई भी योग्य नही था:

  "पर हमारे संप्रदाय में एक प्रणाली है। इसके कारण तीर्थ महाराज, माधव महाराज, श्रीधर महाराज, हमारे गुरूदेव, स्वामीजी- स्वामीजी भक्तिवेदांत स्वामी- सभी आचार्य बने।" (इस्कॉन जर्नल **1990**, पृष्ठ **23**)

उपर्युक्त कथन और श्रील प्रभुपाद के निम्नलिखित कथन में अन्तर देखिए:

"भक्ति विलास तीर्थ हमारी संस्था के बहुत विरूद्ध है और भक्ति के बारे में उसे कोई ठीक जानकारी नही है। वह दूषित है।" (श्रील प्रभुपाद का पत्र शुकदेव को, **14/11/1973**)

और उन्होंने दूसरो के लिए कहा:

"मेरे समस्त गुरू भाइयों में कोई भी आचार्य बनने के योग्य नही है।" (श्रील प्रभुपाद का पत्र रूपानुगा को, **28/4/1974**)

- वही व्यक्ति जिसने हाल में दावा किया कि श्रील प्रभुपाद ने सब कुछ नही दिया। उसके अनुसार पूर्ण जानकारी के लिये एक रसिक गुरू की शरण में जाना चाहिए।

20. "श्रील प्रभुपाद ने कभी-कभी अपने गुरू भाइयों को अच्छा बताया था।"

यह सबको ज्ञात है कि श्रील प्रभुपाद अपने गुरू भाइयों से नम्रतापूर्वक व्यवहार करते थे। यहाँ तक कि एक बार तो उन्होंने श्रीधर महाराज को अपने शिक्षा गुरू भी कहा था। श्रील प्रभुपाद एक स्नेहशील व्यक्ति थे। वे हर समय अलग-अलग विधियों से अपने गुरू-भाईयों को संकिर्तन आंदोलन में संमिलित करना चाहते थे। परन्तु हमें जानना चाहिए कि अगर वे प्रामाणिक आचार्य होते तो श्रील प्रभुपाद कभी

भी उनके खिलाफ नही बोलते। प्रामाणिक दीक्षा गुरूओं को आज्ञा का उल्लंघन करने वाला, ईर्षालु साँप, कुत्ता, सूअर, कीडा आदि बोलना एक महा अपराध होता है और श्रील प्रभुपाद ने ऐसा कभी नही किया होता। निम्नलिखित वार्तालाप श्रील प्रभुपाद और भावानंद के विच हुआ था, जिसमें वे तीर्थ महाराज के मठ से निकाली गई एक पुस्तिका का विश्लेषण कर रहे है:

भावानन्दः "अब बडे अक्षरों में 'आचार्यदेव गिडंडी स्वामी श्रील भक्तिविलास तीर्थ महाराज। सभी विद्वान लोग भारत के शोचनिय समय के बारे में जानते थे जब हिन्दू धर्म खतरे में था...।"

श्रील प्रभुपादः (हँसते हुए) "यह पागलपन है।"

यह जाहिर है कि श्रील प्रभुपाद तीर्थ महाराज (वही तीर्थ जिनको इस्कॉन जर्नल **1990** में एक प्रामाणिक गुरू के रूप में सम्मानित किया गया था।) को किस प्रकार के "आचार्यदेव" मानते है। आगे पुस्तिका में वर्णन है कि किस प्रकार श्रील भक्तिसिद्धान्त कितने भाग्यशाली थे कि उनको आंदोलन आगे बधा ने के लिए एक अद्भूत व्यक्ति मिला।

भावानन्दः "...सही समय पर, उन्हें (श्रील भक्तिसिद्धांत को) एक महापुरूष मिले, जिन्होंने उत्साहपूर्वक कष्ट उठाते...।"

श्रील प्रभुपादः "जरा देखे तो। उन्हें एक महापुरूष मिले 'वह' यह महापुरूष है। वह इसका प्रमाण भी देगा। [...] कोई इसे स्वीकारता नही है। [...] कहाँ है उसकी महानता? कौन इसे जानता है? देखे तो। तो अपने आपको महापुरूष घोषित करने का वह यह उपाय बना रहा है। [...] वह(तीर्थ महाराज) हमारे प्रति बहुत ईर्षालु है। ये दृष्ट लोग कुछ गडबड कर सकते है।"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **19/1/1976**, मायापुर)

प्रामाणिक आचार्य कभी भी ईर्षालु एवं दृष्ट आदि नही बतलाये जा सकते। दुःख तो यह है कि गौडीय मठ के कुछ लोग अब भी कुछ न कुछ गडबड करते रहते है। दूर से आदर देना ही सबसे सुरक्षित नीति है।

21. "प्रामाणिक आचार्य का आध्यात्मिक स्तर ज्यादा ऊँचा होने की जरूरत नही है क्योंकि वे कई बार गिर भी जाते है।"

श्रील प्रभुपाद बिल्कुल विपरित कहते है:

"एक प्रामाणिक गुरू, आदिकाल से गुरू परंपरा में स्थित है, और वह भगवान के कथनों से कभी भी पथभ्रष्ट नही हो सकते।" (भगवद्-गीता, **4.42**, भावार्थ)

22. "पिछले आचार्य तो वह भी बतलाते है कि अगर गुरू पथभ्रष्ट हो जाये तो क्या करना चाहिए।"

ऐसे पथभ्रष्ट गुरू, परिभाषा अनुसार, आदिकाल से गुरू परंपरा के सदस्य नही हो सकते। बल्कि, वे बद्ध और स्वयं अधिकार प्राप्त कुल गुरू हो सकते है जो दीक्षा गुरू बनने का स्वांग रच रहे हों। गुरू परंपरा के प्रामाणिक सदस्य कभी भी पथभ्रष्ट नही हो सकते।

"भगवान हर समय भगवान है, गुरू हर समय गुरू।" (आत्मसाक्षात्कार का विज्ञान, अध्याय 2)

"अगर वो ढोंगी है, तो वह गुरू कैसे हो सकते है।" (आत्मसाक्षात्कार का विज्ञान, अध्याय 2)

"शुद्ध भक्त माया के चंगुल से हर समय मुक्त रहते है।" (श्रीमद-भागवतम्, **5.3.14,** भावार्थ)

"एक उत्तम अधिकारी कभी भी गिर नही सकता।" (चैतन्य चरितामृत मध्य, **22.71,** भावार्थ)

"गुरू हर समय मुक्त आत्मा होते है।" (श्रील प्रभुपाद का पत्र तमाल कृष्ण को, **21/6/1970**)

श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों में एक भी ऐसा उदाहरण नही है कि औपचारिक रूप से प्रामाणिक कोई गुरू पथभ्रष्ट हो गया हो। शुक्राचार्य का उदाहरण प्रमाणस्वरूप दिया जाता है। परन्तु यह उदाहरण उचित नही है क्योंकि वह प्रामाणिक गुरू परंपरा के सदस्य थे ही नही। ब्रह्माजी का अपनी पुत्री के साथ लीला का भी उदाहरण दिया जाता है। परन्तु श्रीमद-भागवतम् में यह लीला उनके संप्रदाय के प्रधान बनने से पहले की है। यहाँ तक कि श्रील प्रभुपाद से जब उनके शिष्य निताई ने आचार्य के गिरने का यह उदाहरण प्रस्तुत किया था तो श्रील प्रभुपाद बहुत अप्रसन्न हो गये थे।

अक्षयानन्द: "मुझे एक भक्तने बताया कि आचार्य को शुद्ध भक्त होना आवश्यक नही है।"

श्रील प्रभुपाद: "कौन है वह दृष्ट?"

अक्षयानन्द: "उसने कहा। निताई ने कहा। उसने यह संदर्भ में कहा। उसने कहा कि भगवान ब्रह्मा ब्रह्म-संप्रदाय के आचार्य है, किंतु वह कभी-कभी रजो गुण से प्रभावित हो जाते है, इसलिए वो कहते है कि ऐसा लगता है कि आचार्य को शुद्ध भक्त होना आवश्यक नही है। इसलिए यह सही नही लगता है।"

श्रील प्रभुपाद: "उसने अपनी अटकल लगाई। इसलिए वह दृष्ट है। इसलिए वह दृष्ट है। निताई क्या सत्ता बनी बेठी है? उसे कुछ दृष्ट विचार आया, और वो उसे व्यक्त कर रहे है। इसलिए वह महा दृष्ट है। ऐसा चल रहा है।"

(प्रात: भ्रमण, **10/12/1975**, वृंदावन)

श्रील प्रभुपाद के अनुसार केवल अप्रामाणिक गुरू ही भव्यता और सुन्दरियों द्वारा लोभित हो सकते है।

इन सब निर्देशों के उपरान्त भी जी.बी.सी. की पुस्तक जी.आई.आई. में एक पूर्ण विभाग यही बतलाता

है कि अपने गुरू के पथभ्रष्ट होने पर शिष्य को क्या करना चाहिए। उस विभाग की शुरूआत में लिखा हुआ है कि वर्तमान गुरू से ही शिक्षा लेनी चाहिये न कि उन्हें लाँघकर पिछले आचार्यों से शिक्षा ली जाती है (जी.आई.आई., पृष्ठ **27**)। परन्तु जो श्रील प्रभुपाद ने कभी नही सिखायें ऐसे सिद्धांतो को स्थापित करने हेतु जी.आई.आई. के लेखकों पिछले आचार्यों का कथन देकर यही कर रहे है। पिछले आचार्यों द्वारा बताये गये पथभ्रष्ट गुरू कभी भी प्रामाणिक गुरू परंपरा के सदस्य नही हो सकते:

"नारद मुनि, हरिदास ठाकुर और ऐसे आचार्यों को, जिन्हें भगवान के गुणों के प्रचार के लिए विशिष्ट रूप से अधिकार दिया गया है, कभी भी भौतिक स्तर तक नीचे नही लाया जा सकता।"
(श्रीमद्-भागवतम्, **7.7.14**, भावार्थ)

अपने आचार्य को लाँघ पिछले आचार्यो से शिक्षा लेना 'री-इनिशिएशन' यानी पुन: दीक्षा के अध्याय से स्पष्ट हो जाता है। 'पुन: दीक्षा' शब्द का न तो श्रील प्रभुपाद ने और न पिछले किसी आचार्य ने कभी प्रयोग किया है। प्रश्नोत्तर विभाग (जी.आई.आई., पृष्ठ **35**, प्रश्न **4**) में 'गुरू को तिरस्कृत कब किया जाये' और 'पुन: दीक्षा कब ली जाये' के बारे मे विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। अपने विश्लेषण में लेखक कहते है:

"भाग्यवश, इस विषय का मूल श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने अपने जैव-धर्म में और श्रील जीव गोस्वामी ने अपने भक्ति संदर्भ में समझा दिया है।" (जी.आई.आई., पृष्ठ **35**)

'भाग्यवश' शब्द, अभाग्य से यह बतलाता है कि श्रील प्रभुपाद यह जानकारी देना भूल गये थे। इसलिए अच्छा हुआ यह जानकारी हमें पिछले आचार्यो से मिल गयी। परन्तु श्रील प्रभुपाद ने हर समय कहा था कि आध्यात्मिक प्रगति के लिए जो भी जानकारी चाहिए वह सब उनकी पुस्तकों में उपलब्ध है। हम क्यों ऐसे नियम ला रहे है जो हमारे आचार्य ने कभी नही बतलाए?

23. "परन्तु पिछले आचार्यो से पूछने में नुकसान क्या है?"

कुछ नही। परन्तु इस प्रकार पाई गई जानकारी से हम श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये नियम नही बदल सकते। श्रील प्रभुपाद ने कभी नही बतलाया कि एक प्रामाणिक गुरू कभी पथभ्रष्ट हो सकते है। 'जिव का खोज' का विवाद इसी कारण हुआ था।

"हमे पिछले आचार्य प्रभुपाद के माध्यम से देखना चाहिए। हम प्रभुपाद को लाँघकर पिछले आचार्यो के पास नही जा सकते और न ही उनके पास जाकर पीछे मुडकर श्रील प्रभुपाद को देख सकते है।"
(अवर ओरिजिनल पोझिशन, पृष्ठ **163**, जी.वी.सी. प्रेस)

श्रील प्रभुपाद ने कभी नही सिखायें ऐसे नये आध्यात्मिक नियम बनाना कैसा होगा? जैसेकि 'पिछले आचार्यो को प्रभुपाद के माध्यम से देखना'।

अगर जी.बी.सी. ने पिछले आचार्यो के कथनों के अर्थ ठीक भी निकाले हुए है, तो भी उनके उपयोग से

श्रील प्रभुपाद के उपदेशों को बदला नही जा सकता। श्रील नरहरि ठाकुर की पुस्तक श्रीकृष्ण भजनामृत में दो श्लोक इसी नियम को स्पष्ट करते है। जी.बी.सी. को इन श्लोंको का वर्णन करना चाहिए था, क्योंकि इसी पुस्तक से उन्होंने अपनी फिलसूफी का प्रमाण लिया था।

श्लोक 48:

"एक शिष्य दूसरे वरिष्ठ वैष्णव से कोई उपदेश ले सकता है, किन्तु इन उपदेशों कों अपने गुरू के पास लाकर प्रस्तुत करना चाहिए। अपने गुरू को प्रस्तुत करने बाद उनसे फिर से यही उ पदेश संलग्न निर्देशों के साथ सुनने चाहिए।"

श्लोक 49:

"...एक शिष्य जिसने दूसरे वैष्णव से कुछ उपदेश सुने हों वे उपदेश उचित भी हो सकते है, तो भी अगर वो इन उपदशों को अपने गुरू से फिर से पृष्टि नही कराता और खुद अपना लेता है तो वह एक खराब शिष्य और पापी माना जायेगा।"

हम यह नम्र निवेदन करेंगे कि इस्कॉन के सदस्यों के आध्यात्मिक जीवन की प्रगती के लिये जी.आई. आई. पुस्तक को उपयुक्त कथन के अनुरूप बदला जाए।

24. "श्रील प्रभुपाद ने ऐसा कभी क्यों नही बतलाया कि गुरू के पथभ्रष्ट होने पर क्या करना चाहिये?"

श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश के अनुसार वे ही भविष्य के लिए भी दीक्षा गुरू रहेंगे। और गुरू परंपरा के प्रामाणिक गुरू होने के नाते कोई शंका नही कि वे एक क्षण के लिए भी पथभ्रष्ट हो सकते हों:

"एक प्रामाणिक गुरू हर समय परम पुरूषोत्तम भगवान की अहैतुकी भक्ति सेवा में लगे रहते है।"
(चैतन्य चरितामृत आदि, **1.46**, भावार्थ)

श्रील प्रभुपाद ने बतलाया था कि एक गुरू तब ही गिर सकता है जब उसे दीक्षा देने की आज्ञा नही मिली हो:

"अगर किसी गुरू जिसे आज्ञा न मिली हो और स्वत: ही गुरू बन गया हो तो वह धन और अनुयायियों के लाभ में आ सकता है।" (भक्तिरसामृत-सिंधु, पृष्ठ **116**)

अगर कोई गुरू गिर जाता है तो असल में यह प्रमाण है कि अपने गुरू द्वारा उसे आज्ञा नही मिली थी। अगर एक भी इस्कॉन गुरू पथभ्रष्ट नही हुआ होता तो भी हम प्रश्न पूछ सकते थे कि दीक्षा देने की आज्ञा कहाँ से मिली।

जी.बी.सी. के साथ मुश्किल यह है कि इन स्पष्ट कथनों को वे स्वीकार नही कर सकते क्योंकि इसके कई खटटे परिणाम होंगे, क्योंकि सब इस्कॉन गुरू अपने आप को श्रील प्रभुपाद के द्वारा अधिकारित्व प्राप्त गुरू कहते है, उनमें से कुछ पथभ्रष्ट हो जाने से यह स्पष्ट सावित हो जाता है कि 'आदेश' ठीक

से समझा गया नही था? अगर उन्हें सही में आज्ञा मिली थी तो वे कभी पथभ्रष्ट नही हो सकते थे। बल्कि वे महाभागवत होते।

"गुरू हर समय मुक्त आत्मा होते है।" (श्रील प्रभुपाद का पत्र, 21/6/1970)

25. "जैसे ही श्रील प्रभुपाद के शिष्य आध्यात्मिक सिद्धि पा लेंगे, ऋत्विक प्रणाली बेकार हो जायेगी।"

कभी-कभी इस तरह की सोच को 'स्फॉफ्ट ऋत्विक' कहा जाता है। इसका मूल तर्क है कि ऋत्विक प्रणाली को लागू करने का एकमात्र कारण था कि श्रील प्रभुपाद को सशरीर प्रस्थान करने से पहले अपने शिष्यों में कोई भी शुद्ध भक्त नही मिला था।

यह मनगढ़त तर्क है क्योंकि श्रील प्रभुपाद ने ऐसा कभी नही कहा। इसका कोई प्रमाण नही है कि कोई योग्य भक्त नही मिलने के कारण ऋत्विक प्रणाली लागू की गई थी, और जैसे ही ऐसा योग्य भक्त मिलता है तब यह प्रणाली बंध कर देनी चाहिए। ऐसे विचार के अभाग्य विपरीत परिणाम ऋत्विक प्रणाली को केवल द्वितीय उत्तम या अस्थायी बनाना है, लेकिन असल में ऋत्विक प्रणाली श्रीकृष्ण की निपुण योजना है। इस प्रकार का तर्क देकर भविष्य में कोई भी प्रभावशाली महत्त्वकांक्षी भक्त, भक्ति के लक्षणों का ढोंग कर, ऋत्विक प्रणाली को रोक सकता था।

अगर इस्कॉन में कोई शुद्ध भक्त हो भी तो उन्हें भी ऋत्विक प्रणाली का अनुशरण करना चाहिए। असली योग्य भक्त तो श्रील प्रभुपाद के आदेशों का पालन करके प्रसन्न होगा।

इस भ्रम का एक कारण श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के गौडीय मठ को दिये हुए निर्देश हो सकता है। श्रील प्रभुपाद ने हमें बतलाया था कि उनके गुरू-महाराज का आदेश था कि एक जी.बी.सी. बनाओ और थोडे समय उपरान्त उनमें से एक स्वत: तेजस्वी आचार्य प्रकट होगा। जैसा हमें मालूम है, गौडीय मठ ने कभी इस निर्देश का पालन नही किया और इसका खराब परिणाम हम देख सकते है। कुछ भक्त सोचते है कि हमें भी एक स्वत: तेजस्वी आचार्य की खोज करनी चाहिये। और जब तक यह आचार्य प्रकट नही होता तब तक ऋत्विक प्रणाली कार्य कर सकती है।

इसमें मुश्किल यह है कि श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती द्वारा दिये गए निर्देशों और श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये निर्देशों में फर्क है। श्रील प्रभुपाद ने कहा था कि जी.बी.सी. उनकी संस्था का संचालन चालु रखेगी, पर उन्होंने यह कभी नही कहा कि एक स्वत: तेजस्वी आचार्य प्रकट होगा। उसकी जगह उ न्होंने एक ऋत्विक प्रणाली कायम की है जो 'इस समय से' लागू है। श्रील प्रभुपाद के शिष्य होकर हम उनको लाँघकर श्रील भक्तिसिद्धांत के निर्देशों का पालन करना शुरू नही कर सकते।

अगर श्रील प्रभुपाद को श्रीकृष्ण ने यह निर्देश दिया होता कि इस संस्था का नया आचार्य आने वाला है तो श्रील प्रभुपाद ने ऐसा कुछ अंतिम आदेश में लिखा होता। इसकी बजाय उन्होंने कहा कि उनकी किताबें ही विस्तृत होगी और यह कि उनकी किताबे दस हजार वर्ष के लिए कानून की किताबे होगी।

भविष्य के आचार्य के लिए क्या रह गया? श्रील प्रभुपाद ने एक ऐसा आंदोलन बनाया है जो समस्त पिछले आचार्यो की इच्छाओं की पूर्ति करता है।

इस्कॉन में नये स्वत: तेजस्वी आचार्य कैसे उभरेंगे अगर दीक्षा देना केवल श्रील प्रभुपाद का अधिकार है?

कइयों ने तर्क किया है कि आचार्य का अधिकार होता है कि स्थिति अनुसार प्रणाली बदल दी जाये। अत: नये आचार्य इस्कॉन की ऋत्विक प्रणाली बदल सकते है। परन्तु क्या एक प्रामाणिक आचार्य संस्थापकाचार्य के स्पष्ट निर्देशों के विरूद्ध जायेंगे? ऐसा करने से संस्थापकाचार्य के अधिपत्य पर गहरी चोट लगती है। इससे भ्रम और शंका का वातावरण छा जायेगा, क्योंकि शिष्यों को चुनना पड़ेगा कि किसके निर्देश का पालन करे।

अंतिम आदेश को पढ़ने से सारी शंकाएँ मिट जाती है। कही भी 'सॉफ्ट ऋत्विक' नही बतलाया गया है। पत्र सिर्फ कहता है 'इस समय से'। अत: यह कहना कि यह प्रणाली नए आचार्य के उभरने से खत्म हो जायेगी अपनी मनोधारणा को एक स्पष्ट निर्देश के ऊपर थोपना है। यह पत्र सिर्फ यही कहता है कि:

जब तक संस्था रहेगी तब तक श्रील प्रभुपाद इस्कॉन के एकमात्र दीक्षा गुरू होंगे।

यह समज श्रील प्रभुपाद की सोच से मेल खाती है जिसके अनुसार उन्होंने अपनी आंदोलन की सफलता के लिए खुद ही कदम उठा रखे थे। (कृपाया संबंधित आपत्ति **8** देखे: 'तुम क्या यह कहना चाहते हो कि श्रील प्रभुपाद ने एक भी शुद्ध भक्त नही बनाया? ')

कभी–कभी यह भी तर्क दिया जाता है कि **9** जुलाई का पत्र प्राथमिक रूप से ग्यारह ऋत्विक ही प्रामाणिक करता है। अत: उनके मरने या पथभ्रष्ट होने पर यह प्रणाली रूक जायेगी।

यह एक चरम तर्क है। **9** जुलाई का पत्र यह नही कहता कि श्रील प्रभुपाद ही ऋत्विक को चुन सकते है या और ऋत्विक जोड़े नही जा सकते। श्रील प्रभुपाद ने इस्कॉन के प्रबंधन के लिए और भी कई प्रणालियाँ स्थापित की थी जिनके सदस्य बढ़ाये जा सकता है, उदाहरणतया जी.बी.सी. खुद, जहाँ जरूरत होने पर नये सदस्य बधायें या कम किये जा सकते है। यह तर्कहीन बात होगी कि एक प्रबंधन की प्रणाली को अलग करके ऐसी ही महत्वपूर्ण दूसरी प्रणालियों से भिन्न बरताव किया जाये। श्रील प्रभुपाद ने कभी यह नही बतलाया था कि ऋत्विक प्रणाली को चलाने का तरिका दूसरी प्रणालियों से भिन्न होगा।

यह तर्क किसी वजह से प्रसिद्ध हो गया है, इसलिए हम इसके विरोध में निम्नलिखित बाते प्रस्तुत करेंगे।

1) टोपंगा केनयन टेप में तमाल कृष्ण गोस्वामी श्रील प्रभुपाद से अपने पूछे प्रश्न के बारे में बतलाते है जो उन्होंने ऋत्विकों कि सूची बनाते वक्त पूछा था:

> **तमाल कृष्ण:** "श्रील प्रभुपाद यह बस हुआ या आप किसी ओर को जोडना चाहते है?"
> **श्रील प्रभुपाद:** "जैसी जरूरत हो, वैसे दूसरों को जोड सकते हो।"
> (पिरामिड हाऊस गवाही, टोपंगा केनयन, **3/12/1980**)

निश्चित रूप से अगर किसी ऋत्विक का देहान्त हो गया हो या पथ-भ्रष्ट हो गये हो तो नये ऋत्विक को जोडने की जरूरत पड़ेगी।

2) 9 जुलाई के पत्र के अनुसार ऋत्विक की परिभाषा है: 'आचार्य के प्रतिनिधि'। यह जी.बी.सी. का अधिकार है कि वे किसी को भी, चाहे वह संन्यासी हो, टेम्पल प्रेसिडेन्ट हो या जी.बी.सी. सदस्य ही हो, श्रील प्रभुपाद के प्रतिनिधि के रूप में चुन सकते है या हटा सकते है। वर्तमान में वे दीक्षा गुरूओं को चुन रहे है जो साक्षात् भगवान के प्रतिनिधि होते है। अत: श्रील प्रभुपाद के कुछ प्रतिनिधियों जिन्हें केवल नाम देना है, को चुनने का कार्य जी.बी.सी. की क्षमता में आसानी से आता है।

3) 9 जुलाई का पत्र यह दर्शाता है कि श्रील प्रभुपाद की इच्छा थी कि 'इस समय से' ऋत्विक प्रणाली लागू हो जाये। उन्होंने जी.बी.सी. को प्रधान प्रबन्धन अधिकारी बनाया था जिससे जी.बी.सी. उनके द्वारा स्थापित समस्त प्रणालियों का व्यवस्थापन कर सके। भविष्य में दीक्षा देने के लिए उन्होंने ऋत्विक प्रणाली की स्थापना की थी। यह जी.बी.सी. का कर्तव्य है कि इस प्रणाली का व्यवस्थापन करे। इसके लिये अगर उन्हें किसी को निकालना या नियुक्त करना पडे तो यह उनका कर्तव्य है। उसी प्रकार जिस प्रकार वे दूसरी प्रणालियों का व्यवस्थापन करते है।

4) जुलाई **9, 11** एवं **21** के पत्र में 'धस फार', 'सो फार' (अब तक), 'इनिशिअल लिस्त' (प्रथम सूची) इत्यादी का उपयोग यह दर्शाता है कि इस सूची में परिवर्तन किया जा सकता है। परिवर्तन करने के लिए कुछ प्रकिया जरूर बनाई गई होगी, जिसे अब तक लागू नही किया गया है।

5) किसी भी निर्देश को समझने के लिए उसका उद्देश समझना अनिवार्य है। इस पत्र में निम्नलिखित कथन आते है की श्रील प्रभुपाद ने "अपने वरिष्ठ शिष्यों में से कुछ को 'ऋत्विक' आचार्य के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने के लिए" मनोनीत कीया। एवं श्रील प्रभुपाद ने "अब तक" ग्यारह नाम दिये है। एक आज्ञाकारी शिष्य का कर्तव्य है कि इस प्रणाली का उद्देश समझ कर कार्य करे। इस आदेश का निश्चित रूप से यह उद्देश नही था कि केवल कुछ चुने हुए वरिष्ठ शिष्य ('सो फार') ही आदिकाल तक दीक्षा संस्कार करेंगे। समय के अनुसार जब सब देह त्यागेंगे तो ऋत्विक प्रणाली खत्म हो जानी चाहिए। आदेश का उद्देश ये देखना था कि उसी समय से दीक्षा संस्कार चालू रहे। अत: यह प्रणाली तब तक चलनी चाहिए जब तक दीक्षा संस्कार देने की आवश्यकता हो। अत: आवश्यकतानुसार दूसरे वरिष्ठ भक्तों को 'आचार्य का प्रतिनिधि' नियुक्त करने से इस निर्दश के उद्देश की पूर्ति होती है।

6) श्रील प्रभुपाद की वसीयात में साफ लिखा हुआ है कि भारत की स्थायी भूसंपत्तियों के निदेशक उनके दीक्षित शिष्य में से ही होंगे। इस तथ्य को 9 जुलाई के पत्र के साथ मिलाने से साफ जाहिर हो जाता है कि श्रील प्रभुपाद चाहते थे कि ऋत्विक प्रणाली चलती रहे। जी.बी.सी.

का कार्य इस प्रणाली का निर्देशन करना था।

श्रील प्रभुपाद जब चाहें तब 9 जुलाई के निर्देश को रद कर सकते थे। परन्तु जैसा पूर्व में बतलाया गया था, रद करने का निर्देश श्रील प्रभुपाद के इस हस्ताक्षर युक्त पत्र के समान होना चाहिए। वैसे श्रीकृष्ण और उनके शुद्ध भक्त के लिये कुछ भी संभव होता है:

न्यूसडे पत्रकार: "वर्तमान में आप नायक एवं गुरू है। आपकी जगह कौन लेगा?"
श्रील प्रभुपाद: "वह कृष्ण आदेश देंगे, मेरी जगह कौन लेगा।"
(श्रील प्रभुपाद मुलाकात, 14/7/1976, न्यूयॉर्क)

तो भी, हम अपने आचार्य के उन आदेशों का पालन करना चाहेंगे जो हमे वास्तविकता मे मिले थे, न कि भविष्य में आने वाले आदेशों की कल्पना करना या खुद अपने ही आदेश बना लेना।

26. "ऋत्विक प्रणाली के समर्थक गुरू की शरण में नही जाना चाहते।"

कई भक्तों की यह धारणा है कि शरण में जाने के लिए गुरू को सशरीर उपस्थित होना होता है। उपर्युक्त आपत्ति ऐसी ही गलत धारणा पर आधारित है। अगर यह धारणा उचित होती तो वर्तमान में श्रील प्रभुपाद के मूल शिष्य उनकी शरण में नही जा रहे होते। गुरू की शरण में जाने का अर्थ होता है कि उनके आदेशों का पालन करना। यह प्रकिया उनके सशरीर उपस्थित होने पर निर्भर नही करती। इस्कॉन का उद्देश है भविष्य में आने वाले अनगिनत संभावित भक्तों को मार्गदर्शन और शिक्षा देना। यह प्रकिया अनगिनत शिक्षा संबंधों द्वारा जारी रह सकती है। वर्तमान जी.बी.सी. श्रील प्रभुपाद के आदेश का पालन करके दूसरों के लिये एक अच्छी मिसाल कायम कर सकती है। तब ढीठ ऋत्विक समर्थक भी उनकी देखा-देखी नम्र हो जायेंगे और गुरू की शरण लेने और सेवा करने के लिए प्रोत्साहित होंगे।

अगर मान भी ले कि समस्त ऋत्विक समर्थक किसी गुरू की शरण में जाने के लिए आनाकानी कर रहे है तो भी 9 जुलाई का आदेश निरस्त नही हो जाता। जी.बी.सी. को तो चाहिये कि श्रील प्रभुपाद के इतने महत्त्वपूर्ण निर्देश का पालन करके एक अच्छि मिसाल स्थापित करना। और किसी कारण से नही तो इसलिए कि ऋत्विक समर्थकों को सबक मिलेगा।

27. "अगर कोई दीक्षा गुरू नही होगा तो भक्तों का मार्गदर्शन कौन करेगा और उनको सेवा कौन देगा?"

अब भी दीक्षा गुरू रहेंगे: श्रील प्रभुपाद। मार्गदर्शन और सेवा अब भी उसी प्रकार मिलेगी जिस प्रकार श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति में मिलती थी, यानी कि उनकी पुस्तकें पढ़कर एवं शिक्षा गुरू संबंधो द्वारा। 1977 के पहले अगर कोई मंदिर में रहने आता था तो उसे भक्त लीडर, संकीर्तन लीडर, संन्यासी, रसोइये, पुजारी, टेम्पल प्रेसिडेंट इत्यादि द्वारा मार्गदर्शन मिलता था। श्रील प्रभुपाद से निजी मार्गदर्शन मिलना तो बहुत दुर्लभ होता था। बल्कि वे इस तरह का मार्गदर्शन देने से अलग होना चाहते

थे जिससे वे अपनी पुस्तकें लिख सके। हम निवेदन करते है कि अब भी वैसा ही होना चाहिए जैसा श्रील प्रभुपाद के समय हो रहा था।

28. "श्रील प्रभुपाद तीन बार निर्देश देते है कि एक शारीरिक गुरू की आवश्यकता अनिवार्य है। परन्तु आपका संपूर्ण तर्क इस तथ्य पर निर्भर है कि शारीरिक गुरू की आवश्यकता नही होती।"

"इसलिए, जैसे ही हमारा कृष्ण के प्रति थोड़ा रूझान होने लगता है, कृष्ण हमारे हृदय से हमे अनुकूल उपदेश देने लगते है, जिससे हम धीरे-धीरे प्रगति कर सकैं, धीरे-धीरे। कृष्ण प्रथम गुरू है, और जब हमें ज्यादा रूचि होने लगे तो हमे एक शारीरिक गुरू की शरण लेनी चाहिए।"
(श्रील प्रभुपाद भगवद्-गीता प्रवचन, **14/8/1966**, न्यूयॉर्क)

"क्योंकि कृष्ण सबके हृदय में स्थित है। असल में, वो ही गुरू है, चैत्य-गुरू। तो हमारी सहायता के लिये, वे बाहर निकलकर एक शारीरिक रूप में आते है।"
(श्रील प्रभुपाद श्रीमद-भागवतम् प्रवचन, **28/5/1974**, रोम)

"अत: भगवान को चैत्य गुरू कहा जाता है, हृदय में विराजमान गुरू। और शारीरिक गुरू भगवान की कृपा है...। भगवान तुम्हारी आन्तरिक एवं बाहय सहायता करेंगे, गुरू के शारीरिक रूप में बाहर से, और हृदय में बैठे गुरू द्वारा आन्तरिक रूप से।"
(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, **23/5/1974**)

श्रील प्रभुपाद ने "शारीरिक गुरू" का उपयोग यह समझाने के लिये किया कि बद्ध स्थिति में हम केवल चैत्य गुरू या परमात्मा के मार्गदर्शन पर निर्भर नही रह सकते। यह आवश्यक है कि परमात्मा के बाहय रूप की हम शरण लें। उन्हें दीक्षा गुरू कहते है। इस तरह के गुरू आध्यात्मिक जगत के निवासी और श्रीकृष्ण के अन्तरंग सहयोगी होते है। वे बद्ध पतित आत्माओं के उत्थान के लिए कभी-कभी सशरीर प्रकट होते है। वे कई बार आध्यात्मिक पुस्तके लिखते है जो शारीरिक आँखो द्वारा पढ़ी जा सकती है। वे प्रवचन देते है जो शारीरिक कानों द्वारा सुने जा सकते है और भौतिक टेप में रिकॉर्ड किये जा सकते है। वे अपनी शारीरिक मूर्ति छोडते है और हो सकता है कि वे एक शारीरिक जी.बी.सी. को भी छोडे जो उनकी सशरीर अनुपस्थिति में संस्था का प्रबंधन देखे।

परन्तु श्रील प्रभुपाद ने कभी भी ऐसा नही शिखाया कि गुरू का कार्य करने के लिए शारीरिक गुरू को सशरीर उपस्थित भी रहना आवश्यक है। जैसा हमने पहले इंगित किया था, अगर ऐसा होता तो वर्तमान में कोई भी उनका शिष्य नही कहलाता। अगर दिव्य ज्ञान की प्राप्ति के लिए सशरीर गुरू की वर्तमान में उपस्थिति अनिवार्य होती तो श्रील प्रभुपाद के समस्त शिष्यों को किसी गुरू द्वारा पुन: दीक्षा लेनी चाहिए। इसके अलावा कई हजार शिष्यों ऐसे भी थे जो श्रील प्रभुपाद के शरीर के निकट आये बगैर भी दीक्षित हुए थे। तो भी सब यह स्वीकारते है कि इन शिष्यों ने गुरू का संग लिया, प्रश्न पूछे, शरण ली, सेवा की और दीक्षा ली। उपर्युक्त तीनों कथनों का प्रमाण देकर कोई इन शिष्यों की दीक्षा को नही नकारता।

29. "क्या दीक्षा गुरू बद्ध आत्मा हो सकते है?"

जैसा हम पहले बतला चुके है, श्रील प्रभुपाद के समस्त उपदेशों मे सिर्फ एक जगह पर दीक्षा गुरू की योग्यता बतलायी गयी है (चैतन्य चरितामृत मध्य, **24.330**)। चैतन्य चरितामृत का यह भाग केवल दीक्षा संबंधित ही है। यह कथन स्पष्ट रूप से स्थापित करता है कि दीक्षा गुरू महाभागवत ही होना चाहिए। यहाँ महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि श्रील प्रभुपाद 'मस्ट' (जरूरी) एवं 'ओनली' (केवल) शब्द का उपयोग करते है। इससे ज्यादा और जोर नही दिया जा सकता। ऐसा कही कथन नही है कि दीक्षा गुरू एक बद्ध आत्मा हो सकते है। यह आश्चर्यजनक नही है क्योंकि श्रील प्रभुपाद को गुरू तत्त्व की सब जानकारी है। कुछ ऐसे कथन जरूर आते है जो कभी-कभी यह आभास कराते है कि गुरू एक बद्ध आत्मा हो सकता है। ये दो श्रेणियों में आते है:

1) शिक्षा गुरू की योग्यता का वर्णन करने वाले कथन: ये कथन ज्यादातर यह बतलाते है कि गुरू बनना बहुत सरल है, कि कैसे बच्चे भी बन सकते है। ये ज्यादातर श्री चैतन्य के 'अमार आज्ञाय' श्लोक से संबंधित होते है।

2) गुरू बनने की विधी करने वाले कथन: इन कथनों में ज्यादातर 'बनना' शब्द आता है। ये बताते है कि नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन करने से आध्यात्मिक प्रगति होती है एवं गुरू बनने के लिए योग्यता मिल सकती है। परन्तु यह कथन कभी नही कहते कि अंत में गुरू की योग्यता महाभागवत से कम भी हो सकती है। यह केवल विधि का वर्णन करते है।

हमने यह उत्तर को संक्षिप्त रखा है क्योंकि इसके ऊपर एक दूसरा लेख लिखा जा सकता है। यहाँ यह महत्त्वपूर्ण नही है कि गुरू की योग्यता क्या होनी चाहिए। महत्त्वपूर्ण यह समझना है कि श्रील प्रभुपाद ने क्या आदेश दिये थे। ऋत्विक प्रणाली केवल इसलिए लागू नही करनी चाहिए क्योंकि दीक्षा गुरू महाभागवत होना चाहिए। परन्तु इसलिए कि श्रील प्रभुपाद ने यह आदेश दिया है। हमें केवल यह देखना है कि श्रील प्रभुपाद ने क्या आदेश दिया एवं उस आदेश का पालन करना चाहिए। यह लेख श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेशों के संबंध में लिखा गया है।

30. "श्रील प्रभुपाद ने जी.बी.सी. को संस्था का निर्देशक बनाया है और जी.बी.सी. ने संस्था में इसी तरह से दीक्षा देने का फैसला किया है।"

- 'श्रील प्रभुपाद ने प्रबंधन प्रणालियों को बदलने का अधिकार **जी.बी.सी.** को कभी नही दिया था:

  "प्रस्तावित: श्री श्रीमद ए.सी. भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद आंतराष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ के संस्थापकाचार्य एवं प्रमुख है। उन्होंने संघ के प्रबन्धन के लिए अपने प्रतिनिधि के रूप में जी.बी.सी. (गवर्निंग बॉडी कमीशन) की स्थापना की है। उनके दिव्य उपदेशों को जी.बी.सी.अपना प्राणधन मानती है और स्वीकारती है कि उनकी कृपा पर ही वे संपूर्णतया निर्भर

है। जी.बी.सी. का एकमात्र उद्देश है – श्री श्रीमद् द्वारा प्रेमपूर्वक दिये हुए निर्देशों का पालन करना, उनके उपदेशों की रक्षा करना और उनको शुद्ध रूप में संपूर्ण दुनिया में फैलाना।"
(जी.बी.सी. की परिभाषा, नियम 1, जी.बी.सी. मिनटस् 1975)

"प्रबन्धन प्रणाली जिस प्रकार चल रही है उसी प्रकार चलती रहेगी और इसमें परिवर्तन करने की कोई आवश्यकता नही है।"
(श्रील प्रभुपाद की वसीयत, 4/6/1977)

- इस्कॉन में दीक्षा का प्रबंध करने के लिए उन्होंने ऋत्विक प्रणाली चुनी थी। जी.बी.सी. का एकमात्र कार्य है इस प्रणाली को ठीक से चलना न कि उसे बंद कर देना और उसकी जगह दूसरी प्रणाली एवं नियम लागू करना।

"अब तक जो मैने तुम्हें दिये है, उनको नियमितता से पालन करने की कोशिश करते रहो। कोई नया आविष्कार मत करना अन्यथा सब बर्बाद हो जायेगा।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र पुष्ट कृष्ण एवं बली मर्दन को, 18/9/1972)

"अब मैने हमारी कृष्ण भावनामृत संस्था के नियमों के निरिक्षण और पालन के लिये जी.बी.सी. को अधिकार दिया है। अत: जी.बी.सी. को बहुत सतर्क रहना होगा। समस्त निर्देश मैने पहले ही अपनी पुस्तकों मे दे दिये है।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र सत्स्वरूप को, 13/9/1970)

"मूल रूप से मैने 12 जी.बी.सी. सदस्य नियुक्त किये है और उनको 12 क्षेत्र दिये है जिनका वे प्रबंधन कर सके। परन्तु सामूहिक सहमति द्वारा तुमने सब कुछ बदल दिया, तो यह क्या है, मुझे नही मालूम।"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र रूपानगा को, 4/4/1972)

"जब मै यहाँ नही रहूँगा तब क्या होगा? क्या सब कुछ जी.बी.सी. द्वारा नष्ट हो जायेगा?"
(श्रील प्रभुपाद का पत्र हंसदूत को, 11/4/1972)

श्रील प्रभुपाद द्वारा दिये गये निर्देशो के अधीन रह कर ही जी.बी.सी. को कार्य करना चाहिए। हमे यह देख कर दु:ख होता है कि श्रील प्रभुपाद का प्रतिनिधि मंडल अपना कार्य नही कर पा रहा, क्योंकि यह श्रील प्रभुपाद की आशा थी कि समस्त भक्तगण जी.बी.सी. के निर्देशन में ही सहयोग से कार्य करेंगे।

हम सबको श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश के आधीन सहयोग से कार्य करना चाहिए।

निष्कर्ष

हमे आशा है कि इस लेख को पढ़कर पाठकों को इस्कॉन में दीक्षा संबंधी श्रील प्रभुपाद का अंतिम आदेश ओर गहराई से समझमें आया होगा। इस प्रकिया में अगर हमने किसी को रोष पहुँचाया हो तो हमे क्षमा कर दीजिएगा। यह हमारा आशय नही था।

इस लेख के शुरू में हमने जोर देकर कहा था कि अगर दीक्षा संबंधी आदेशों का उचित ढ़ंग से पालन नही हो रहा है तो इसका कारण किसी की जानबूझकर गलती नही ही। अत: किसी को दोष देने में व्यर्थ ही समय नही गँवाना चाहिए। यह सत्य है कि आचार्य जब प्रस्थान करते है तो उस समय कुछ भ्रम फैलता है। उन्नीस साल का भ्रम इस आंदोलन के **9500** वर्ष के इतिहास का एक बहुत छोटा अंश है। अब समय आ चुका है कि अपनी गलती समझकर, उनसे सीखकर और इस समय को अपने पीछे छोड़कर इस्कॉन का फिर से सुदृढ एवं मजबूत बनाया जाये।

हो सकता है कि ऋत्विक प्रणाली को धीरे-धीरे लागू करना आवश्यक पड़े। ऐसा भी हो सकता है कि शुरू के कुछ समय के लिये इस प्रणाली को म.आ.स.सि. प्रणाली के समानांतर चलाया जाये जिससे ज्यादा तनाव एवं अशांति न फैले। इन सब विषयों को बहुत गंभिरता और सहजता से सोचना पड़ेगा। जब तक सबका लक्ष्य श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश को लागू करना है, तब दूसरों की भावना को अच्छी तरह समजना होगा। समस्त भक्तों के प्रति प्यार और समझदारी से व्यवहार करना होगा, उनको स्थित होने के लिए समय देना होगा। गुरू और दीक्षा संबंधित श्रील प्रभुपाद के उपदेशों को अगर कमबद्ध तरीके से समस्त भक्तगण को सिखाया जाये तो हमे विश्वास है कि बहुत जल्द ही और बिना ज्यादा समस्या के यह परिस्थिति ठीक हो जाएगी।

इस विषय अंर्तगत कई लोगों में शत्रुता बनी हुई है, ऋत्विक प्रणाली की सत्यता एवं व्यावहारिकता पर जब सहमति हो जाए तब दोनों पक्षों को ठंडा होने के लिए थोड़ा वक्त जरूर लगेगा। थोडा समय अवकाश लेकर दोनों पक्षों को घुल-मिलकर एक दूसरे को फिर से जानने-समझने और मित्रता संबंध स्थापित करने पडेंगे। अभाग्य से इस समय भी बहुत उत्तेजना है। ज्यादा ऋत्विक समर्थकों की तरफ से। हम अपने लिए तो कह सकते है कि श्रील प्रभुपाद के सशरीर प्रस्थान उपरान्त अगर हम खुद वरिष्ठ भक्त होते तो संभवतया हम भी वही गलती करते जो अभी तक हुई है। हो सकता है ज्यादा गलतियाँ करते।

यह हमारा अनुभव है कि इस्कॉन के वरिष्ठ भक्तों ने ऋत्विक विषय का उचित परीक्षण नही किया है। अभाग्य से ज्यादातर ऋत्विक लेख निजी आक्रमण और उत्तेजक कथनों से भरे होते है, जिससे हर कोई प्रणाली को गलत मानने लगता है। सबसे उत्तम व्यवस्था यही होगी कि स्वयं जी.बी.सी. इस विषय को सुलझा ले। जी.बी.सी. के सामने सही माहिती रखने के साथ हमे विश्वास है कि समयसर सब कुछ ठीक हो जाएगा। असंतुष्ट एवं कड़वाहट महसूस करते भक्तो, जिसमें से कुछ भक्तो को शायद ऐसा भी ध्येय हो जो श्रील प्रभुपाद के अंतिम आदेश के साथ सुसंगत न हो, उनके द्वारा बदलाव के सतत दबाव में रहने से तो अच्छा निश्चित रूप से यह अधिक इच्छनीय होगा।

हम मानते है कि हम भी मनुष्य के चार विकारों से भरे है। अत: हम कीसी तरह की टिप्पणी एवं आलोचना स्वीकारने को तैयार है। हमारी दिली मनोकामना है कि इस लेख से श्री श्रीमद् प्रभुपाद के इस्कॉन मे उनके प्रस्थान उपरान्त फैले भ्रम और विवादास्पद स्थिति को खत्म करने में सहायता मिले। अत: हमारे अपराधों को क्षमा कीजिएगा। श्रील प्रभुपाद की जय हो।

केवल श्रील प्रभुपाद ही हमको एक कर सकते है।

ऋत्विक क्या है?

सामान्यत: ऋत्विक की परिभाषा निम्नलिखित दो गलत तरीके से दी जाती है:

1) एक तुच्छा पुजारी, केवल संस्कार करने वाला, जो एक तंत्र की तरह आध्यात्मिक नाम देता रहता है।

2) दीक्षा गुरू के उत्तराधिकारी जो पूर्ण योग्यता प्राप्त करने पर 'ऋत्विक' की तरह कार्य करना छोड़कर खुद दीक्षा देने लगेंगे।

उपरोक्त परिभाषाओं को अब हम श्रील प्रभुपाद द्वारा दिए गए ऋत्विक के कार्य से मिलाते है:

परिभाषा **1) –** ऋत्विक एक बेहद उत्तरदायित्त्व का कार्य है। यह इससे स्पष्ट होता है कि श्रील प्रभुपाद ने केवल ऐसे **11** भक्तों को ही चुना जो पहले से उनके आंदोलन में कई महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्त्व ले चुके थे। यह नाम उन्होनें ऐसे ही नही दे दिए। इस प्रकार, ज्यादातर तो इनका कार्य रोजमर्रा का था, तो भी दीक्षा प्राप्ति करने के कठिन स्तर तक नही पहुँचने वालों को अलग परखने के लिए वे ही सबसे पहले थे। जैसे कि एक पुलिस सिपाही का कार्य रोजमर्रा का होता है, क्योंकि ज्यादातर नागरिक नियम बद्ध होते है, फिर भी कई बार यही पहले व्यक्ति होते है जिनको मालूम होता है कि अपराध कहा हुआ है। श्रील प्रभुपाद ने कई बार यह इच्छा जताई थी कि दीक्षा तभी मिलनी चाहिए जब एक भक्त, कम से कम छ: माह तक **16** माला जाप कर रहा हो, उनकी पुस्तके पढ़ रहा हो, इत्यादी। अगर कोई भक्त इन नियमों से किसी का पालन नही कर पा रहे हो तो टेम्पल प्रेसिडेन्ट द्वारा ऋत्विक के कहने पर भक्त को दीक्षा देने की मनाही हो सकती है। इस तरह ऋत्विक का कार्य है कि श्रील प्रभुपाद के इस धरती से प्रस्थान करने के उपरान्त इस्कॉन का आध्यात्मिक स्तर वैसा ही रहे।

वैसे खुद ऋत्विक को भी इन नियमों का दृढतापूर्वक पालन करना होगा और उस तरह वह एक योग्य शिक्षा गुरू भी होगा। परन्तु यह जरूरी नही कि ऋत्विक का दीक्षित भक्त के साथ शिक्षा का संबंध होगा ही। ऋत्विक उस भक्त का शिक्षा गुरू हो सकता है या नही भी। अगर कोई ऋत्विक शिक्षा गुरू भी बनता है तो यह कार्य उसके ऋत्विक कार्य से बिल्कुल अलग होगा। श्रील प्रभुपाद की सशरीर मौजूदगी में भी नये दीक्षित शिष्य अपने ऋत्विक से कई बार नही मिलते थे। ऋत्विक उनका नया आध्यात्मिक नाम पत्र द्वारा भेज देते थे और टेम्पल प्रेसिडेन्ट दीक्षा यज्ञ करते थे। मगर इसमें कोई हर्ज नही कि ऋत्विक खूद भी दीक्षा यज्ञ सम्पादित करे, अगर टेम्पल प्रेसिडेन्ट सहमत हो तो।

परिभाषा **2) –** जैसा हम पहले कई बार कह चुके है, दीक्षा गुरू बनकर शिष्य अपनाने के लिए उस भक्त को एक आदेश प्राप्त महाभागवत होना जरूरी है। श्रील प्रभुपाद अपना शरीर छोड़ने से पहले इस्कॉन में ऐसी प्रणाली लागू करके गए जिससे किसी ओर के द्वारा दीक्षा देने अवैध हो जाता है। इस प्रकार श्रील प्रभुपाद के अलावा आगे चलकर किसी के पास दीक्षा देने का अधिकार नही है। अत: अगर कोई ऋत्विक या कोई और महाभागवत बन भी जाता है तो भी, अगर उसे इस्कॉन में रहना है तो उसे इसी ऋत्विक प्रणाली का ही पालन करना होगा। हमें **9** जुलाई **1977** को आदेश दिया गया

था जिसमें उन ऋत्विक के आगे चलकर दीक्षा गुरू बनने की बात नही लिखी गई है।

ऋत्विक क्या करते है और उनका चयन किस प्रकार होता है:

क) ऋत्विक, श्रील प्रभुपाद की ओर से, शिष्य अपनाते है, उन्हें नया आध्यात्मिक नाम देते है, उनकी माला पर जप करते है एवं दूसरी दीक्षा में गायत्री मंत्र देते है। यह कार्य उन्हें **9** जुलाई के पत्र के द्वारा श्रील प्रभुपाद ने सौंपा था (कृपया **9** जुलाई पत्र देखे, पृष्ठ **103**)। यह ऋत्विक टेम्पल प्रेसिडेन्ट द्वारा अनुमोदन के लिए भेजी गई सभी सिफारिशों का परिक्षण करते थे कि क्या यह शिष्य भक्ति के नियमों का पालन कर रहा है।

ख) ऋत्विक एक पुजारी भी है, अत: वह एक योग्य ब्राह्मण होना चाहिए। ऋत्विक का चयन करते वक्त श्रील प्रभुपाद ने पहले 'वरिष्ठ संन्यासीयों' को नियुक्त करने को कहा था परन्तु उन्होंने अन्त में कुछ ऐसे भक्त भी नियुक्त किए जो संन्यासी नही थे (कृपया परिशिष्ट में **7** जुलाई का वार्तालाप देखे, पृष्ठ **122**)। वस्तुत: सारे ऋत्विक चाहे संन्यासी थे या नही, वे श्रील प्रभुपाद के आंदोलन का प्रबंधन करने वाले वरिष्ठ भक्त थे जो ऋत्विक के कार्य के लिए योग्य थे।

ग) भविष्य में जी.बी.सी. दूसरे ऋत्विकों का चयन कर सकती है। वस्तुत: उनका चयन करने और हटाये जाने की कार्यशाली उसी तरह होगी जिस तरह वर्तमान की दीक्षा गुरू प्रणाली की है। श्रील प्रभुपाद ने जी.बी.सी. को इस तरह के अधिकार दे रखे है, क्योंकि उनको इस से भी ज्यादा वरिष्ठ व्यक्तियों जैसे कि संन्यासी, ट्रस्टी और क्षेत्रिय सचिव का चयन एवं समीक्षा करने का अधिकार था। **1980** के "टोपंगा केनयन" सभा में तमाल कृष्ण गोस्वामी ने यह स्वीकार किया है कि जी.बी.सी. ओर भी ऋत्विकों का चयन कर सकती थी (कृपया परिशिष्ट देखे, पृष्ठ **127**)

अत: सारांश में यह प्रणाली उसी तरह कार्य करेगी जिस तरह श्रील प्रभुपाद के इस धरती पर सशरीर उपस्थित होने पर चलती थी। सब भक्तों का आपसी संबंध, आचरण इत्यादी उसी तरह होगा जिस प्रकार **1977** में श्रील प्रभुपाद की सशरीर उपस्थिति के अंतिम चार माह में थे। जिस प्रकार श्रील प्रभुपाद अपनी वसीयत में जोर देकर कहते है –

"प्रबन्धन प्रणाली जिस प्रकार चल रही है उसी प्रकार चलती रहेगी और इसमें परिवर्तन करने की कोई आवश्यकता नही है।"

दीक्षा

"दीक्षा एक प्रकिया है जिससे दिव्य ज्ञान प्रकाशित होता है और पाप कर्म के फलों का नाश होता है। एक दक्ष व्यक्ति जिसे शास्त्रों का ज्ञान है वह इस प्रकिया को दीक्षा कहता है।"
(चैतन्य चरितामृत, मध्य **15.108**)

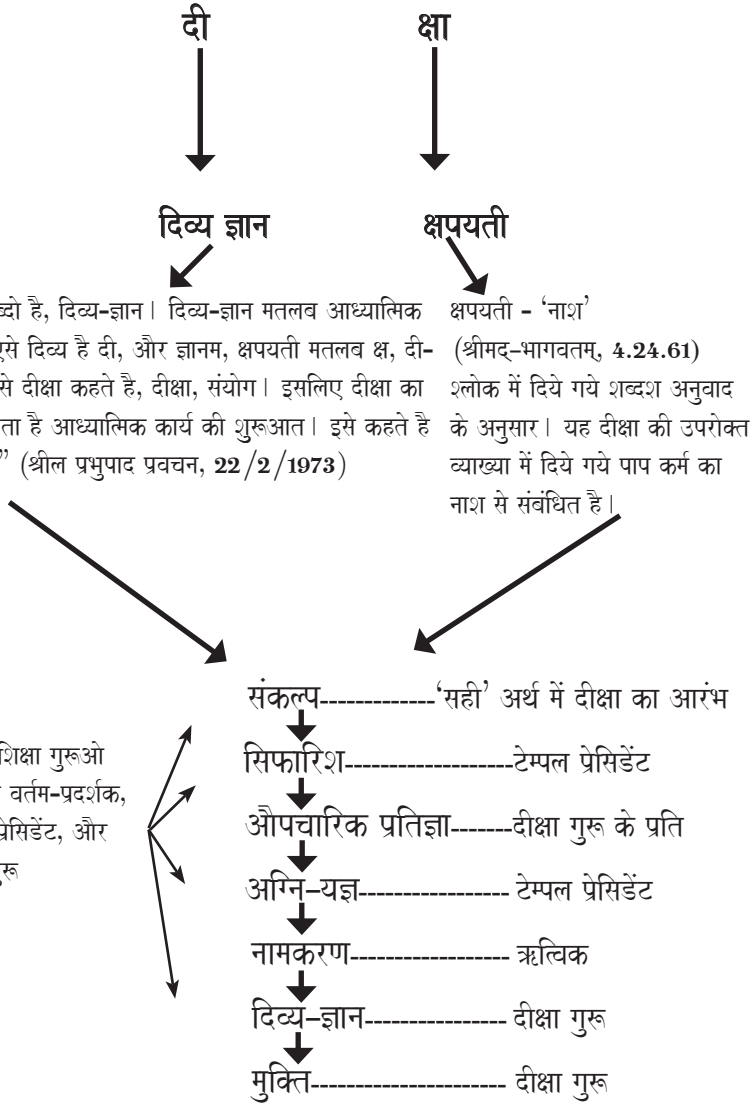

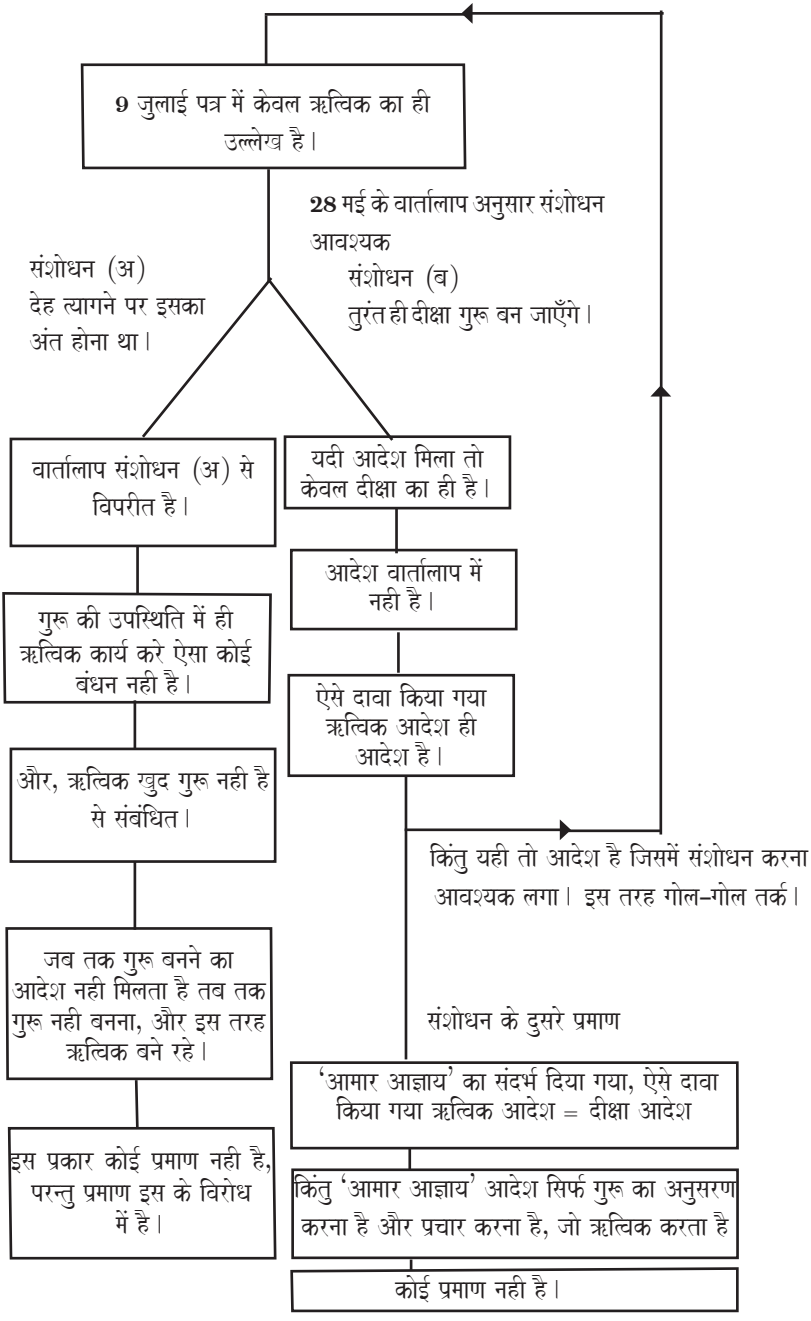
9 जुलाई पत्र में केवल ऋत्विक का ही उल्लेख है।
28 मई के वार्तालाप अनुसार संशोधन आवश्यक
संशोधन (ब)
तुरंत ही दीक्षा गुरू बन जाएँगे।
संशोधन (अ)
देह त्यागने पर इसका अंत होना था।
वार्तालाप संशोधन (अ) से विपरीत है।
यदी आदेश मिला तो केवल दीक्षा का ही है।
आदेश वार्तालाप में नही है।
गुरू की उपस्थिति में ही ऋत्विक कार्य करे ऐसा कोई बंधन नही है।
ऐसे दावा किया गया ऋत्विक आदेश ही आदेश है।
और, ऋत्विक खुद गुरू नही है से संबंधित।
किंतु यही तो आदेश है जिसमें संशोधन करना आवश्यक लगा। इस तरह गोल–गोल तर्क।
जब तक गुरू बनने का आदेश नही मिलता है तब तक गुरू नही बनना, और इस तरह ऋत्विक बने रहे।
संशोधन के दुसरे प्रमाण
'आमार आज्ञाय' का संदर्भ दिया गया, ऐसे दावा किया गया ऋत्विक आदेश = दीक्षा आदेश
इस प्रकार कोई प्रमाण नही है, परन्तु प्रमाण इस के विरोध में है।
किंतु 'आमार आज्ञाय' आदेश सिर्फ गुरू का अनुसरण करना है और प्रचार करना है, जो ऋत्विक करता है
कोई प्रमाण नही है।

क्या गुरू को सशरीर उपस्थित होना अनिवार्य है?

"सशरीर उपस्थिति महत्त्वपूर्ण नही है। गुरू द्वारा प्राप्त दिव्य वाणी की उपस्थिति ही जीवन में मार्ग दर्शक होनी चाहिए। यही हमारे आध्यात्मिक जीवन को सफल बनाएगी। यदी तुम्हें मेरी अनुपस्थिति का अत्यधिक आभास हो रहा है तो मेरे बैठने के स्थानों पर मेरे चित्र (फोटो) रख दो और यह तुम्हारे लिए प्रोत्साहन का स्त्रोत बनेगा।"

(ब्रह्मानंद तथा अन्य शिष्यों को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 19/1/1967)

"परन्तु सदा याद रखो कि मै सदा तुम्हारे साथ हूँ। जिस प्रकार तुम हमेशा मेरा चिन्तन करते रहते हो उसी प्रकार मै भी हमेशा तुम्हारे बारे में सोचता हूँ। चाहे हम शारीरिक रूप से एक साथ न हों फिर भी हम आध्यात्मिकरूप से अलग नही है। अत: हमें इस आध्यात्मिक संबंध के बारे में ही चिन्तन करना चाहिए।"

(गौरसुन्दर को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 13/11/1969)

"इस तरह हमें वाणी (प्रकंपन) द्वारा संग करना चाहिए, भौतिक उपस्थिति द्वारा नही। यही सच्ची संगत है।"

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, श्रीमद-भागवतम्, 18/08/1968)

"उपस्थिति को दो प्रकार से समझा जा सकता है - सशरीर उपस्थिति और वाणी की उपस्थिति। सशरीर उपस्थिति नश्वर है जबकि वाणी की शाश्वत है...। जब हमें कृष्ण और गुरू से वियोग की अनुभूति हो तब हमें केवल उनके आदेशों को याद करना चाहिए और फिर यह वियोग का आभास नही रहेगा। कृष्ण और गुरू से इस प्रकार का संग वाणी का संग होना चाहिए, शारीरिक उपस्थिति का नही। यही सच्चा संग है।"

(कृष्ण भावनामृत की प्राप्ति, अध्याय 4)

"यदयापि भौतिक दृष्टि से श्रीमद् भक्तिसिद्धांन्त सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद इस जगत से सन् 1936 के दिसम्बर के आखरी दिन को प्रस्थान कर चुके है फिर भी अब भी मै यही मानता हूँ कि वे अपनी वाणी, अपने शब्दों द्वारा मेरे साथ हमेशा उपस्थित है। संग करने के दो तरीके होते है: वाणी से और वपु से। वाणी अर्थात् शब्द और वपु अर्थात सशरीर उपस्थिति। सशरीर उपस्थिति कभी-कभी प्रशंसनीय है, और कभी नही। लेकिन वाणी सनातन रहती है। अत: हमें वाणी का ही लाभ उठाना चाहिए, सशरीर उपस्थिति का नही।"

(चैतन्य चरितामृत, अंत्य, निष्कर्ष में कह गये शब्द)

"अत: हमें वाणी का लाभ उठाना चाहिए, सशरीर उपस्थिति का नही।"

(श्रील प्रभुपाद का पत्र सूची देवी दासी को, 4/11/1975)

"मै तुम्हारा निजी मार्गदर्शक बना रहूँगा चाहे सशरीर उपस्थित रहूँ या नही। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार मुझे मेरे गुरू महाराज द्वारा व्यक्तिगत मार्गदर्शन मिल रहा है।"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, 14/7/1977, वृन्दावन)

"यह गलत धारणा है कि भक्तियुत सेवा में रत भक्तों से यदि किसी को संग करना है तो वह अपनी आर्थिक समस्याओं का समाधान नही कर सकता। इस तर्क का उत्तर देने के लिए यहाँ यह वर्णन किया गया है कि व्यक्ति को मुक्तात्माओं का संग करना चाहिए लेकिन प्रत्यक्ष रूप से नही, सशरीर रूप से नही, बल्कि जीवन की समस्याओं को फिलसूफी एवं तर्क से समझकर।"

(श्रीमद-भागवतम्, 3.31.48, भावार्थ)

"मै हमेशा तुम्हारे साथ हूँ। चिन्ता ना करो अगर मै सशरीर अनुपस्थित रहूँ।"

(जयानंद को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 16/9/1967)

परमानन्द: "हम हमेशा आपकी उपस्थिति का तीव्र अनुभव कर रहे है, श्रील प्रभुपाद [...] केवल आपके उपदेशों और आदेशों द्वारा। हम सदैव आपके आदेशों पर चिन्तन कर रहे है।"

श्रील प्रभुपाद: "धन्यवाद। यही सच्ची उपस्थिति है। सशरीर उपस्थिति महत्त्वपूर्ण नही होती।"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, 6/10/1977, वृन्दावन)

"तुमने लिखा है कि तुम मेरा संग पाने को फिर इच्छुक हो, लेकिन तुम यह क्यों भूल गई कि तुम हमेशा मेरे संग में हो? जब तुम मेरे आंदोलन के कार्य में सहायता कर रहे हो तो मै हमेशा तुम्हारे बारे में सोच रहा हूँ और तुम भी हमेशा मेरे बारे में सोच रही हो। यही सच्चा संग है। जिस तरह मै प्रति क्षण अपने गुरू महाराज के बारें में सोच रहा हूँ यदयापि वे सशरीर विदयमान नही है और चूँकि मै अपनी पूरी क्षमता से उनकी सेवा करने की कोशीश कर रहा हूँ मुझे पूरा विश्वास है कि वे अपना आशीर्वाद देकर मेरी सहायता कर रहे है। अत: दो प्रकार के संग होते है: सशरीर और उपदेशात्मक । सशरीर संग उपदेशात्मक संग जितना महत्त्वपूर्ण नही होता।"

(गोविन्द दासी को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 17/8/1969)

"जहाँ तक मेरे आशीर्वाद का सवाल है इसके लिए मेरी सशरीर उपस्थिति आवश्यक नही है। यदी तुम वहाँ हरे कृष्ण महामंत्र का जप कर रहे हो, और मेरे आदेशों का पालन कर रहे हो, मेरी पुस्तकें पढ़ रहे हो, केवल कृष्ण प्रसाद ले रहे हो, इत्यादी तब तुम्हें उन भगवान श्री चैतन्य महाप्रभु के आशीर्वाद न मिलने का प्रश्न ही नही उठता, जिनके आंदोलन को मै विनम्रतापूर्वक आगे बढाने की कोशीश कर रहा हूँ।"

(बाल कृष्ण को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 30/6/1974)

"जिस व्यक्ति भगवान एवं गुरू में अटूट आस्था रखता है उसे शास्त्रों का अर्थ अपने आप स्पष्ट हो जाता है। इसलिए अपनी अभिरूचि जारी रखो और तुम अपनी आध्यात्मिक प्रगति में सफल रहोंगे। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि मै तुम्हारे सामने सशरीर रूप से उपस्थित न भी रहूँ तब भी यदि तुम उपर्युक्त तत्त्वों का पालन करोंगे तो तुम कृष्ण भावनामृत मे अपने सारे आध्यात्मिक कर्तव्यों को निभाने में सक्षम रहोंगे।"

(सुबल को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 29/9/1967)

"अतएव यदयापि भौतिक शरीर न रहे, वाणी को ही गुरू की उपस्थिति समझना चाहिए, वाणी। जो हमने गुरू से सुना है, वही जीवंत है।"

(श्रील प्रभुपाद का प्रवचन, 13/1/1969, लॉस एंजिल्स)

रेवती-नन्दन: "तो कभी-कभी गुरू बहुत दूर होते है। वे लॉस एंजिल्स में हो सकते है। कोई हेमवर्ग मंदिर में आता है और सोचता है, 'गुरू को किस प्रकार संतुष्ट किया जाए?'"

श्रील प्रभुपाद: "केवल उनके आदेशों का पालन करो, गुरू अपने शब्दो द्वारा तुम्हारे साथ है। जिस तरह मेरे गुरू सशरीर उपस्थित नही है, लेकिन मै उनके शब्दों द्वारा उनका संग कर रहा हूँ।"

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, 18/8/1971)

"जिस तरह मै काम कर रहा हूँ तो मेरे गुरू महाराज उपस्थित है, भक्ति सिद्धान्त सरस्वती। सशरीर शायद वे नही है, लेकिन हर कार्य में वे उपस्थित है।"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, 27/5/1977, वृन्दावन)

"तो उसे प्राकृत कहते है, सशरीर उपस्थित। और एक दूसरा पहलू है जिसे कहते है अप्राकृत सशरीर अनुपस्थित। लेकिन इसका मतलब यह नही है कि कृष्ण मर गए है या भगवान मर गए है। उसका यह मतलब नही है, प्राकृत या अप्राकृत, सशरीर उपस्थित या अनुपस्थित इससे कोई फर्क नही पडता।"

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, 11/12/1973, लॉस एंजिल्स)

"तो आध्यात्मिक रूप से वियोग का कोई प्रश्न नही उठता जबकि हो सकता है हम भौतिक रूप से बहुत दूर हों।"

(श्यामा-दासी को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 30/8/1968)

"मै कृष्ण भावनामृत का प्रचार हेतु तुम्हारे देश गया और मेरे इस कार्य में तुम मदद कर रहे हो। हालांकि मै वहाँ तुम्हारे साथ भौतिक रूप से उपस्थित नही हूँ लेकिन आध्यात्मिक रूप से मै सदा तुम्हारे साथ हूँ।"

(नंदरानी, कृष्ण देवी, सुबल और उद्धव को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 3/10/1967)

"वास्तव में हम बिछुडे नही है। दो चीज होती है – वाणी और वपु। तो वपु है सशरीर उपस्थिति, और वाणी है शब्दों द्वारा उपस्थिति। लेकिन यह सब एकसमान है।"

(हंसदूत को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 22/6/1970)

"तो गुरू की सशरीर उपस्थिति के अभाव में वाणी सेवा ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। ऐसा प्रतीत हो सकता है कि मेरे गुरू सरस्वती गोस्वामी ठाकुर भौतिक रूप से अनुपस्थित है फिर भी क्योंकि मै उनके आदेश की सेवा करने का प्रयास कर रहा हूँ अत: मुझे उनसे कभी वियोग की अनुभूति नही होती।"

(करंधरा को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 22/8/1970)

"मै तो कभी अपने गुरू महाराज से वियोग का अनुभव नही करता। जब मै उनकी सेवा में लगा रहता हूँ तो उनकी तस्वीरे मुझे पर्याप्त शक्ति प्रदान करती है। आध्यात्मिक गुरू की वाणी सेवा उनके शरीर की सेवा से अधिक महत्त्वपूर्ण है।"

(श्यामसुन्दर को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 19/7/1970)

आदेश का अनुसरण करो, शरीर का नही।

"जहाँ तक गुरू के साथ व्यक्तिगत संग का प्रश्न है, मै केवल चार या पाँच बार अपने गुरू महाराज के साथ था, लेकिन मैने उनका संग कभी नही छोडा है, एक क्षण के लिए भी नही, क्योंकि मै उनके आदेश का पालन कर रहा हूँ, मुझे कभी भी उनके वियोग का आभास नही हुआ। यहाँ भारत में मेरे कई गुरू भाई है जो निरन्तर मेरे गुरू महाराज के व्यक्तिगत संग में रहते थे, लेकिन वे उनके आदेशों की अवहेलना कर रहे है। यह एक राजा की गोद में बैठे हुए कीडे की तरह है। वह अपने पद के कारण बहुत घमण्डी हो सकता है, लेकिन राजा को काटने में ही केवल सफल हो सकता है। व्यक्तिगत संग उतना महत्त्वपूर्ण नही है जितना सेवा के माध्यम से संग।"

(सतधन्य को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 20/2/1972)

"तो आध्यात्मिक रूप से, आर्विभाव और तिरोभाव, इसमें कोई अंतर नही है...। आध्यात्मिक रूप से ऐसा कोई अंतर नही है, आर्विभाव और तिरोभाव। यदयापि यह ऊँ विष्णुपाद श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर का तरोभाव दिन है, शोक का कोई कारण नही है। यदयापि हम विरह महसूस कर रहे है...।"

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, लॉस एंजिल्स, 13/12/1973)

"मेरे गुरू महाराज तुम पर अति प्रसन्न होंगे...। ऐसा नही है कि वे मर कर चले गए है। यह आध्यात्मिक सोच नहि है। ... वे देख रहे है। मुझे कभी ऐसा नही लगता कि मै अकेला हूँ।"

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, 2/3/1975, अटलांटा)

"वाणी, वपु से अधिक महत्वपूर्ण होती है।"

(तृष्ट कृष्ण को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 14/12/1972)

"हाँ, मै यह सुनकर बहुत खुश हुआ कि तुम्हारा केन्द्र इतना अच्छा कर रहा है। और आप सब लोग गुरू के आदेशों का पालन कर उनकी उपस्थिति महसूस कर रहे हो, यदयापि वे सशरीर उपस्थित नही है। यही सच्ची भावना है।"

(करंधरा को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 13/9/1970)

"गुरू अपनी वाणी द्वारा पीडीत व्यक्ति के हृदय को भेडकर दिव्य ज्ञान से भर सकते है। यह ज्ञान ही भौतिक अस्तित्व की ज्वाला को शांत कर सकता है।"

(श्रीमद-भागवतम्, 1.7.22, भावार्थ)

"दो शब्द है वाणी एवं वपु। वाणी अर्थात शब्द और वपु अर्थात भौतिक शरीर। ...वपु खत्म हो जाएगी, इस भौतिक शरीर का अंत हो जाएगा, यही प्रकृति है। लेकिन यदि हम वाणी, गुरू के शब्दों से सम्पर्क बनाए रखेंगे तब हम स्थिर रह सकते है।...यदि तुम उच्च अधिकृत व्यक्तियों की वाणी एवं आदेशों

के साथ अपना अटूट सम्पर्क बनाए रखोंगे तब तुम हमेशा उत्साहित हो। यही आध्यात्मिक समझ है।"
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, 2/3/1975, अटलांटा)

"इसलिए हमे वाणी पे ज्यादा भार देना चाहिए, कृष्ण या आध्यात्मिक गुरू की वाणी पे।
(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, 18/8/1968, मॉट्रियल)

"कभी यह नही सोचना कि मै तुम्हारे साथ नही हूँ। सशरीर उपस्थिति आवश्यक नही है, संदेश (या श्रवण) द्वारा उपस्थिति ही असली सम्पर्क है।"
(शिष्यों को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 2/8/1967)

"दिव्य ज्ञान की प्राप्ति में किसि प्राकृतिक अवस्था से व्यवधान नही आ सकता।"
(श्रीमद-भागवतम्, 7.7.1, भावार्थ)

"दिव्य वाणी की शक्ति, वक्ता की प्राकट्य अनुपस्थिति के कारण कभी कम नही होती।"
(श्रीमद-भागवतम्, 2.9.8, भावार्थ)

"शिष्य और गुरू कभी अलग नही होते, क्योंकि जब तक शिष्य दृढतापूर्वक गुरू के आदेशों का पालन करता है तब तक गुरू शिष्य का साथ नही छोडता। इसे कहते है वाणी का संग। सशरीर उपस्थिति को वपु कहते है। जब तक गुरू सशरीर उपस्थित है तब तक शिष्य को गुरू के शरीर की सेवा करनी चाहिए और जब गुरू सशरीर उपस्थित नही है तो शिष्य को गुरू के आदेशों की सेवा करना चाहिए।"
(श्रीमद-भागवतम्, 4.28.47, भावार्थ)

"यदि गुरू की सेवा का प्रत्यक्ष अवसर न मिले तो भक्त को चाहिए कि वह उनके आदेशों को याद कर सेवा करे। गुरू के आदेशों एवं स्वयं गुरू में कोई अन्तर नही है। अत: उनकी अनुपस्थिति में उनका शाब्दीक मार्गदर्शन ही शिष्य का गर्व होना चाहिए।"
(चैतन्य चरितामृत, आदि, 1.35, भावार्थ)

"वे अपने दिव्य आदेशों द्वारा जीवित रहते है और अनुयायी उनके साथ रहता है।"
(श्रीमद-भागवतम्, भूमिका)

"वह गलत है जो कहता है कि वैष्णवों को मृत्यु आती है, जबकी वे वाणी में विदयमान रहते है।"
(भक्ति विनोद ठाकुर, वैष्णव आचार्यो के गीत, 1972 संपादन)

"हाँ, गुरू से विरह का आनन्द गुरू से मिलने के आनन्द से भी बढकर है।"
(जदूरानी को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 13/1/1968)

"कृष्ण और उनके प्रतिनिधि एक ही है। जिस तरह कृष्ण लाखों जगहो पर एक ही समय पर विदयमान रह सकते है, उसी प्रकार जहाँ भी शिष्य चाहे वहाँ गुरू उपस्थित हो सकते है। गुरू एक तत्त्व है, शरीर

नही। जिस तरह प्रसारण के सिद्धान्त से हजारों जगहो पर टीवी देखा जा सकता है।"
(मालती को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 28/5/1968)

"विरह की अनुभूती में कृष्ण और गुरू की सेवा बेहतर है। प्रत्यक्ष सेवा में कभी-कभी जोखिम होता है।"
(मधुसूदन को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 30/12/1967)

पुस्तकें ही पर्याप्त है।

भक्त: "श्रील प्रभुपाद, जब आप हमारे साथ नही होते तो आपसे आदेश ग्रहण करना कैसे संभव होगा? उदाहरणार्थ प्रश्न जो उठ सकते है।"

श्रील प्रभुपाद: "अच्छा, प्रश्न...। उत्तर मेरी पुस्तकों में है।"

(श्रील प्रभुपाद प्रात भ्रमण, 13/5/1973, लॉस एंजिल्स)

"तो जो कुछ समय तुम्हें मिलता है उसका उपयोग कर मेरी पुस्तकों का गहन अध्ययन करने मे लगाओ। तब तुम्हारे सारे प्रश्नों का उत्तर मिल जाएगा।"

(उपेन्द्र को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 7/1/1976)

"यदि तुम मंदिर जा सकते हो तो मंदिर का लाभ उठाओ। मंदिर ऐसी जगह है जहाँ व्यक्ति को भगवान श्रीकृष्ण की प्रत्यक्ष भक्तिमय सेवा का अवसर दिया जाता है। इसके साथ-साथ तुम हर रोज हमेशा मेरी पुस्तकों को पढ़ो और तुम्हारे सारे प्रश्नों का उत्तर मिल जाएगा। और तुम्हारे कृष्ण-भावनामृत का पक्का आधार बनेगा। इस तरह तुम्हारा जीवन सफल हो जायेगा।

(हुगो सालेमोन को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 22/11/1974)

"तुम सबको मेरी पुस्तके प्रतिदिन कम से कम दो बार पढ़नी चाहिए, सवेरे और श्याम को और अपने आप ही सारे प्रश्नों का उत्तर मिल जाएगा।"

(रणधीर को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 24/01/1970)

"मेरी पुस्तकों में कृष्ण-भावनामृत फिलसूफी का पूर्णरूप से उल्लेख है अत: यदि ऐसी कोई चीज है जो तुम्हें समझ नही आती तो तुम्हें दुबारा पढ़ना चाहिए। प्रतिदिन पढने से तुम्हें यह ज्ञान प्रकट होगा और इस प्रकिया से तुम्हारा आध्यात्मिक जीवन विकसित होगा।

(बहूरूप दास को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 22/11/1974)

श्रील प्रभुपाद: "शुद्ध भक्त के साथ क्षण मात्र का संग करने से भी पूरी सफलता!"

रेवतीनन्दन: "क्या यह शुद्ध भक्त के शब्दों को पढ़ने पर भी लागू होता है?

श्रील प्रभुपाद: "हाँ।"

रेवतीनन्दन: "क्या, आपकी पुस्तकों से थोडा संग का भी वैसा ही प्रभाव होता है?"

श्रील प्रभुपाद: "प्रभाव। सही मायनें में इसके लिए दोनों चीजें आवश्यक है। इसे प्राप्त करने की तीव्र इच्छा भी होनी चाहिए।"

(श्रील प्रभुपाद वार्तालाप, 13/12/1970)

परमहंस: "मेरा प्रश्न है: एक शुद्ध भक्त, जब वह भगवद्-गीता पर टिप्पणी करता है, कोई व्यक्ति उन्हें सशरीर कभी नही देखता, लेकिन वह केवल टिप्पणी, व्याख्या के सम्पर्क में आता है, क्या यह एक ही बात है?"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ। तुम भगवद्-गीता पढ़कर कृष्ण से संग कर सकते हो। और ये सारे साधु उन्होंने अपनी टिप्पणी, व्याख्याएँ दी है। तो इसमें कठिनाई कहाँ है?"

(श्रील प्रभुपाद प्रात: भ्रमण, 11/6/1974, पेरिस)

"नया कुछ भी कहना बाकी नही है। जो कुछ मुझे कहना था मै अपनी पुस्तकों में कहा चुका हूँ। अब तुम्हें इसको समझना है और अपने प्रयास जारी रखने है। मै उपस्थित रहूँ या न रहूँ इससे कोई फर्क नही पडता।"

(श्रील प्रभुपाद आगमन वार्तालाप, 17/5/1977, वृन्दावन)

श्रील प्रभुपाद हमारे शाश्वत गुरू है।

संवाददाता: "आपकी मृत्यु पश्चात् अमरीका में आपके आंदोलन का क्या होगा?"

श्रील प्रभुपाद: "मेरी मृत्यु कभी नही होगी।"

भक्तगण: "जय! हरी बोल!" (हँसी)

श्रील प्रभुपाद: "मै अपनी पुस्तकों द्वारा जीवित रहूँगा और तुम लाभ उठाओगे।"

(श्रील प्रभुपाद संवाददाता सम्मेलन, 16/7/1975, सेन फ्रांसिस्को)

भारतीय नारी: "...। क्या अपनी मृत्यु के बाद भी गुरू मार्गदर्शन करते है?"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ, हाँ। जिस तरह से कृष्ण हमारा मार्गदर्शन कर रहे है उसी तरह गुरू मार्गदर्शन करेंगे।"

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, 3/9/1971, लंडन)

"एक शिष्य और गुरू का शाश्वत संबंध उसी दिन से शुरू हो जाता है जिस दिन से वह पहली बार श्रवण करता है।"

(जादूरानी को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 4/9/1972)

"एक शुद्ध भक्त का प्रभाव इस प्रकार होता है कि यदी कोई थोडी श्रद्धा से उसका संग करने आता है, तो उसे भगवद्-गीता एवं भागवतम् जैसे प्रामाणिक शास्त्रों से भगवान के बारे में श्रवण करने का अवसर प्राप्त होता है।...यह शुद्ध भक्तों के साथ संग करने का पहला चरण है।"

(भक्तिरसामृत सिन्धू, अध्याय 19)

"यह कोई साधारण पुस्तक नही है। यह रिकार्ड किया गया जाप है। जो भी पढ़ता है वह सुन रहा है।"

(रूपानुग को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 19/10/1974)

"परम्परा प्रणाली के विषय में: बडे अंतरो के बारे में कई आश्चर्य होने की बात नही है...। हमें महत्त्वपूर्ण आचार्यो को चुनकर उनका अनुसरण करना चाहिए।"

(दयानन्द को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 12/4/1968)

नारायण: "तो वो शिष्य जिनको आपसे बात करने का या आपको देखने का मौका नही मिला...।"

श्रील प्रभुपाद: "वह वही बात कर रहा था, वाणी और वपु। यदि तुम उनके शरीर को ना भी देखो तब भी उनके शब्दों को स्वीकार लो, वाणी।"

नारायण: "लेकिन वे यह कैसे जान पाएँगे कि वे आपको संतुष्ट कर रहे है?"

श्रील प्रभुपादः "यदि तुम वास्तव में गुरू की वाणी का अनुसरण कर रहे हो तो इसका अर्थ है कि वह संतुष्ट है। और यदि तुम अनुसरण नही करते हो तब वह कैसे संतुष्ट हो सकते है?"

सुदामाः "केवल यही नही। आपकी कृपा हर तरफ फैली हुई है, और यदि हम इसका लाभ उठाएँ तो, आपने एक बार कहा था, तब हमें परिणाम की अनुभूति होगी।"

श्रील प्रभुपादः "हाँ।"

जयअद्वैतः "और यदि जो कुछ गुरू कह रहे है उसमें हमें श्रद्धा है तो अपने आप ही उसका पालन करेंगे।"

श्रील प्रभुपादः "हाँ। मेरे गुरू महाराज 1936 में चल बसे, और मैने यह आंदोलन 1965 में शुरू किया, तीस साल के बाद। फिर? मुझे गुरू की कृपा मिल रही है। यही वाणी है। यदी गुरू भौतिक रूप से उपस्थित न भी हो, यदि वाणी का पालन करो तो तुम्हें मदद मिलेगी।"

सुदामाः "अतएव जब तक शिष्य गुरू के आदेशों का पालन करता है तब तक वियोग का प्रश्न ही नही उठता।"

श्रील प्रभुपादः "नही। 'चक्षु दान दिलो जेई'। वह क्या है, अगला?"

सुदामाः "चक्षु दान दिलो जेई, जन्मे जन्मे प्रभु सेई।"

श्रील प्रभुपादः "जन्मे जन्मे प्रभु सेई, तो वियोग कहाँ है? जिसने तुम्हारी आँखे खोली है वह जन्म-जन्मांतर तुम्हारे प्रभु है।"

(श्रील प्रभुपद प्रातः भ्रमण, 21/7/1975, सेन फ्रांसिस्को)

मधुद्विसाः "क्या एक ईसाई बिना किसी गुरू का मार्गदर्शन लिये, और केवल ईसा मसीह के उपदेशों को सच मानकर और उनका पालन करके आध्यात्मिक जगत जा सकता है?"

श्रील प्रभुपादः "मुझे समझमें नही आया।"

तमाल कृष्णः "क्या आज कोई ईसाई बिना गुरू के, परन्तु बाइबिल पढ़कर और ईसा मसीह के शब्दों को पालन कर, पहुँच ...।"

श्रील प्रभुपादः "जब तुम बाइबिल पढ़ते हो, तब तुम गुरू मानते हो। तुम कैसे बोल सकते हो कि बिना गुरू के? जैसे ही तुम बाइबिल पढ़ते हो, इसका अर्थ हुआ तुम ईसा मसीह के आदेशों का पालन करते हो और इसका मतलब कि तुम गुरू का अनुसरण कर रहे हो। तो बिना गुरू की बात ही कहाँ हुई?"

मधुद्विसाः "मै एक जीवित गुरू की बात कर रहा था।"

श्रील प्रभुपादः "गुरू... प्रश्न ही नही। गुरू शाश्वत होते है। गुरू शाश्वत होते है...। तो तुम्हारा प्रश्न है 'बिना गुरू के'। बिना गुरू के तुम जीवन के किसी स्तर पर नही रह सकते। तुम यह गुरू अपनाओ या वह गुरू। वह दूसरी बात है। परन्तु तुम्हें स्वीकारना होगा। जैसा तुम बोल रहे हो कि 'बाइबिल पढ़ने से', तो जब तुम बाइबिल पढ़ते हो तो इसका मतलब है तुम ईसा मसीह को गुरू मान रहे हो, जिनके प्रतिनिधि कोई पूजारी या पादरी होते है।"

(श्रील प्रभुपाद प्रवचन, 2/10/1968, सीएटल)

"तुमने यह पुछा है कि क्या यह सत्य है कि जब तक सारे शिष्य आध्यात्मिक जगत को स्थानान्तरित न हो जाएँ तब तक गुरू उसी ब्रह्माणंड में रहते है? इसका उत्तर है – हाँ, यह एक नियम है।"

(जयपताका को श्रील प्रभुपाद का पत्र, 11/7/1969)

परिशिष्ट

पत्र की प्रतिलिपि

ISKCON

INTERNATIONAL SOCIETY FOR KRISHNA CONSCIOUSNESS
Founder-Acharya : His Divine Grace A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada

July 9th, 1977

To All G.B.C., and Temple Presidents

Dear Maharajas and Prabhus,

Please accept my humble obeisances at your feet. Recently when all of the GBC members were with His Divine Grace in Vrndavana, Srila Prabhupad indicated that soon He would appoint some of His senior disciples to act as "rittik" - representative of the acarya, for the purpose of performing initiations, both first initiation and second initiation. His Divine Grace has so far given a list of eleven disciples who will act in that capacity:

His Holiness Kirtanananda Swami
His Holiness Satsvarupa das Gosvami
His Holiness Jayapataka Swami
His Holiness Tamal Krsna Gosvami
His Holiness Hrdayananda Gosvami
His Holiness Bhavananda Gosvami
His Holiness Hamsadutta Swami
His Holiness Ramesvara Swami
His Holiness Harikesa Swami
His Grace Bhagavan das Adhikari
His Grace Jayatirtha das Adhikari

In the past Temple Presidents have written to Srila Prabhupad recommending a particular devotee's initiation. Now that Srila Prabhupad has named these representatives, Temple Presidents may henceforward send recommendation for first and second initiation to whichever of these eleven representatives are nearest their temple. After considering the recommendation, these representatives may accept the devotee as an initiated disciple of Srila Prabhupad by giving a spiritual name, or in the case of second initiation, by chanting on the Gayatri thread, just as Srila Prabhupad has done. The newly initiated devotees are disciples of His Divine Grace A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupad, the above eleven senior devotees acting as His representative. After the Temple President receives a letter from these representatives giving the spiritual name or the thread, he can perform the fire yajna in the temple as was being done before. The name of a newly initiated disciple should be sent by the representative who has accepted him or her to Srila Prabhupad, to be included in His Divine Grace's "Initiated Disciples" book.

Hoping this finds you all well.

Your servant,

Tamal Krishna Goswami

Tamal Krsna Gosvami
Secretary to Srila Prabhupad

Approved: ACBhaktivedanta Swami

Shri Krishna Balaram Mandir & International Guest House Bhaktivedanta Swami Marg, Vrindaban, Mathura, (U.P.) India—phone 178.
Hare Krishna Hare Krishna Krishna Krishna Hare Hare—Hare Rama Hare Rama Rama Rama Hare Hare

पत्र में दी गई बात

इस्कॉन

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ
संस्थापक आचार्य: श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

9 जुलाई 1977

समस्त जी.बी.सी. एवं टेम्पल प्रेसिडेन्ट्स के लिए

प्रिय महाराज एवं प्रभुगण,

आपके चरणों में मेरा दण्डवत प्रमाण स्वीकारे। हाल ही में जी.बी.सी. श्री श्रीमद् के साथ वृंदावन में थे, तब श्रील प्रभुपाद ने सुचित किया था कि जल्द ही वे पहली दीक्षा और दूसरी दीक्षा देने के लिए अपने वरिष्ठ शिष्यों में से कुछ को 'ऋत्विक' आचार्य के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने के लिए मनोनीत करेंगे। अब तक श्री श्रीमद् ने ग्यारह शिष्यों की सूची दी है जो उपर्युक्त क्षमता में कार्य करेंगे:

श्रीपद् कीर्तनानन्द स्वामी
श्रीपद् सतस्वरूप् दास गोस्वामी
श्रीपद् जयपताका स्वामी
श्रीपद् तमाल कृष्ण गोस्वामी
श्रीपद् हृदयानन्द गोस्वामी
श्रीपद् भावानन्द गोस्वामी
श्रीपद् हंसदूता स्वामी
श्रीपद् रामेश्वर स्वामी
श्रीपद् हरिकेश स्वामी
श्रीमद् भगवान दास अधिकारी
श्रीमद् जयतीर्थ दास अधिकारी

पूर्व में किसी भक्त की सिफारिश करने के लिए टेम्पल प्रेसिडेन्ट श्रील प्रभुपाद को पत्र लिखते थे। अब चूंकि श्रील प्रभुपाद ने इन प्रतिनिधियों को मनोनीत कर दीया है, अत: इस समय से टेम्पल प्रेसिडेन्ट पहली और दूसरी दीक्षा के लिए अपने सिफारिश पत्र इन प्रतिनिधियों में से निकटतम प्रतिनिधि को भेजे। सिफारिश को परखने के पश्चात ये प्रतिनिधि उस भक्त को श्रील प्रभुपाद के शिष्य के रूप में स्वीकार कर उसे आध्यात्मिक नाम दे सकते है या दूसरी दीक्षा के लिए यज्ञोपवीत पर गायत्री जाप कर सकते है, ठीक उसी तरह जिस तरह श्रील प्रभुपाद किया करते थे। नए दीक्षित भक्त श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के शिष्यों है और ये ग्यारह भक्त उनके प्रतिनिधि है। इन प्रतिनिधियों के पत्र द्वारा भेजे गए आध्यात्मिक नाम या यज्ञोपवीत मिलने के उपरान्त टेम्पल प्रेसिडेन्ट अपने मंदिर में उसी प्रकार यज्ञ कर सकते है जिस प्रकार हुआ करते थे। जो प्रतिनिधि नए दीक्षित शिष्यों को श्रील प्रभुपाद की ओर से स्वीकार करेंगे, उन्हें इन नए दीक्षित शिष्यों के नाम श्रील प्रभुपाद की 'इनिशिएटेड डिसाइपल्स' नामक पुस्तिका में सम्मिलित करने के लिए भेज देना चाहिए।

आपकी सकुशलता की कामना करते हुए,

आपका सेवक

श्रील प्रभुपाद द्वारा अनुमोदित

(मूल दस्तावेज पर हस्ताक्षर अंकित)
तमाल कृष्ण गोस्वामी
श्रील प्रभुपाद के सचिव

अंतिम आदेश

पत्र की प्रतिलिपि

पत्र में दी गई बात

इस्कॉन

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

संस्थापक आचार्य: श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

10 जुलाई 1977

प्रिय हंसदूता महाराज,

आपके चरणों में मेरा दण्डवत प्रमाण स्वीकारे। श्रील प्रभुपाद को दिनांक 4 जुलाई और 5 जुलाई 1977 के आपके पत्र मिले, और मुझे उसका उत्तर देने को कहा।

यह सुनकर श्रील प्रभुपाद बहुत प्रसन्न थे कि आपने सिलोन में यह सब व्यवस्था कैसे कि, और कई लोग गंभीरता से रुचि ले रहे है वह आपके प्रचार के प्रभाव का सबुत है।

यह सुनकर श्रील प्रभुपाद बहुत प्रसन्न थे कि आपने सिलोन मे यह सब व्यवस्था कैसे कि, और कई लोग गंभीरता से रूचि ले रहे है वह आपके प्रचार के प्रभाव का सबुत है। श्री श्रीमद् ने कहा, "आप एक उचित व्यकित हो और जो कोई दीक्षा के लिये तैयार है उनको दीक्षा दे सकते हो। मेरी ओर से पहली और दूसरी दीक्षा देने के लिए मैंने आपको ग्यारह व्यक्तियों में से "ऋत्विक" आचार्य के प्रतिनिधि के रूप में पसंद किया है।" (श्री श्रीमद् द्वारा चुने गये ग्यारह प्रतिनिधियों की सुची विषयक एक पत्रिका सभी टेम्पल प्रेसिडेन्टस् और जी.बी.सी. को भेजा जा रहा है। जिन्होंने दीक्षा लि है वह लोग श्रील प्रभुपाद के शिष्यों है, और जिनको आप उचित समजे और इस तरह दीक्षा दे, उनके नाम श्रील प्रभुपाद की "इनिशिएटेड डिसाइपल्स" नामक पुस्तिका में सम्मिलित करने के लिए आप भेज दे। इस तरह टेम्पल प्रेसिडेन्टस् दीक्षा के लिये उनकी सिफारिशी सीधा निकटतम प्रतिनिधि को भेज देंगे, जो उसे आध्यात्मिक नाम देंगे या यज्ञोपवीत पर गायत्री जाप करेंगे, ठीक उसी तरह जिस तरह श्रील प्रभुपाद किया करते थे।)

श्रील प्रभुपाद बहुत जोर से मुस्कुराये जब उन्होंने स्थानिक लोग द्वारा आयोजित यह सफल कार्यक्रम के बारे में सुना जिसमें 2000 लोग उपस्थित थे। जब उन्होंने सुना कि आपने रविवार को एक भरपेट भोजन कार्यक्रम शरू किया है, उन्होंने कहा, "आप एक अच्छे रसोइया है, इसलिए जैसा मैने आपको सिखाया उस प्रकार दुसरों को रसोइ बनाना सिखाइये।"

मुद्रण धीरे से चलने के विषय में श्री श्रीमद् ने कहा, "कोइ बात नहि। निश्चित रुप से करो। धीरे-धीरे कोइ फर्क नहीं पडता।" आपने जिस सिंहाली अनुवाद के बारे में उल्लेख किया है उसके विषय में मैने प्रघुम्न प्रभु को पूछा। उसने कहा कि "हरे कृष्ण मंत्र के जाप" का अनुवाद सिंहाली में हो गया और यह अनुवाद बम्बई में उनकी पेटी में है। हम आपको वह जल्द ही भेज देंगे। मुझे मालुम नहीं है कि गोपाल कृष्ण के पास कोइ तमिल हस्तलिपि है के नहि, किंतु यदि उनके पास है तो मै जब करीब दस दिनोंमें उनसे मिलूँगा मै उनको वह आपको भेज ने को कह दूंगा। आप भी उनका सीधा संपर्क कर सकते हो। प्रघुम्न कह रहे है कि नया अनुवाद करना ओर भी तेज होगा – यह सिर्फ एक ही पृष्ठ है।

आप कुछ श्रीलंकन भक्तो को मायापुर लाने का प्रयास कर रहे हो यह जान कर श्रील प्रभुपाद बहुत प्रसन्न थे और कहा, "ओह, यह अच्छी बात है!" भक्तिसिद्धांत के शिष्योंने किसी आदमी को चूहा खाते देखा यह बात सच है या गलत वह उनको पता नहीं है। श्रीलंका की सही स्थिति के बारे में, यह कुछ लोगो का अभिप्राय है। श्रील प्रभुपाद ने सलाह दी कि इस समय हम यह बात सार्वजनिक रूप से चर्चा न करे। प्रभुपाद ने यह भी सिफारिश कि है कि आप हरि सौरी से घी लो। उन्होंने कहा कि हरि सौरी जितना भी भारत भेज रहे है उसमें से पांचवा हिस्सा आप ले सकते हो। आपका स्वामी या गोस्वामी नाम रखने के विषय में श्रील प्रभुपाद ने कहा, "कुछ एक रखो। स्वामी अच्छा है।"

आपका सेवक

(मूल दस्तावेज पर हस्ताक्षर अंकित)

तमाल कृष्ण गोस्वामी

श्रील प्रभुपाद के सचिव

श्रीपद् हंसदूता, स्वामी द्वारा इस्कॉन, कोलंबो/टीकेजी

अंतिम आदेश

पत्र की प्रतिलिपि

ISKCON

INTERNATIONAL SOCIETY FOR KRISHNA CONSCIOUSNESS
Founder-Acharya : His Divine Grace A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada

July 11th, 1977

My dear Kirtanananda Maharaja,

Please accept my most humble obeisances at your feet. His Divine Grace Srila Prabhupad has just received the latest issue of Brijabasi Spirit, Vol.IV, No.4, which brought Him great joy. As He looked at the cover showing Kaladri performing a fire ceremony, He said, "Just see his face how devotee he is, so expert in everything." When Srila Prabhupad opened the first page, His eyes fixed on the picture of Radha-Vrndavana Candra, and He said, "Vrndavana Bihari—so beautiful. There is no danger wherever Vrndavana Candra is." After enjoying the whole magazine thoroughly Srila Prabhupad said, "It is printed on their own press. It is very good progress." His Divine Grace very much appreciated the article "How I Was Deprogrammed" by the young devotee boy. Prabhupad was feeling great sympathy when he heard his story and said, "If one man is turned like this boy then this movement is successful. There is good prospect, good hope. You all combine together and push this movement on and on. Now I am assured that it will go on." While going through the magazine, Srila Prabhupad also saw your good photo on the page "Istagosthi" and Srila Prabhupad bestowed a long loving look upon your good self expressing his deep appreciation for how you have understood the Krsna consciousness.

A letter has been sent to all the Temple Presidents and GBC which you should be receiving soon describing the process for initiation to be followed in the future. Srila Prabhupad has appointed thus far eleven representatives who will initiate new devotees on His behalf. You can wait for this letter to arrive (the original has been sent to Rameswara Maharaja for duplicating) and then all of the persons whom you recommended in your previous letters can be initiated.

His Divine Grace has been maintaining His health on an even course and most amazingly has doubled His translation work keeping pace with the doubling of book distribution. Hoping this meets you well.

Your servant,

Tamal Krishna Gosvami

Tamal Krsna Gosvami
Secretary to Srila Prabhupad

His Holiness Kirtanananda Swami
c/o ISKCON New Vrndavana

/tkg

पत्र में दी गई बात

इस्कॉन

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ
संस्थापक आचार्य: श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

11 जुलाई 1977

प्रिय कीर्तनानंद महाराज,

आपके चरणों मे मेरा दण्डवत प्रमाण स्वीकारे। श्री श्रीमद् श्रील प्रभुपाद को कुछ समय पूर्व ब्रजवासी स्पिरिट, भाग- 4, अंक 4 की प्रति प्राप्त हुई, जिससे वे बहुत प्रफुल्लित हुए। मुखपृष्ठ पर कालादी को अग्नी यज्ञ करते हुए दिखाया गया है, उसे देखते हुए उन्होंने कहा कि "जरा देखो तो ये कितना अच्छा भक्त है, सब कुछ करने में इतना निपुण है।" फिर जब श्रील प्रभुपाद ने प्रथम पृष्ठ देखा तो उनकी आँखे राधा-वृन्दावनचन्द्र पर गढी रह गई और वे बोले, "वृन्दावन विहारी कितने सुन्दर है। जहाँ वृन्दावनचन्द्र है वहाँ कोई विपत्ति नही आ सकती।" पूरी पत्रिका का पूर्ण आनन्द लेने के बाद श्रील प्रभुपाद ने कहा, "यह उनके अपने प्रेस में छपा है। यह बहुत अच्छी प्रगती है।" श्री श्रीमद् ने युवा भक्त लड़के का 'हाउ आई वास डीप्रोग्राम्ड' लेख की बहुत सराहना की। जब प्रभुपाद ने उसकी कहानी सुनी तो उनका हृदय भावना से भर उठा और वे बोले "यदि एक व्यक्ति भी इस लडके की तरह बदल जाए तब यह आंदोलन सफल है। आगे बहुत आशा है। तुम सब मिलकर एकजुट हो जाओ और इस आंदोलन को आगे बढाओ। अब मुझे विश्वास है कि यह आंदोलन चलता रहेगा।" पत्रिका को देखते हुए श्रील प्रभुपाद ने 'ईष्टगोष्ठी' पृष्ठ पर तुम्हारी अच्छी तस्वीर भी देखी और श्रील प्रभुपाद ने आपके प्रति एक लम्बी प्यार भरी नजर डाली। तुमने किस प्रकार इस कृष्ण भावनामृत को समझा है इस बात पर उन्होंने अपनी गहरी प्रशंसा व्यक्त की।

सभी जी.बी.सी. और टेम्पल प्रेसिडेन्टस् को एक पत्र भेजा गया है जो शीघ्र ही तुम्हें भी मिल जाएगा। यह पत्र भविष्य में लागू होने वाली दीक्षा की प्रक्रिया का वर्णन करता है। श्रील प्रभुपाद ने अब तक ग्यारह प्रतिनिधियों को चुना है जो उनकी ओर से नए भक्तों को दीक्षा देंगे। तुम इस पत्र के आगमन की प्रतिक्षा कर सकते हो (मूल प्रति रामेश्वर महाराज को भेजी गई है, ताकि वे उसकी अनेक प्रतियाँ बना सके।) और फिर उन सभी भक्तों को दीक्षा दी जा सकती है, जिनकी सिफारिश तुमने अपने पहले पत्र में की थी।

श्री श्रीमद् की बतीयात में स्थिरता बनी हुई है और पुस्तक वितरण के दुगुने होने के साथ तालमेल रखते हुए उन्होंने आश्चर्यजनक रूप में से अपने अनुवाद कार्य को भी दुगुना कर दिया है। आपकी सकुशलता की कामना करते हुए,

आपका सेवक

(मूल दस्तावेज पर हस्ताक्षर अंकित)
तमाल कृष्ण गोस्वामी
श्रील प्रभुपाद के सचिव

श्रीपद् कीर्तनानंद स्वामी
द्वारा इस्कॉन, न्यू वृन्दावन
/टीकेजी

पत्र की प्रतिलिपि

THE BHAKTIVEDANTA BOOK TRUST

Founder-Acarya: His Divine Grace A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada

3764 WATSEKA AVE. LOS ANGELES. CA 90034. U.S.A. • TWX 910 340-7062/TEL. (213) 559-4455

July 21, 1977

ALL GLORIES TO SRI GURU AND GOURANGA!

Dear GBC Godbrother Prabhus,

Please accept my most humble obeisances in the dust of your feet. All glories to Srila Prabhupada! I have just received some letters from Tamal Krsna Maharaja, and am enclosing herein two documents: 1) Srila Prabhupada's final version of his last will, and 2) Srila Prabhupada's initial list of disciples appointed to perform initiations for His Divine Grace. This list is also being sent to all centers.

From Tamal's letters it seems that Prabhupada is enthusiastic despite his continuing poor health, and is translating full force. He especially becomes enthused when reports arrive from different GBC men and temples with preaching results, general good news, etc. and Tamal Krsna Maharaja has stressed that we should all be sending such reports, as His Divine Grace often asks, "What is the news?" An outstanding example of Prabhupada's mood was shown after receiving an encouraging preaching report from Hansadutta Swami in Ceylon. Srila Prabhupada said, "I want to go to Ceylon. I can go. I can go anywhere by chair. It is difficult only in the imagination. The swelling is touching the skin, not my soul.

More than anything else, Tamal has stressed the genuine need for a visiting GBC member to come every month for personal service. Since Prabhupada has recently said that now this regular visiting is very important, all GBC members should be anxious to do this, as it not only involves important work which will help relieve Prabhupada from management, but also involves attending Srila Prabhupada personally, giving him massages and many other nectarean services, and in general affords an unusual amount of personal association, even more than in the past. Out of over 23 GBC members there should never be one month not filled up.

One final news report is that Srila Prabhupada has appointed a new GBC member for North India (including Delhi but not Vrndavana) - His Holiness Bhakti Caitanya Swami. Tamal Krsna Maharaja said that His Divine Grace appointed him to encourage him for the outstanding preaching work he is doing in Punjab.

Jai, I hope this finds you all well, and fully absorbed in preaching and thus satisfying Srila Prabhupada fully.

Your most unworthy servant,

Ramesvara dasa Swami

Ramesvara dasa Swami

Enclosures

LOS ANGELES • NEW YORK • LONDON • BOMBAY

पत्र में दी गई बात

बी.बी.टी.
भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट
संस्थापक आचार्य: श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

21 जुलाई **1977**

श्री गुरू और गोरांगा की जय।

प्रिय जी.बी.सी. गुरूभाइयो,

आपकी चरणधूलि में मेरा दण्डवत प्रमाण स्वीकारे। श्रील प्रभुपाद की जय! मुझे कुछ समय पहले ही तमाल कृष्ण गोस्वामी द्वारा भेजे हुए कुछ पत्र प्राप्त हुए है, जिनमें से दो दस्तावेजों को सम्मिलित कर रहा हूँ: **1)** श्रील प्रभुपाद द्वारा अपनी वसीयात की अंतिम रूप की प्रति। **2)** श्रील प्रभुपाद द्वारा उनकी ओर से दीक्षा देने वाले मनोनीत शिष्यों की आरम्भिक सूची सारे केन्दों में भी भेजी जा रही है।

तमाल के पत्र से यह लगता है कि अपनी लम्बी बीमारी के बावजूद श्रील प्रभुपाद काफी उत्साहित है और पूरे जोर से अनुवाद कर रहे है। जब विभिन्न जी.बी.सी. अपने प्रचार कार्य के समाचार या कोई खुशखबरी आदि उन्हें सुनाते है तो वे विशेष रूप से उत्साहित हो उठते है। तमाल कृष्ण महाराज ने बल देते हुए कहा कि हम सबको इस प्रकार के समाचार भेजते रहने चाहिए; क्योंकि श्रील प्रभुपाद प्राय: यह पूछते है, "क्या समाचार है?" प्रभुपाद के भाव का एक ज्वलंत उदाहरण, हंसदूत स्वामी के प्रोत्साहन भरे 'सीलोन' (श्रीलंका) में प्रचार के समाचार सुनने पर उनकी प्रतिक्रिया को देखकर मिलता है। श्रील प्रभुपाद बोले, 'मै सीलोन जाना चाहता हूँ। मै जा सकता हूँ। मै कुर्सी पर कही भी जा सकता हूँ। सिर्फ कल्पना करना ही मुश्कल है। यह सूजन केवल त्वचा को छू रही है, मेरी आत्मा को नही।"

अन्य चीजों के अलावा तमाल ने इस जरूरत पर बल दिया है कि प्रतिमाह एक जी.बी.सी. को श्रील प्रभुपाद की व्यक्तिगत सेवा के लिए जाना चाहिए। प्रभुपाद ने जैसा हाल ही में कहा है, अब इस प्रकार की नियमित मुलाकात बहुत महत्त्वपूर्ण है। सभी जी.बी.सी. सदस्य इसके लिए उत्सुक होने चाहिए, क्योंकि इससे प्रभुपाद को प्रबंधन से छुटकारा मिलेगा और सभी को व्यक्तिगत रूप से उनकी सेवा करने का सुनहरा अवसर मिलेगा जैसे उन्हें मालिश देना एवं अन्य अमृतमय सेवाएँ। इस सेवा में श्रील प्रभुपाद का व्यक्तिगत संग पहले से भी अधिक मिल सकता है। **23** जी.बी.सी. सदस्यों को मिलाकर एक माह भी ऐसा नही होना चाहिए जो भरा ना हो।

एक अंतिम समाचार यह है कि श्रील प्रभुपाद ने उत्तरी भारत (दिल्ली सहित लेकिन वृंदावन को छोडकर) के लिए नए जी.बी.सी. सदस्य को नियुक्त किया है– श्रीपद् भक्ति चैतन्य स्वामी। तमाल कृष्ण महाराज ने कहा कि उनके पंजाब में प्रशंसनीय प्रचार कार्य को प्रोत्साहन देने के लिए ऐसा किया है।

जय, आशा करता हूँ कि आप सकुशल होंगे और प्रचार में पूरी तरह से डूबे हुए होंगे, जिससे श्रील प्रभुपाद को पूर्णतया तृप्ति मिलती रहे।

आपका पतित सेवक
(मूल प्रति पर हस्ताक्षर अंकित है)
रामेश्वर दास स्वामी

अन्य दस्तावेज सम्मिलित

पत्र की प्रतिलिपि

ISKCON

INTERNATIONAL SOCIETY FOR KRISHNA CONSCIOUSNESS
Founder-Acharya: His Divine Grace A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada

July 31st, 1977

My dear Hamsadutta Maharaja,

Please accept my most humble obeisances at your feet. I have been instructed by His Divine Grace Srila Prabhupad to thank you for your letter dated July 25th, 1977.

You have written to Srila Prabhupad saying you do not know why ... has chosen you to be a recipient of His mercy. His Divine Grace ...mediately replied, "It is because you are my sincere servant. You ...ve given up attachment to a beautiful and qualified wife and that ... a great benediction. You are a real preacher. Therefore I like ...u. (then laughing) Sometimes you become obstinate, but that is ...ue of any intelligent man. Now you have got a very good field. Now ...ganize it and it will be a great credit. No one will disturb you ... Make your own field and continue to be sattvik and act on my ...

Srila Prabhupad listened with great enthusiasm as I read to him ...newspaper article. His Divine Grace was very pleased: "This ar-...e will increase your prestige. It is very nice article. Therefore ...newspaper has spared so much space to print it. It is very nice. ... be published in Back to Godhead. Now there is a column in the ... Godhead called Prabhupad Speaks Out. Your article may be en-... 'Prabhupad's Disciple Speaks Out.' Yes, we shall publish this certainly. Let this rascal be fool[redacted] before the public. I ...ored this article very much. I want my disciples to speak out ...backed by complete reasoning. 'Brahma sutra sunisthita,' this ...y. Be blessed. All of my disciples go forward. You have given ...ge. They cannot answer. This Dr. Lowson should be invited ...r Dr. Svarupa Damodar's Convention on 'Life comes from ... Learn something at this scientific conference.'

...n should certainly get some ... Food Relief money. ... American money collected and sent for food dis-...t is my proposal. 500 people coming is no joke. You ... so many nice preparations. I would like to eat but I ...h I cannot ... simply hearing these names (of prepara-...ifying. ... just thinking this morning of you and how ... me."

...s to ... Grace Srila Prabhupad and His stalwart ... throughout the world spreading the ...ing this meets you well.

Your servant,

Tamal Krsna Goswami
Secretary to Srila Prabhupad

... Raman Reti, Vrindaban, Mathura, (U.P.) India—phone 178.
Hare Rama Hare Rama Rama Rama Hare Hare

पत्र में दी गई बात

[हंसदूत को तमाल कृष्ण गोस्वामी द्वारा पत्र, श्रील प्रभुपाद की ओर से]

इस्कॉन

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

संस्थापक आचार्य: श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

31 जुलाई **1977**

प्रिय हंसदूत महाराज,

आपके चरण-कमलों मे मेरा दण्डवत प्रणाम स्वीकारे। मुझे श्री श्रीमद् श्रील प्रभुपाद द्वारा यह निर्देश दिया गया है कि तुम्हारे **25** जुलाई **1977** के पत्र के लिए तुम्हें धन्यवाद दूँ।

तुमने श्रील प्रभुपाद को लिखा है कि तुम्हें पता नही कि उन्होंने तुम्हें अपनी कृपा का पात्र क्यों चुना। श्री श्रीमद् ने तुरन्त उत्तर दिया: "इसलिए कि तुम मेरे निष्ठावान सेवक हो। तुमने अपनी सुन्दर एवं योग्य पत्नी से अपनी आसक्ति को त्याग दिया, और यह बहुत बडा वरदान है। तुम एक असली प्रचारक हो। इसलिए मै तुम्हें चाहता हूँ। (फिर हँसते हुए) कभी-कभी तुम हठी हो जाते हो, पर यह हर बुद्धिमान व्यक्ति के बारे में सत्य है। अब तुम्हारें पास एक अच्छा क्षेत्र है। अब इसका संगठन करो और यह तुम्हारा बडा योगदान रहेगा। वहाँ तुम्हें कोई बाधा नही पहुँचायेगा। तुम अपना क्षेत्र बनाओ और ऋत्विक बने रहो और मेरी ओर से कार्य करो।"

जब मैने समाचारपत्र का लेख पढ़कर सुनाया तो श्रील प्रभुपाद बडे उत्साह से सुन रहे थे। श्री श्रीमद् अत्यन्त प्रसन्न थे: "यह लेख तुम्हारी प्रतिष्ठा बढाएगा। यह बहुत अच्छा लेख है। इसलिए समाचारपत्र ने इसे छापने के लिए इतनी सारी जगह दी है। यह बहुत अच्छा है। इसे 'बैक टू गॉडहैड' (भगवत दर्शन) में प्रकाशित करना चाहिए। अभी 'बैक टू गॉडहैड' में एक स्तंभ है- 'प्रभुपाद स्पीकस आउट'। तुम्हारें लेख का शीर्षक होगा - 'प्रभुपाद डीसाईपल स्पीकस आउट' (प्रभुपाद के शिष्य बोले)। हाँ, हम इस लेख को अवश्य प्रकाशित करेंगे। इस मूढ व्यक्ति को जनता के सामने बेवकूफ होने देना चाहिए। मैने इस लेख का बहुत आनन्द उठाया है। मै चाहता हूँ कि मेरे शिष्य भी बोले... तर्क एवं कारणों के बलबूते पर। 'ब्रत्मसूत्र सुनिष्ठित' यही प्रचार है। मेरा आर्शीवाद है। मेरे सभी शिष्य आगे बढे। तुमने यह चुनौति दी है। वे इसका उत्तर नही दे सकते। इस डॉ. कोवूर को डॉ.स्वरूप दामोदर के 'लाइफ कम्स फॉम लाइफ' (जीवन का स्रोत जीवन) सम्मेलन में आमंत्रित करना चाहिए। इस वैज्ञानिक सम्मेलन से वह कुछ सीख सकता है।"

हाँ, तुम्हें इस्कॉन के 'फूड रिलीफ' (अन्नदान) की धनराशि जरूर मिलनी चाहिए। आपके कार्य के लिए अमरीकन पैसे इकट्ठे हो और अन्न वितरण के लिए भेज दिए जाएँ। यह मेरा प्रस्ताव है। तीन सौ लोगो का आना कोई मजाक नही है। तुमने विभिन्न पकवानों का वर्णन भी किया है। मै खाना चाहता हूँ लेकिन मै ... मै खा नही सकता। इन (पकवानों) के नाम ही मुझे तृप्त कर रहे है। आज सुबह है मै तुम्हारे बारे में सोच रहा था और तुमने मुझे यह पत्र लिखा।

(अंतिम पंक्तियाँ अस्पष्ट)

आपका सेवक

(मूल दस्तावेज पर हस्ताक्षर अंकित)

तमाल कृष्ण गोस्वामी

श्रील प्रभुपाद के सचिव

वसीयत

Tridandi Goswami

A.C. Bhaktivedanta Swami

Founder-Acharya:
International Society for Krishna Consciousness

CENTER: Krsna-Balarama Mandir,
Bhaktivedanta Swami Marg,
Ramanareti, Vrndavana, U.P.

DATE ....June.............................19.77..

DECLARATION OF WILL

I, A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada, founder-acarya of the International Society for Krishna Consciousness, Settlor of the Bhaktivedanta Book Trust, and disciple of Om Visnupada 108 Sri Srimad Bhaktisiddhanta Sarasvati Gosvami Maharaj Prabhupada, presently residing at Sri Krsna-Balarama Mandir in Vrndavana, make this my last will:

1. The Governing Body Commission (GBC) will be the ultimate managing authority of the entire International Society for Krishna Consciousness.

2. Each temple will be an ISKCON property and will be managed by three executive directors. The system of management will continue as it is now and there is no need of any change.

3. Properties in India will be managed by the following executive directors:

a) Properties at Sri Mayapur Dhama, Panihati, Haridaspur and Calcutta: Gurukrpa Swami, Jayapataka Swami, Bhavananda Gosvami and Gopal Krsna das Adhikari.
b) Properties at Vrndavana: Gurukrpa Swami, Akshoyananda Swami, and Gopal Krsna das Adhikari.
c) Properties at Bombay: Tamal Krsna Gosvami, Giriraj das Brahmachary, and Gopal Krsna das Adhikari.
d) Properties at Bhubaneswar: Gour Govinda Swami, Jayapataka Swami, and Bhagawat das Brahmachary.
e) Properties at Hyderbad: Mahamsa Swami, Sridhar Swami, Gopal Krsna das Adhikari and Bali Mardan das Adhikari.

The executive directors who have herein been designated are appointed for life. In the event of the death or failure to act for any reason of any of the said directors, a successor director or directors may be appointed by the remaining directors, provided the new director is my initiated disciple following strictly all the rules and regulations of the International Society for Krishna Consciousness as detailed in my books, and provided that there are never less than three (3) or more than five (5) executive directors acting at one time.

4. I have created, developed, and organized the International Society for Krishna Consciousness, and as such I hereby will that none of the immovable properties standing in the name of ISKCON in India shall ever be mortgaged, borrowed against, sold, transferred, or in any way encumbered, disposed of, or alienated. This direction is irrevocable.

5. Properties outside of India in principle should never be mortgaged, borrowed against, sold, transferred or in any way encumbered, disposed of, or alienated, but if the need arises, they may be mortgaged, borrowed against, sold, etc., with the consent of the GBC committee members associated with the particular property.

वसीयत

Tridandi Goswami
A.C. Bhaktivedanta Swami
Founder Acharya:
International Society for Krishna Consciousness

6. The properties outside of India and their associated GBC committee members are as follows:

a) Properties in Chicago, Detroit and Ann Arbor: Jayatirtha das Adhikari, Harikesa Swami, and Balavanta das Adhikari.
b) Properties in Hawaii, Tokyo, Hong Kong: Guru Krpa Swami, Rameswara Swami, and Tamal Krsna Gosvami.
c) Properties in Melbourne, Sydney, Australia Farm : Guru Krpa Swami, Hari Sauri, and Atreya Rsi.
d) Properties in England (London Radlett), France, Germany, Netherlands, Switzerland and Sweden: Jayatirtha das Adhikari, Bhagavan das Adhikari, Harikesa Swami.
d) Properties in Kenya, Mauritius, South Africa: Jayatirtha das Adhikari, Brahmananda Swami and Atreya Rsi.
e) Properties in Mexico, Venezuela, Brazil, Costa Rica, Peru, Ecuador, Colombia, Chile: Hrdayananda Gosvami, Panca Dravida Swami, Brahmananda Swami.
f) Properties in Georgetown, Guyana, Santo Domingo, St. Augustine: Adi Kesava Swami, Hrdayananda Gosvami, Panca Dravida Swami.
g) Properties in Vancouver, Seattle, Berkeley, Dallas: Satsvarupa Gosvami, Jagadisa das Adhikari, Jayatirtha das Adhikari.
h) Properties in Los Angeles, Denver, San Diego, Laguna Beach: Rameswara Swami, Satsvarupa Swami, Adi Kesava Swami.
i) Properties in New York, Boston, Puerto Rico, Port Royal, St. Louis, St. Louis Farm: Tamal Krsna Gosvami, Adi Kesava Swami, Rameswara Swami.
j) Properties in Iran: Atreya Rsi, Bhagavan das Adhikari, Brahmananda Swami.
k) Properties in Washington D.C., Baltimore, Philadelphia, Montreal and Ottawa: Rupanuga das Adhikari, Gopal Krsna das Adhikari, Jagadisa das Adhikari.
l) Properties in Pittsburgh, New Vrndavana, Toronto, Cleveland, Buffalo: Kirtanananda Swami, Atreya Rsi, Balavanta das Adhikari.
m) Properties in Atlanta, Tennessee Farm, Gainesville, Miami, New Orleans, Mississippi Farm, Houston: Balavanta das Adhikari, Adi Kesava Swami, Rupanuga das Adhikari.
n) Properties in Fiji: Hari Sauri, Atreya Rsi, Vasudev.

7. I declare, say and confirm that all the properties, both movable and immovable, which stand in my name, including current accounts, savings accounts and fixed deposits in various banks, are the properties and assets of the International Society for Krishna Consciousness, and the heirs and successors of my previous life, or anyone claiming through them, have no right, claim or interest in these properties whatsoever, save and except as provided hereafter.

8. Although the money which is in my personal name in different banks is being spent for ISKCON and belongs to ISKCON, I have kept a few deposits specifically marked for allocating a monthly allowance of Rs. 1,000/- each to the members of my former family (two sons, two daughters, and wife). After the deaths of the members of my former family, these specific deposits (corpus, interests, and savings) will become the property of ISKCON for the corpus of the trust, and the descendants of my former family or anybody claiming through them shall not be allowed any further allowance.

9. I hereby appoint Guru Krpa Swami, Hrdayananda Gosvami, Tamal Krishna Gosvami, Rameshwar Swami, Gopal Krishna das Adhikari, Jayatirtha das Adhikari and Giriraj das Brahmachary to act as executors of this will. I have made this will this 4th day of June, 1977, in possession of full sense and sound mind, without any persuasion, force or compulsion from anybody.

Witnesses: 1. Dr Hiranmaya Ghose
2. Tamal Krishna Goswami
3. Bhagavan das Adhikari
V. K. Arora, Advocate, Mathura
7.6.77
Bar at Law, Mathura

A.C. Bhaktivedanta Swami

वसीयत

[illegible] Bhaktivedanta Swami [illegible] Society for Krishna Consciousness, [illegible] of Bhaktivedanta Book Trust and disciple of Om Vishnupada 108 Sri Srimad Bhaktisiddhanta [illegible] Gosvami Maharaja Prabhupad, presently residing at Sri Krsna-Balarama Mandir in Vrndavana, do hereby make this last Will and codicil to give vent to my intention, and clarify certain things which are to a certain extent a little vague in my previous Will dated 4th June, 1977, as follows;

I had made a Will on 4th June, 1977, and had made certain provisions therein. One of them being a provision of maintenance allowance to Sri M.M. De, Brindaban Chandra De, Miss Bhakti Lata De and Smt. Suluxmana Dey, who were born of me during my grhastha ashram, and Smt. Radharani De, who was my wife in the grhastha ashram for their lives as per para. 8 of the said Will. Since on careful consideration I feel that the said paragraph does not truly depict my intentions, I hereby direct that as regards Smt. Radharani De, she will get Rs.1,000/- per month for her life out of interest to be earned from a fixed deposit of Rs. One Lakh Twenty Thousand to be made by ISKCON in any bank that the authorities of the said society may think proper for a period of 7 years in the name of ISKCON, which amount shall not be available to any of her heirs and after her death the said amount be appropriated by ISKCON in any way the authorities of ISKCON think proper looking to the objects of the society.

As regards Sri M.M. De, Sri Brindaban Chandra De, Smt. Suluxmana Dey and Miss Bhaktilata De, the ISKCON will deposit Rs. One Lakh Twenty Thousand under 4 separate Fixed Deposit receipts, each for Rs.1,20,000/- for seven years in a bank to earn interest at least Rs.1,000/- a month under each receipt. Out of the said sum of Rs.1,000/-, only Rs.250/- per month will be paid to each of them from the interest of their respective Fixed Deposit receipts. The remaining interest of Rs.750/- will be deposited again under new Fixed Deposit receipts in their respective names for seven years. On the maturity of these Fixed Deposit receipts created from the Rs.750/- monthly interest for the first seven years, the said sums shall be invested by the above named persons in some Govt. Bonds, Fixed Deposit receipts or under any Govt. Deposit Scheme or shall be used to purchase some immovable property or properties so that the amount may remain safe and may not be dissipated. In case, however, the above named persons or any of them violate these conditions and use the said sum in purpose or purposes other than those described above, the ISKCON authorities will be free to stop the payment of the monthly maintenance of such person or persons from the original Fixed Deposits of Rs.1,20,000/- and they shall instead give the amount of interest of Rs.1,000/- per month to Bhaktivedanta Swami Charity Trust. It is made clear that the heirs of the said persons will have no right to anything out of the said sums and that these sums are only for the personal use of the said persons of my previous life during their respective lifetimes only.

I have appointed some executors of my said Will. I now hereby add the name of Sri Jayaptaka Swami, my disciple, residing at Sri Mayapur Chandrodoya Mandir, Dist. Nadia, West Bengal, as an executor of my said Will along with the persons already named in the said Will dated 4th June, 1977. I hereby further direct that my executors will be entitled to act together or individually to fulfill their obligations under my said Will.

I therefore hereby amend, modify and alter my said Will dated 4th June, 1977, in the manner mentioned above. In all other respects the said Will continues to hold good and shall always hold good.

I hereby make this Will codicil this 5th day of November, 1977, in my full conscience and with sound mind without any persuasion, force or compulsion from anybody.

Witness:

1. Bishambhar Dayal S/O [illegible]
   Radha Krishna, Vrindaban
2. Subhash Kumar Chaturvedi
   25. Moksh Marg Mathura

[illegible signature]

A.C. Bhaktivedanta Swami

वसीयत में दी गई बात

त्रिदण्डी गोस्वामी

ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी

संस्थापक-आचार्य:
अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

शाखा : कृष्ण-बलराम मंदिर,
भक्ति वेदान्त स्वामी मार्ग,
रमनरेती, वृन्दावन, उ.प्र.

दिनांक : जून, 1977

वसीयत की घोषणा

मै, ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद, अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ का संस्थापक आचार्य, भक्तिवेदान्त स्वामी बुक ट्रस्ट का 'सेटलर' और ऊँ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धांत सरस्वती गोस्वामी महाराज प्रभुपाद का शिष्य, वर्तमान निवास स्थान: कृष्ण-बलराम मन्दिर, वृन्दावन, अपनी आखिरी वसीयत बनाता हूँ:

1. गवर्निंग बॉडी कमीशन (जी.बी.सी.) संपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ की सर्वोतम प्रशासकीय अधिकारी होगी।

2. हर मन्दिर इस्कॉन की सम्पत्ति होगी और इसका प्रबन्धन तीन 'एक्जीक्यूटिव डाइरेक्टर्स' (कार्य कारी निर्देशको) द्वारा होगा। प्रबन्धन प्रणाली जिस प्रकार चल रही है उसी प्रकार चलती रहेगी और इसमें परिवर्तन करने की कोई आवश्यकता नही है।

3. भारत में सम्पत्तियों का संचालन निम्नलिखित 'एक्जीक्यूटिव डाइरेक्टर्स' (कार्यकारी निर्देशको) करेंगे:

   क) श्री मायापयुर धाम, पानीहाटी, हरिदासपुर और कलकत्ता की सम्पत्तियाँ: गुरूकृपा स्वामी, जयपताका स्वामी, भावानन्द गोस्वामी और गोपाल कृष्ण दास अधिकारी।

   ख) वृन्दावन की सम्पत्तियाँ: गुरूकृपा स्वामी, अक्षयानन्द स्वामी और गोपाल कृष्ण दास अधिकारी।

   ग) बम्बई की सम्पत्तियाँ: तमाल कृष्ण गोस्वामी, गिरिराज दास ब्रह्मचारी और गोपाल कृष्ण दास अधिकारी।

   घ) भुवनेश्वर की सम्पत्तियाँ: गौर गोविन्द स्वामी, जयपताका स्वामी और भगवत दास ब्रह्मचारी।

   ङ) हैदरावाद की सम्पत्तियाँ: महंस स्वामी, श्रीधर स्वामी, गोपाल कृष्ण दास अधिकारी और वली मर्दन दास अधिकारी।

वसीयत में दी गई बात

ये कार्यकारी निर्देशको, जिनको उपर्युक्त पदवियाँ दी गई है उन्हें सम्पूर्ण जीवन के लिए नियुक्त किया जाता है। उपर्युक्त निर्देशको से कोई यदि मृत्यु के कारण या किसी अन्य कारणवश कार्य करने में असफल हो जाएँ तो उत्तराधिकारी निर्देशक या निर्देशको कि नियुक्ति आपस में मिलकर कर सकते है, इस शर्त पर कि नया निर्देशक मेरा दीक्षीत शिष्य हो, जो अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के सभी नियमों का दृढतापूर्वक पालन कर रह हो, जिनका सम्पूर्ण वर्णन मेरी पुस्तकों मे है, और इस शर्त पर कि एक समय में तीन (3) से कम या पाँच (5) से ज्यादा कार्यकारी निर्देशको कार्यरत न हो।

4. मैने अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ की सृष्टि की है, इसका विकास किया है एवं इसका संगठन भी किया है और अब मै यह चाहता हूँ कि भारत में इस्कॉन के नाम पर पंजीकृत सारी सम्पत्तियों को कभी भी गिरवी, विकी, किसी अन्य के नाम पर स्थानान्तरित नही की जाए या किसी रूप से क्षति न पहुँचाई जाए, किसी को भेट या दान स्वरूप न दी जाए एवं इनके स्वामित्व को हस्तान्तरित नही किया जाए। यह निर्देश अपरिवर्तनीय है।

5. भारत के बाहर स्थित सारी सम्पत्तियों को सैद्धांतिक रूप से कभी गिरवी न रखा जाए, या इसको किसी चीज के बदले में न दिया जाए या इसकी बिकि नही की जाए एवं किसी के नाम हस्तान्तरित न किया जाए। लेकिन यदि जरूरत पडे तो इन्हें उसके साथ जुडे जी.बी. सी. समिति के सदस्यों कि सहमति से गिरवी रखा जा सकता है, इसका आदान-प्रदान किया जा सकता है या इसकी विकि इत्यादी की जा सकती है।

6. भारत के बाहर स्थित सम्पत्तियाँ और उससे जुडे जी.बी.सी. समिति सदस्यों निम्नलिखित है:

   क) शिकागो, डेट्राइट और एनन आर्बर की सम्पत्तियाँ: जयतीर्थ दास अधिकारी, हरिकेश स्वामी और बलवंत दास अधिकारी।

   ख) हवाई, टोक्यो एवं हांगकांग की सम्पत्तियाँ: गुरू कृपा स्वामी, रामेश्वर स्वामी और तमाल कृष्ण गोस्वामी।

   ग) मेलबार्न, सिडनी एवं आस्ट्रेलिया फार्म की सम्पत्तियाँ: गुरू कृपा स्वामी, हरी सौरी और अजेय ऋषि।

   घ) इंग्लैड (लन्डन रेडलेट), फ्रांस, जर्मनी, नेधरलैड, स्वीट्झरलैड और स्वीडन की सम्पत्तियाँ: जयतीर्थ दास अधिकारी, भगवान दास अधिकारी, हरिकेश स्वामी।

   घ) केन्या, मारिशस, दक्षिण अफ्रीका की सम्पत्तियाँ: जयतीर्थ दास अधिकारी, ब्रह्मानन्द स्वामी और अजेय ऋषि।

   ङ) मैक्सिको, वेनेजुएला, ब्राजील, कोस्टारिका, पेरू, इक्वेडोर, कोलम्बिया, चिली की सम्पत्तियाँ: हृदयानन्द गोस्वामी, पंचद्रविड स्वामी, ब्रह्मनांद स्वामी।

   च) जोर्जटाउन, गुयाना, सांता डोमिंगो, सेंट आगस्टीन की सम्पत्तियाँ: आदि केशव स्वामी, हृदयानन्द गोस्वामी, पंचद्रविड स्वामी।

वसीयत में दी गई बात

छ) वेन्कुवर, सीएटल, बरक्ली, डालास की सम्पत्तियाँ: सत्स्वरूप गोस्वामी, जगदीश दास अधिकारी, जयतीर्थ दास अधिकारी।

ज) लॉस एंजिल्स, डेन्वर, सन डीआगो, लगूना विच की सम्पत्तियाँ: रामेश्वर स्वामी, सत् स्वरूप स्वामी, आदि केशव स्वामी।

झ) न्यूयार्क, वोस्टन, प्यूटो रिको, पोर्ट रायल, सेंट लूईस, सेंट लूईस फार्म की सम्पत्तियाँ: तमाल कृष्ण गोस्वामी, आदि केशव स्वामी, रामेश्वर स्वामी।

ञ) ईरान की सम्पत्तियाँ: अजेय ऋषि, भगवान दास अधिकारी, ब्रह्मनन्द स्वामी।

ट) वाशिंगटन डी.सी., बाल्टिमोर, फिलाडेल्फिया, मॉट्रियल और (अस्पष्ट) की सम्पत्तियाँ: रूपानुग दास अधिकारी, गोपाल कृष्ण दास अधिकारी और जगदीश दास अधिकारी।

ठ) पिट्सबर्ग, न्यू वृन्दावन, टोरंटो, क्लीवलैड, बफैलो की सम्पत्तियाँ: कीर्तनानन्द स्वामी, अजेय ऋषि, बलवंत दास अधिकारी।

ड) अटलांटा, टेनेसी फार्म, गेन्सविल, मायामी, न्यू आरलियन्स, मिसीसिप्पी फार्म, हाउस्टन की सम्पत्तियाँ: बलवंत दास अधिकारी, आदि केशव स्वामी, रूपानुगा दास अधिकारी।

ढ) फिजी की सम्पत्तियाँ: हरि सौरी, अजेय ऋषि, वासुदेव।

7. मै यह घोषणा करता हूँ और इसकी पुष्टि करता हूँ कि सभी सम्पत्तियाँ स्थायी और अस्थायी, जो मेरे नाम पर है और करेन्ट अकाउन्ट्स (चालू खाता), सेविंग्स अकाउन्ट्स (बचत खाता) और फिक्स्ड डिपोजिट्स (स्थायी जमा पूँजी), जो विभिन्न बैंको में है, अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ की सम्पत्ति एवं जायदाद है। और मेरे पूर्व जीवन के उत्तराधिकारी या ऐसा दावा करने वाला इन पर अपना अधिकार सिद्ध करने की कोशिश करे तो उनका इन सम्पत्तियों पर कोई अधिकार नही है, न ही उनका इसमें कोई दावा या रूचि है। निम्नलिखित व्यवस्था के अलावा उनका कोई अन्य अधिकार नही है।

8. हालांकि विभिन्न बैंको में जो पैसा मेरे नाम पर है वह इस्कॉन का है और इसका खर्च इस्कॉन के लिए हो रहा है, फिर भी मैने कुछ राशि बैंक में डिपोजिट के रूप में रखी है ताकि मेरे पूर्व परिवार के सदस्यों (दो बेटे, दो बेटियाँ और पत्नि) को इसमें से हर एक को **1000/-** रूपये मासिक भत्ता प्राप्त हो। इन सदस्यों की मृत्युपरांत यह बचत की धन राशि जो डिपोजिट्स (कोपर्स, ब्याज राशि और बचत) के रूप में है, इस्कॉन की सम्पत्ति बन जाएगी। और मेरे पूर्व परिवार के वंशज या कोई और यदि दावा करते है तो उन्हें और कोई भत्ता नही दिया जाना चाहिए।

9. मै गुरू कृपा स्वामी, हृदयानन्द गोस्वामी, तमाल कृष्ण गोस्वामी, रामेश्वर स्वामी, गोपाल कृष्ण दास अधिकारी, जयतीर्थ दास अधिकारी और गिरिराज दास ब्रह्मचारी को इस वसीयत के

अंतिम आदेश

वसीयत में दी गई बात

कार्यकारियों के रूप में नियुक्त करता हूँ। मैने यह वसीयत जून के चौथे दिन **1977** में अपने पूरे होश और स्थिर मन से और बिना किसी दबाव या किसी की बातों में आकर बनायी है।

गवाह:

ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी

इस उपर्युक्त वसीयत पर श्रील प्रभुपाद ने हस्ताक्षर किये और इसे सील किया गया। इसके गवाही के लिए निम्नलिखित व्यक्ति उपस्थित थे: तमाल कृष्ण गोस्वामी, भगवान दास अधिकारी और कई अन्य गवाह। (मूल दस्तावेज पर हस्ताक्षर अंकित।)

मै, ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद, एक संन्यासी और अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ का संस्थापक आचार्य, भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट का 'सेटलर' और ऊँ विष्णुपाद **108** श्री श्रीमद् भक्ति तसिद्धांत सरस्वती गोस्वामी महाराज प्रभुपाद का शिष्य, वर्तमान निवास स्थान: कृष्ण–बलराम मन्दिर, वृन्दावन, अपनी वसीयत एवं 'कोडिसिल' (वसीयत पुरवणी) बनाता हूँ जिससे मेरे विचार जो मेरी पिछली वसीयत दिनांक **4** जून, **1977** में कुछ हद तक अस्पष्ट प्रतित होते है उनका स्पष्टिकरण हो सके।यह इस प्रकार है:

मैने **4** जून, **1977** को एक वसीयत बनायी थी, जिसमें मैने कुछ प्रबन्ध किए थे। उसमें कलम **8** के अनुसार मेरे गृहस्थ आश्रम के मेरे पुत्रो श्री एम.एम. डे, वृन्दावन चन्द्र डे, एवं पुत्रियाँ कु. भक्तिलता डे और श्रीमती सुलक्षमणा डेय, और गृहस्थ आश्रम में मेरी पत्नी श्रीमती राधारानी डे, इन सबके लिए आजीवन जीवन–निर्वाह भत्ते का प्रबन्ध है। चूँकी ध्यान से देखने पर मुझे यह लगा कि ये कलम पंक्तियाँ मेरे विचार स्पष्ट रूप से नही दर्शाती है इसलिए मै अब यह निर्देश दे रहा हूँ कि श्रीमती राधारानी डे को आजीवन **1000/–** रूपये की मासिक आय प्राप्ति होगी। यह राशि इस्कॉन के अधिकारीयों को उचित लगे उस बैक में इस्कॉन के नाम पे **7** साल के लिए जमा की गई एक लाख बीस हजार रूपये की जमा पूँजी के ब्याज से आएगी। यह मासिक आय उसके उत्तराधिकारीयों को उपलब्ध नही होगी। और उसकी मृत्यु के बाद यह राशि संस्था के हेतु को ध्यान में रखकर इस्कॉन के अधिकारियों को उचित लगे उस प्रकार प्रयोग किया जाएगा।

जहाँ तक श्री एम.एम. डे, श्री वृन्दावन चन्द्र डे, श्रीमती सुलक्षमणा डेय और कु. भक्तिलता डे का प्रश्न है उनके लिए इस्कॉन एक लाख बीस हजार रूपाये की चार 'फिक्स्ड डिपाजिटस्' (स्थायी जमा राशि) बनाएगा। हर 'डिपाजिट' (जमा राशि) **120000/–** रूपये की होगी। यह सात साल की अवधि के लिए होगा और इससे कम से कम **1000/–** रूपये प्रतिमाह का ब्याज हर स्थायी जमा राशि पर मिलेगा। अपने–अपने स्थायी जमा राशि से मिलने वाले ब्याज **1000/–** रूपयों में से उन्हें केवल **250/–** रूपये प्रतिमाह दिया जाएगा और बाकी **750/–**रूपये प्रतिमाह की रकम एक दूसरी नई स्थायी जमा कर दी जाएगी। यह उनके व्यक्तिगत नामों पर जमा की जाएगी जो सात साल तक के लिए होगी। सात साल पूरे होने पर मासिक ब्याज **750/–** रूपयों द्वारा सात साल तक जमा की गई कुल

वसीयत में दी गई बात

धनराशि को उपर्युक्त नामांकित व्यक्ति 'गवर्नमेंट बॉण्ड' (सरकारी प्रतिज्ञा-पत्र) अथवा 'फिक्स्ड डिपोजिट रिसीप्टस् (स्थायी जमा राशि रसीद) अथवा सरकारी जमा योजना में लगा सकते है अथवा इससे स्थायी जायदाद (सम्पत्ति) खरीद सकते है जिससे धनराशि सुरक्षित रहे और खत्म ना हो जाए। यदि उपर्युक्त इन नियमों का उल्लंघन कर धनराशि को किसी और उद्देश हेतु खर्च करते है तो इस्कॉन के अधिकारी उनके मासिक भत्ते को बंद करने के लिए स्वतंत्र है, जो उन्हें **120000/-** रूपये की मूल जमा राशि के ब्याज के रूप में प्राप्त होता था। फिर वे ब्याज की रकम को 'भक्तवेदान्त स्वामी चैरिटी ट्रस्ट' में जमा कर सकते है। यह बहुत स्पष्ट किया जाता है कि उपर्युक्त व्यक्तियों के उत्तराधिकारीयों का उपर्युक्त राशि पर कोई अधिकार नही होगा। चूँकी यह राशि उपर्युक्त व्यक्तियों जो मेरे पूर्व जीवन के पारिवारिक सदस्य है उनके निजी उपयोग के लिए ही है और वह भी उनके जीवनकाल तक ही।

मैने अपनी वसीयत के लिए कुछ कार्यकारियों को नियुक्त किया है। मेरी **4** जून, **1977** की वसीयत में मैने जिन कार्यकारियों को नियुक्त किया था उनमें मै अब श्री जयपताका स्वामी, जो मेरे शिष्य है और श्री मायापुर चन्द्रोदय मन्दिर, जिला नाडिया, पश्चिम बंगाल के निवासी है, को भी कार्य कारी के रूप में सम्मिलित करता हूँ। मै यहाँ आगे निर्देश देता हूँ कि मेरी वसीयत के अन्तर्गत अपने कर्तव्यों को व्यक्तिगत रूप से और सामूहिक रूप से पूरा करने के लिए मेरे कार्यकारियों प्रतिबद्ध है।

मै इस प्रकार उपर्युक्त उल्लेख के अनुसार अपनी **4** जून, **1977** की वसीयत में सुधार, संशोधन एवं परिवर्तन करता हूँ। सभी माइनों में यह वसीयत हमेशा अपनी स्थिति बनाए रखेगी और भविष्य में सभी सदा पालनीय रहेगी।

मै इस नवम्बर के **5** वें दिन, **1977** को यह 'विल कोडिसिल' अपने पूरे विवेक, स्थिर मन एवं बिना किसी की बातों में आकर और बिना किसी जोर जबर्दस्ती से बना रहा हूँ।

गवाह:

(मूल दस्तावेज पर हस्ताक्षर अंकित।)

ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी

वार्तालाप 22 अप्रैल, 1977, बम्बई

श्रील प्रभुपाद: "मैने उससे कहा, 'तुम इतने स्वतंत्र होकर नही कर सकते। तुम अच्छा कर रहे हो, लेकिन इस तरह से नही...। तुम कबुल करो।' लोगों ने हंसदूत के विरूद्ध शिकायत की थी। क्या तुम्हें मालूम था?"

तमाल कृष्ण: "मुझे कोई विशेष घटनाओं के बारे में जानकारी नही है, लेकिन सामान्य मैने सुना था।"

श्रील प्रभुपाद: "जर्मनी में। जर्मनी में।"

तमाल कृष्ण: "वहाँ के भक्त।"

श्रील प्रभुपाद: "इतनी सारी शिकायते।"

तमाल कृष्ण: "इसलिए परिवर्तन अच्छा है।"

श्रील प्रभुपाद: "नही, तुम गुरू बनो, लेकिन सबसे पहले तुम्हें योग्य होना चाहिए। फिर तुम बनो।"

तमाल कृष्ण: "ओह, उस तरह की शिकायत थी।"

श्रील प्रभुपाद: "क्या तुम्हें मालूम था?"

तमाल कृष्ण: "हाँ, मैने सुन था। हाँ।"

श्रील प्रभुपाद: "दृष्ट गुरू बनाने से क्या फायदा?"

तमाल कृष्ण: "वैसे मैने अपने आप का और आपके सभी शिष्यों का अध्ययन किया है और यह बहुत ही स्पष्ट तथ्य है कि हम सब बद्ध-जीव है इसलिए हम गुरू नही हो सकते। हो सकता है एक दिन यह संभव हो...।"

श्रील प्रभुपाद: "हूँ।"

तमाल कृष्ण: "...लेकिन अभी नही।"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ। मै किसी को गुरू बनाऊँगा। मै कहूँगा कौन गुरू है। "अब तुम आचार्य बनो। तुम्हें प्रामाणिक गुरू बनाया गया है।" मै उसके लिए प्रतिक्षा कर रहा हूँ। आप सब आचार्य बनो। मै पूरी तरह निवृत्त हो जाऊँगा। लेकिन प्रशिक्षण पूरा होना चाहिए।"

तमाल कृष्ण: "शुद्धिकरण की प्रकिया होनी चाहिए।"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ, बिल्कुल होनी चाहिए। चैतन्य महाप्रभु यह चाहते है। अमार आज्ञाय गुरू हाना। "तुम गुरू बना।" (हँसी) लेकिन योग्यता प्राप्त करो। छोटी सी चीज, दृढतापूर्वक अनुसरण करने वाला...।"

तमाल कृष्ण: "कृत्रिम रूप से नही।"

श्रील प्रभुपाद: "तब तुम प्रभावशाली नही रहोंगे। तुम लोगों को धोखा दे सकते हो लेकिन यह प्रभावशाली नही होगा। जैसे हमारे गौडीय मठ को देखो, सभी लोग गुरू बनना चाहते थे, एक छोटा सा मन्दिर और "गुरू"। किस प्रकार के गुरू? कोई प्रकाशन नही, कोई प्रचार नही, केवल कुछ खाना इकट्ठा करना। मेरे गुरू महाराज कहते थे, "संयुक्त भोजनालय", खाने एवं सोने के लिए एक जगह। अमार अमार आर तकन [?]: 'संयुक्त भोजनालय"। यह उन्होंने कहा था।"

वार्तालाप 27 मई, 1977, वृन्दावन

भवानन्द: "ऐसे लोग होंगे, मुझे मालूम है। ऐसे लोग होंगे जो अपने आपको गुरू घोषित करते हुए ढोंग करेंगे।"

तमाल कृष्ण: "यह तो कई साल पहले से चल रहा था। आपके गुरू भाइयों ऐसा ही सोचते थे। माधव महाराज..."

भवानन्द: "ओह, हाँ, ओह, कूदने के लिए तैयार।"

श्रील प्रभुपाद: "बहुत मजबूत प्रबन्धन और सतर्क निरीक्षण आवश्यक है।"

वार्तालाप 28 मई, 1977, वृन्दावन*

सत्स्वरूप दास गोस्वामी: "अब हमारा अगला प्रश्न भविष्य की दीक्षाओं पर है, विशेषतया तब जब आप हमारे बीच नही रहेंगे। हम जानना चाहते है कि पहली और दूसरी दीक्षाओं का किस प्रकार प्रबन्ध किया जायेगा।"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ। मै तुममे से कुछ को अनमोदित करूँगा। जब यह खत्म हो जायेगा तब मै तुममे से कुछ को ऑफिशिएटिंग आचार्य के कार्य के लिए अनुमोदित करूँगा।"

तमाल कृष्ण: "क्या उसे ऋत्विक आचार्य कहा जायेगा?"

श्रील प्रभुपाद: "ऋत्विक। हाँ।"

सत्स्वरूप दास गोस्वामी: "(फिर) उनका क्या संबंध होता है जो व्यक्ति दीक्षा देता है और.."

श्रील प्रभुपाद: "वह गुरू है। वह गुरू है ।"

सत्स्वरूप दास गोस्वामी: "पर वह आपकी ओर से करता है।"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ। यह औपचारिकता है। क्योंकि मेरी उपस्थिति मे किसी को भी गुरू नही बनना चाहिए, इसलिए मेरी ओर से। मेरे आदेश पर, "अमार आज्ञाय गुरू होना", (वह) होगा वस्तुस्थिति में गुरू। किन्तु मेरे आदेश पर।"

सत्स्वरूप दास गोस्वामी: "तो वे (वह) सब भी आपके ही शिष्य माने जायेंगे?"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ। वे शिष्य है, (पर) (क्यों) माने...। कौन?"

तमाल कृष्ण: "नही। यह पूछ रहे है कि यह ऋत्विक आचार्यो, वे औपचारिकतापूर्वक दीक्षा दे रहे है...। (उनके) उन व्यक्तियों को जिन्हे ये दीक्षा देंगे, वे किनके शिष्य होंगे।

श्रील प्रभुपाद: "वे उसके शिष्य होंगे। (जो दीक्षा दे रहा है उसके शिष्य।)"

तमाल कृष्ण: "वे उसके शिष्य होंगे।"

श्रील प्रभुपाद: "जो दीक्षा दे रहा है...। (उसके) (वह) परम शिष्य।"

सत्स्वरूप दास गोस्वामी: "(ठिक है)"

तमाल कृष्ण: "(सब समझ गये) (अब आगे चलते है)"

सत्स्वरूप दास गोस्वामी: "अब हमारा अगला प्रश्न है...।"

श्रील प्रभुपाद: "जब मै आदेश दूँ 'तूम गुरू बनो', वह सामान्य गुरू बनेगा। बस। वह मेरे शिष्य के शिष्य बनेगा। (बस)"

* जी.बी.सी. ने उपरोक्त वार्तालाप की चार प्रतिलिपियाँ निम्नलिखित चार लेखों मे सम्मिलित की है:

1983: श्रील प्रभुपाद-लीलामृत, विभाग 6 (सत्स्वरूप दास गोस्वामी, बी.बी.टी.)
1985: अण्डर माई आर्डर (रविन्द्र-स्वरूप दास)
1990: इस्कॉन जर्नल (जी.बी.सी.)
1995: गुरूस एण्ड इनिशिएशन इन इस्कॉन (जी.बी.सी.)

वार्तालाप 7 जुलाई, 1977, वृन्दावन

तमाल कृष्ण: "श्रील प्रभुपाद हमें बहुत सारे पत्र मिल रहे है, और ये वे लोग है जो दीक्षा लेना चाहते है। चूंकि आप बीमर हो इसलिए अभी तक तो हमने उन्हें प्रतिक्षा करने के लिए कहा था।"

श्रील प्रभुपाद: "स्थानिक, यानी वरिष्ठ संन्यासी यह कार्य कर सकते है।"

तमाल कृष्ण: "हम वही कर रहे थे।... मेरा मतलब है, पूर्व में हम लोग...।स्थानिक जी.बी.सी. या संन्यासी उनकी माला पर जप करते और वे आपको खत लिखते थे और आप उनको उनका आध्यात्मिक नाम देते थे। तो क्या उस प्रकिया को फिर से शुरू किया जाये, या फिर हम...? मेरा मतलब है, एक बात यह है कि यह कहा जाता है कि यह गुरू अपने ऊपर...। आपको मालूम ही है, वह अपने ऊपर...। वह शिष्य को शुद्ध करने के लिए...। इसलिए हम यह नही चाहते कि आपको... आपकी तबीयत अच्छी नही है, इसलिए ऐसा नही होना चाहिए...। इसलिए हम सबसे प्रतिक्षा करने को कह रहे है। मै केवल यह जानना चाहता हूँ कि क्या हम कुछ और समय तक प्रतिक्षा करना जारी रखे।"

श्रील प्रभुपाद: "नही। वरिष्ठ संन्यासी...।"

तमाल कृष्ण: "तो वे वही करते रहे...।"

श्रील प्रभुपाद: "तुम संन्यासियों की एक सूची दो। मै उसमें अंकित कर दूँगा कि कौन करेगा...।"

तमाल कृष्ण: "ठीक है।"

श्रील प्रभुपाद: "तुम कर सकते हो। कीर्तनानन्द कर सकता है। और अपना सत्स्वरूप कर सकता है। तो यह तीन, तुम दे सकते हो, शुरू करो।"

तमाल कृष्ण: "तो यदि कोई अमेरिका में है तो क्या उसे सीधे कीर्तनानन्द या सत् स्वरूप को लिखना होगा?"

श्रील प्रभुपाद: "निकट में। जयतीर्थ कर सकता है।"

तमाल कृष्ण: "जयतीर्थ।"

श्रील प्रभुपाद: "भवानन... अरे भगवान।"

तमाल कृष्ण: "भगवान।"

श्रील प्रभुपाद: "और वह भी कर सकता है। हरिकेश।"

तमाल कृष्ण: "हरिकेश महाराज।"

श्रील प्रभुपाद: "और...। पाँच, छह लोग, तुम भाग करो जो निकट है।"

तमाल कृष्ण: "जो सबसे निकट है। तो लोगों को आपको पत्र लिखना नही पड़ेगा वो सीधे ही उस व्यक्ति को पत्र लिख सकते है?"

श्रील प्रभुपाद: "हूँ।"

तमाल कृष्ण: "वास्तव में वे लोग उस व्यक्ति को आपकी ओर से दीक्षा दे रहे है। जो लोग दीक्षा ग्रहण करेंगे वे फिर भी आपके...।"

श्रील प्रभुपाद: "दूसरी दीक्षा, हम दूसरी दीक्षा पर विचार करेंग।"

तमाल कृष्ण: "यह पहली दीक्षा के लिए है। ठीक है। और दूसरी दीक्षा के लिए अभी उन्हें...।"

श्रील प्रभुपाद: "नही, उन्हें प्रतिक्षा करनी पड़ेगी। दूसरी दीक्षा...। वह देनी चाहिये।"

तमाल कृष्ण: "क्या...। कुछ भक्त आपको दूसरी दीक्षा के लिए पत्र लिख रहे है, और मै उन्हें यह लिख रहा हूँ कि आपकी तबीयत ठीक नही है। तो क्या मै उन्हें यही बोलता रहूँ कि?"

श्रील प्रभुपाद: "वे दूसरी दीक्षा ले सकते है।"

तमाल कृष्ण: "आपको पत्र लिखकर।"

श्रील प्रभुपाद: "नही। ये लोग।"

तमाल कृष्ण: "ये लोग। ये लोग दूसरी दीक्षा भी दे सकते है। अतएव पहली और दूसरी दीक्षा के लिए भक्तों को आपको पत्र नही लिखना पड़ेगा। वे अपने निकटतम व्यक्ति को लिख सकते है। लेकिन वे सब लोग फिर भी आपके ही शिष्य होंगे। कोई भी व्यक्ति जो दीक्षा देगा वह आपकी ओर से देगा।"

श्रील प्रभुपाद: "हाँ।"

तमाल कृष्ण: "जैसा आपको मालूम है कि मैने आपके सारे शिष्यों के नाम की एक पुस्तक रखी हुए है? क्या मै उसे जारी रखूँ?"

श्रील प्रभुपाद: "हूँ।"

तमाल कृष्ण: "यदि कोई दीक्षा देते है, जैसे हरिकेश महाराज, तो उन्हें उस व्यक्ति का नाम हमें यहाँ भेजना चाहिए और मै उसे इस पुस्तक में लिख दूँगा। ठीक है। क्या भारत में कोई और है जिससे आप यह करवाना चाहेंगे?"

श्रील प्रभुपाद: "भारत, मै यहाँ हूँ। हम देखेंगे। भारत में, जयपताका।"

तमाल कृष्ण: "जयपताका महाराज।"

श्रील प्रभुपाद: "तुम भी भारत में हो।"

तमाल कृष्ण: "हाँ।"

श्रील प्रभुपाद: "तुम इन नामों को लिख लो।"

तमाल कृष्ण: "हाँ, मैने लिख लिये है।"

श्रील प्रभुपाद: "वे कौन है?"

तमाल कृष्ण: "कीर्तनानन्द महाराज, सत्स्वरूप महाराज, जयतीर्थ प्रभु, भगवान प्रभु, हरिकेश महाराज, जयपताका महाराज और तमाल कृष्ण महाराज।"

श्रील प्रभुपाद: "यह ठीक है। अब आप वितरीत हो जाव।"

तमाल कृष्ण: "सात। यहाँ सात नाम है।"

श्रील प्रभुपाद: "अभी के लिए सात नाम काफी है... । तुम रामेश्वर को ले सकते हो । "

तमाल कृष्ण: "रामेश्वर महाराज । "

श्रील प्रभुपाद: "और हृदयानन्द । "

तमाल कृष्ण: "अरे हाँ, दक्षिण अमेरिका । "

श्रील प्रभुपाद: "तो बिना मेरी प्रतिक्षा किए, तुम जिसे योग्य समझो । यह (तुम्हारे) विवेक पर निर्भर करेगा । "

तमाल कृष्ण: "विवेक पर । "

श्रील प्रभुपाद: "हाँ । "

तमाल कृष्ण: "यह पहली और दूसरी दीक्षा के लिए । "

श्रील प्रभुपाद: "हूँ । "

तमाल कृष्ण: "ठीक है । क्या मै एक कीर्तन मंडली को भेजूँ, श्रील प्रभुपाद?"

वार्तालाप 19 जुलाई, 1977, वृन्दावन

तमाल कृष्ण: "उपेन्द्र और मै देख रहे थे कि यह ... (विराम) । "

श्रील प्रभुपाद: "और तुम्हें वहाँ कोई बाधा नही पहुँचाएगा । अपना खुद का प्रचार क्षेत्र बनाओ एवं ऋत्विक बनते रहो और मेरे आदेश पर कार्य करते रहो । लोग वहाँ सहानुभूतिपूर्ण रह रहे है । वह जगह बहुत अच्छी है । "

तमाल कृष्ण: "हाँ । वह कहता है, 'भगवद्-गीता की भूमिका का तमिल में अनुवाद हो चुका है और मै दूसरा अध्याय इसके उपरान्त करवा लूँगा । फिर तुरन्त वितरण के लिए एक छोटी पुस्तिका का प्रकाशन करूँगा । ' "

वार्तालाप 18 अक्टूबर, 1977, वृन्दावन

श्रील प्रभुपाद: "हरे कृष्ण । एक बंगाली सज्जन न्यूयार्क से आए है? (एक व्यक्त न्यूयार्क से श्रील प्रभुपाद से दीक्षा लेने के लिए आया था ।)

तमाल कृष्ण: "हाँ । श्री सुकमल राय चौधरी । "

श्रील प्रभुपाद: "तो दीक्षा के लिए तुममें से कुछ को प्रतिनिधि बनाया है । हूँ?"

तमाल कृष्ण: "हाँ । वास्तव में... । हाँ, श्रील प्रभुपाद । "

श्रील प्रभुपाद: "तो मै सोचता हूँ कि यह जयपताका कर सकता है यदि वह चाहे तो। मैने पहले ही प्रतिनिधित्व दे दिया है। उसे बता दो।"

तमाल कृष्ण: "हाँ।"

श्रील प्रभुपाद: "तो, प्रतिनिधि, जयपताका का नाम था?"

भगवान: "यह पहले से ही है, श्रील प्रभुपाद। उसका नाम सूची में था।"

श्रील प्रभुपाद: "तो मै उसे मायापुर में यह करने के लिए प्रतिनिधित्व देता हूँ, और तुम भी उसके साथ जा सकते हो। मैने यह तत्काल के लिए बंद कर दिया है। क्या यह ठीक है?"

तमाल कृष्ण: "क्या करना बन्द कर दिया है श्रील प्रभुपाद?"

श्रील प्रभुपाद: "यह दीक्षा विधि। मैने इसके लिए अपने शिष्यों को प्रतिनिधित्व दे रखा है। यह स्पष्ट है या नही?"

गिरिराज: "यह स्पष्ट है।"

श्रील प्रभुपाद: "तुम्हारे पास नामों की सूची है?"

तमाल कृष्ण: "हाँ, श्रील प्रभुपाद।"

श्रील प्रभुपाद: "और यदि कृष्ण की कृपा से मेरी अवस्था सुधर जाती है तो मै फिर से शुरू करूँगा, या इस अवस्था में दीक्षा विधि करने के लिए मुझ पर कोई दबाव न डाले। यह उचित नही है।"

वार्तालाप 2 नवंबर, 1977, वृन्दावन

(श्रील प्रभुपाद महेमानों के साथ क्या चर्चा हुई वो समझा रहे है।)

श्रील प्रभुपाद: "...कि "आपके बाद, कौन नेतृत्व करेगा?" और "हर कोई करेगा, मेरे सभी शिष्यो। यदि आप चाहते है तो आप भी ले सकते हो। (हँसी) किन्तु यदि आप अनुसरण करे। वे सब कुछ बलिदान करने के लिए तैयार है, इसलिए वे नेतृत्व करेंगे। मै, एक, चला जाऊँगा, किन्तु सैकडों होंगे, और वे प्रचार करेंगे। अगर आप चाहे तो आप भी नेता बन सकते है। हमे ऐसा नही है कि "यही नेता है।" जो कोई पिछली नेतृत्व का अनुसरण करता है वह नेता है।

तमाल कृष्ण: "हम्म।"

श्रील प्रभुपाद: "'भारतीय', हमे ऐसा कोई भेदभाव नही है, 'भारतीय', 'यूरोपीयन'।"

भक्त: "वे नेता के रूप में एक भारतीय को चाहते थे?"

श्रील प्रभुपादः "हाँ। (हँसी) "हर कोई, मेरे सभी शिष्यो, वे नेता है। जितनी शुद्धता से वे पालन कर रहे है उसके अनुसार वे नेता बने। यदि आप अनुसरण करना चाहते है तो आप नेता बन सकते है– आप भारतीय है– किन्तु आप नही चाहते।" मैने उनको ऐसा कहा।"

तमाल कृष्णः "हाँ, वे शायद यह व्यक्ति का नाम जानना चाहते थे जो हमारे आंदोलन को आगे चलाएगा।

श्रील प्रभुपादः "हाँ। नेता। सब बकवास। नेता उनको कहते है जो प्रथम–श्रेणी का शिष्य बना है। वह नेता है। एवमं परंपरा प्राप्त... वह जो पूरी तरह से पालन करता है... हमारा आदेश है, आर ना करीह मने आशा। यह आपको पता है? वो क्या है? गुरू मुख पदम वाक्य, चित्तेते करीया आक्य, आर ना करीह मने आशा। कौन नेता है? एक नेता... नेता बनना बहु मुश्किल नही है, शर्त कि वह एक संनिष्ठ गुरू के आदेशो का पालन करने के लिए तैयार है।"

'पिरामिड हाउस कन्फेशन्स्', 3 दिसम्बर, 1980

तमाल कृष्ण महाराजः मुझे कुछ दिनों पूर्व में कई चीजो का साक्षात्कार हुआ है। [...] स्पष्ट रूप से श्रील प्रभुपाद द्वारा ऐसे कई सारे कथन है कि उनके गुरू महाराज ने किसी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त नही किया था। [...] अपनी पुस्तकों में भी श्रील प्रभुपाद कहते है कि गुरू मतलब योग्यता के आधार पर।

यह प्रेरणा मिली, क्योंकि मेरे द्वारा प्रश्न उठाया गया था, इसलिए कृष्ण बोले। वास्तव में प्रभुपाद ने कभी किसी को गुरू नियुक्त नही किया था। उन्होंने ग्यारह ऋत्विकों को नियुक्त किया था। उन्होंने उन्हें कभी गुरू के रूप में नियुक्त नही किया था। मैने और अन्य जी.बी.सी. यों ने पिछले तीन वर्षो में इस आंदोलन को बहुत बड़ी हानि पहुँचायी है, क्योंकि हम गलत अर्थ निकालकर ऋत्विकों कि नियुक्ति को गुरू की नियुक्ति मान बैठे।

मै बताता हूँ कि वास्तव में क्या हुआ था। मैने इसका वर्णन किया था, लेकिन इसका गलत अर्थ निकाला गया था। वास्तव में हुआ यह कि प्रभुपाद बोले कि वे कुछ ऋत्विकों की नियुक्ति करने की सोच रहे है और तब अनेक कारणोंवश जी.बी.सी. द्वारा अपनी एक बैठक बुलाई गई और वे प्रभुपाद के पास गए, हममें से पाँच या छह लोग। (यहाँ **28** मई, **1977** के वार्तालाप की बात हो रही है)। हमने उनसे पूछा, 'श्रील प्रभुपाद, आपके चले जाने के बाद यदि हम शिष्य स्वीकार करते है तो वे किसके शिष्य होंगे, आपके या मेरे?'

कुछ समय दीक्षा चाहने वालों कि सूची का ढेर बन गया था। और ये पत्र भरे पडे थे। मैने कहा,

'श्रील प्रभुपाद, आपने एक बार ऋत्विकों की चर्चा की थी। मुझे नही पता कि क्या करना चाहिए। हम आपके पास नही आना चाहते लेकिन हजारों भक्तो के नाम आ चुके है और मैने उन सब पत्रों को अपने पास रखा है। मुझे मालूम नही है कि आप क्या करना चाहते है।'

श्रील प्रभुपाद बोले, 'ठीक है, मै कई (लोगों) को नियुक्त करूँगा...। और वे उनके नाम बताने लगे। [...] उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया था कि वे उनके शिष्य है। तब मेरे मन में यह बहुत स्पष्ट था कि वे सब (नए दीक्षित शिष्य) उनके शिष्य थे। उसके कुछ समय बाद मैने उनसे दो प्रश्न पूछे। पहला: 'ब्रह्मानंद स्वामी के बारे में आप क्या कहते है?' मैने उनसे यह इसलिए पूछा क्योंकि ब्रह्मानंद स्वामी के प्रति मुझे स्नेह था। [...] तो श्रील प्रभुपाद बोले, 'नही, जब तक वह योग्यता प्राप्त न कर ले'। जब मै पत्र को टाइप करने के लिए तैयार हुआ तब मैने उनसे दूसरा प्रश्न किया: 'श्रील प्रभुपाद, इतने बहुत है या आप और नाम इसमें जोडना चाहते है?' उन्होंने कहा, 'जैसी आवश्यकता हो वैसे अन्य लोगों को इसमे सम्मिलित किया जा सकता है।' अब मुझे समझ आ रहा है कि उन्होंने जो किया वह बहुत ही स्पष्ट था। वे शारीरिक रूप से दीक्षा संस्कार सम्पन्न करने में असक्षम हो गए थे इसलिए उन्होंने 'ऑफिशिएटिंग प्रीस्ट्स' (दीक्षा संस्कार सम्पन्न करने वाले पुजारियों) को उनकी ओर से दीक्षा देने के लिए नियुक्त किया। उन्होंने ग्यारह को नियुक्त किया और यह स्पष्ट रूप से कहा कि 'जो भी निकट है वह दीक्षा विधि कर सकता है'। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात है, क्योंकि जब दीक्षा लेने का प्रश्न उठता है, यदि जो भी निकटतम है वह नही है तो जहाँ आपकी श्रद्धा जाये वहाँ। जिस पर तुम्हारी श्रद्धा हो उससे तुम दीक्षा लोगे। लेकिन जब प्रतिनिधियों द्वारा दीक्षा देने की बात आती है तो जो भी निकट है उससे ले सकते है औ वे इस बात पर बहुत ही स्पष्ट थे। उन्होंने उनको मनोनित किया था। वे लोग दुनिया में सभी जगह फैले हुए थे। और उन्होंने कहा, 'जो भी तुम्हारे निकट है तुम उस व्यक्ति के पास जाओ, वह तुम्हारी परीक्षा लेगा। और उसके बाद मेरी ओर से वे दीक्षा देगा।'

यह जरूरी नही कि उसके प्रति तुम्हारे मन में श्रद्धा होनी चाहिए। वह तो गुरू के लिए होती है। प्रभुपाद ने कहा, 'इस आंदोलन के संचालन के लिए मुझे जी.बी.सी. का निर्माण करना पड रहा है और इसके लिए मै निम्नलिखित लोगों को नियुक्त करूँगा। इस आंदोलन में नए लोगो के सम्मिलित होने एवं दीक्षा लेने की प्रकिया को जारी रखने के लिए मुझे कुछ पुजारियों को नियुक्त करना होगा जो मेरी मदद करेंगे, क्योंकि जैसे मै शारीरिक रूप से सबको अकेला संचालन नही कर सकता, मै प्रत्यक्ष रूप से हर एक व्यक्ति की दीक्षा विधि नही कर सकता।'

बस यही सब कुछ था, और इससे ज्यादा कुछ नही। इससे ज्यादा कुछ होता तो तुम यह शर्त लगाकर कह सकते हो कि गुरूओ के साथ यह विषय को कैसे सुयोजित किया जाए उसके लिए प्रभुपाद कई घटों, कई दिनों, कई सप्ताहों तक चर्चा करते, किन्तु उन्होंने ऐसा नही किया क्योंकि वे लाखों बार कह चुके थे। उन्होंने कहा: 'मेरे गुरू महाराज ने किसी को नियुक्त नही किया था। यह योग्यता पर आधारित है।' हमने बहुत बडी गलती की है। प्रभुपाद के प्रस्थान के बाद इन ग्यारह लोगों की क्या स्थिति है?

प्रभुपाद ने केवल सन्यासियों को ही नही बल्कि दो गृहस्थों के भी नाम बतलाये, जो ऋत्विक तो हो ही

सकते थे, जिससे यह प्रतित होता है कि ये गृहस्थ संन्यासी के बराबर थे। अत: जो भी आध्यात्मिक रूप से योग्य हो। सामान्यत: यह समझा जाता है कि आप गुरू की उपस्थिति में शिष्य ग्रहण नही कर सकते लेकिन गुरू के चले जाने के बाद आप शिष्य ग्रहण कर सकते है यदि आप के पास योग्यता है तो और कोई तुम्हारे प्रति श्रद्धा रखता है तो। यह भी जरूरी है कि उनको (भावि शिष्यों को) पूरी तरह से समझाया जाना चाहिए कि प्रमाणिक गुरू को कैसे अलग परखा जाए। यदि तुम प्रमाणिक गुरू हो, और तुम्हारे गुरू अब नही रहे, तब यह तुम्हारा अधिकार है। यह उसी प्रकार है जिस प्रकार मनुष्य संतान पैदा कर सकता है। [...] दुर्भाग्यवश जी.बी.सी. ने इस तथ्य को स्वीकारा नही। उन्होंने तुरन्त ही (मान लिया) कि ये ग्यारह लोग ही चुने हुए गुरू है। मै मेरे लिए तो यह निश्चित रूप से कह सकता हूँ, इसके लिए मै सभी लोगों से नम्रतापूर्वक क्षमायाचना करता हूँ, कि निश्चित रूप से इसमें कुछ हद तक नियंत्रण करने का प्रयास था। [...] यह एक बद्ध जीव का स्वभाव है, और यह सबसे ऊँचे स्थान गुरू बनने की चेष्टा में प्रकट हुआ, "गुरू, ओह अदभुत! मै अब गुरू हूँ, और केवल हम ग्यारह लोग ही है।"

मुझे लगता है कि यह समझ बहुत महत्त्वपूर्ण है जिससे भविष्य में ऐसी किसी और दुर्घटना को रोका जा सके, मै कहता हूँ कि भविष्य में यह फिर से होगा। केवल कुछ समय की ही देर है जब तक स्थिति शान्त न हो, फिर ऐसी दुर्घटना अपने आप दोहराएगी चाहे वो लॉस एंजिल्स में हो या कही और। यह निरन्तर होता रहेगा जब तक तुम वास्तविक कृष्ण शक्ति को बिना रोक-टोक के प्रदर्शित होने नही दोगे। [...] मुझे लगता है कि यदि जी.बी.सी. तुरन्त ही इस बात को नही अपनाएगी या यह सत्य का साक्षात्कार नही करेगी: तुम मुझे कोई भी 'टेप' या पुस्तक नही दिखा सकते जहाँ प्रभुपाद कह रहे हों, 'मै इन ग्यारह लोगों को गुरू के रूप में नियुक्त करता हूँ'। इसका अस्तित्त्व नही है, क्योंकि प्रभुपाद ने कभी किसी को गुरू के रूप में नियुक्त नही किया। यह एक भ्रम है। [...] जिस दिन तुम दीक्षा ग्रहण करते हो उसी दिन से तुम्हारे पिता के चले जाने पर तुम्हें पिता होने का अधिकार प्राप्त होता है यदि तुम योग्य हो। नियुक्त नही। इसके लिए नियुक्त की जरूरत नही है, क्योंकि किसी की नियुक्ति हुई ही नही।